तित्तरीय

Colophon

This document was typeset using $X_{\underline{1}}M_{\underline{1}}X$, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several $M_{\underline{1}}X$ macros designed by H. L. Prasād. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma.

See also http://stotrasamhita.github.io/about/

For Personal Use Only
Not For Commercial Printing/Distribution

| अनुऋमणिका | | i | | | | | | | | | | | | |
|------------------|--|-----|--|--|--|--|--|--|--|--|--|--|--|--|
| अनुऋमणिका | | | | | | | | | | | | | | |
| अष्टकम् १ | | 1 | | | | | | | | | | | | |
| प्रथमः प्रश्नः | | 1 | | | | | | | | | | | | |
| द्वितीयः प्रश्नः | | 26 | | | | | | | | | | | | |
| तृतीयः प्रश्नः | | 43 | | | | | | | | | | | | |
| चतुर्थः प्रश्नः | | 64 | | | | | | | | | | | | |
| पञ्चमः प्रश्नः | | 87 | | | | | | | | | | | | |
| षष्ठमः प्रश्नः | | 108 | | | | | | | | | | | | |
| सप्तमः प्रश्नः | | 133 | | | | | | | | | | | | |
| अष्टमः प्रश्नः | | 155 | | | | | | | | | | | | |
| अष्टकम् २ | | 168 | | | | | | | | | | | | |
| प्रथमः प्रश्नः | | 168 | | | | | | | | | | | | |
| द्वितीयः प्रश्नः | | 187 | | | | | | | | | | | | |
| तृतीयः प्रश्नः | | 211 | | | | | | | | | | | | |
| चतुर्थः प्रश्नः | | 229 | | | | | | | | | | | | |
| पञ्चमः प्रश्नः | | 255 | | | | | | | | | | | | |
| षष्ठमः प्रश्नः | | 272 | | | | | | | | | | | | |
| सप्तमः प्रश्नः | | 306 | | | | | | | | | | | | |

| अनुऋमणिका | | | | | | | | | | | | | | | | | | ii |
|------------------|---|---|----|-----|------|-----|---|---|---|---|---|---|---|---|--|---|---|-----|
| अष्टमः प्रश्नः | | | | • | • | | | • | • | • | • | • | • | • | | • | • | 329 |
| अष्टकम् ३ | | | | | | | | | | | | | | | | | | 357 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 357 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 380 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | • | | | | • | | | | • | | | | • | | 409 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | • | | | • | | | • | | • | • | | | • | | 435 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | • | | | | • | | | | • | | | | • | | 441 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | • | | | | • | | | | • | | | | • | | 452 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 469 |
| अष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 511 |
| नवमः प्रश्नः | | | | • | • | | | • | | • | | | • | | | | | 544 |
| तैत्तिरीय आरण | र | व | P1 | Ą | | | | | | | | | | | | | | 575 |
| प्रथमः प्रश्नः - | | _ | अ | रुप | गप्र | श्च | : | | | | | | | | | | | 575 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 617 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 635 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 652 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 683 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |

| अनुक्रमणिका | iii |
|-----------------------------------|-----|
| सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली | 736 |
| अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली | 743 |
| नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली | 749 |
| द्शमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत् | 755 |
| कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम् | 800 |
| प्रथमः प्रश्नः | 800 |
| द्वितीयः प्रश्नः | 816 |
| तृतीयः प्रश्नः | 834 |
| | |
| | |
| | |
| | |
| | |
| | |
| | |
| | |

॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्र सन्धंतं तन्में जिन्वतम्। इष् सन्धंतं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज् सन्धंतं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज् सन्धंतं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंतं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंतं तां में जिन्वतम्। पृश्क्तरसन्धंतं तां में जिन्वतम्। पृश्क्तरसन्धंतं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोंऽसि जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

स्वाराः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोचिषा। स्तुतोऽस् जनंधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणंयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोचिषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्॥२॥ व्यान सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। शेत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रात्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रायुः सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। आयुः स्थ

आयुर्मे धत्तम्। आयुर्यज्ञायं धत्तम्। आयुर्यज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं यज्ञायं धत्तम्॥३॥ प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्र ई स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं युज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं युज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कल्पयंतं दैवीर्विशंः। कल्पयंतं मानुषीः॥४॥ इषमूर्जमस्मासुं धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यर्जमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुत्तौ शण्डामर्कौ सहामुनां। शुक्रस्यं समिदंसि। मन्थिनंः समिदंसि। स प्रथमः सङ्कंतिर्विश्वकर्मा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो बृह्स्पतिंश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥ न्युन्त्वपान सन्धंत्तं तं में जिन्वतं प्राणं युज्ञायं धत्तं मानुंषीरुग्निर्द्धे चं॥ (ब्रह्मं क्षत्रं तदिष्मूर्जरं र्यिं पृष्टिं प्रजां तां पृशून्तान्त्सन्धेत्तं तत्प्राणमेपानं व्यानं तं चक्षुः श्रोत्रं मन्स्तद्वाचं ताम्। डुषादिपश्चेके वाचं तां में पृश्नून्त्सन्धेत्तं तान्में प्राणादित्रित्तेये तं मेऽन्यत्र तन्में)॥———[१] कृत्तिकास्वग्निमादंधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षेत्रम्। यत्कृत्तिकाः। स्वायांमैवैनं देवतांयामाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिंकाः। यः कृत्तिंकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्ध्रत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजतः। तं देवा रोहिण्यामादंधतः। ततो वै ते सर्वात्रोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधत्ते। ऋधोत्येवः। सर्वात्रोहाँत्रोहितः। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधित्सन्तः॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपांकामत्। ते पुनर्वस्वोरादंधता ततो वै तान् वामं वसूपावर्तता यः पुराऽभुद्रः सन्पापीयान्तस्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीता पुनर्वेवनं वामं वसूपावर्तते। भुद्रो भवति। यः कामयेत् दानकामा मे प्रजाः स्युरिति। स पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा पृतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यः कामयंत भगी स्यामिति। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगंस्य वा पृतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तंरे फल्गुंनी। भृग्येव भवति। कालुकुआ वै नामासुंरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकामुपांदधात-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौ ब्राह्मणो ब्रुवाण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्तस्यात्। स चित्रायांमग्निमादंधीत। अवकीर्यैव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौंऽग्निमादंधीत। वसन्तो व ब्रौह्मणस्यर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवेनं प्रजातमाधत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वे राजन्यंस्युर्तुः। स्व एवेनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। श्रादे वैश्य आदंधीत। श्रादे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व एवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्नंवति। न पूर्वयोः फल्गुन्योर्ग्निमादंधीत। एषा वै जंघन्यां रात्रिः संवत्स्रस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवत्स्रस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवत्सरस्यं। यदुत्तंरे फर्ल्यंनी। मुख्त एव संवत्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमेत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्वंधित्सन्त फल्गुंन्योर्भिमादंधीतासन्नपततामृत्नां वैश्यंस्युर्त्रुरुत्तरे फल्गुंनी षद्वं —[२] उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपहिन्ति। अपोऽवौक्षिति शान्त्यै। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेवैश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवंरुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टि्वां एषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

प्रजनंनम्। यदूषाः॥१४॥
पृष्ठांमेव प्रजनंनेऽग्निमाधंते। अथो संज्ञानं एव। संज्ञान् ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्ताम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौं सह यज्ञियमितिं। यदुमुष्यां यज्ञियमासींत्। तदस्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥ यद्स्या यज्ञियमासींत्। तद्मुष्यांमदधात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांत्रिवपंत्रदो ध्यायेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञिये-ऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुर्वाणः पृथिवीमनु समंचरत्।

तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष संम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उंपदीका उद्दिहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा सम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्थे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्रङ् ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकं:॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामत्रमुपाक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामत्रं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽत्रंं क्षीयते। आपो वा इदमग्रं सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥
कथिमृदः स्यादितिं। सोऽपश्यत्पुष्करपृणं तिष्ठंत्।
सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीतिं। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध आँर्च्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुंष्करपृणेंऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥ तत्पृथिव्ये पृथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्ये भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ताः शर्कराभिरदः हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छर्कराणाः शर्कर्त्वम्। यद्वंराहविंहतः सम्भारो भवंति। अस्यामेवाछंम्बद्धारमग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथों शन्त्वायं। सरेता अग्निराधेय इत्यांहुः। आपो वर्रणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यिद्धरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभत्सत् इत्यांहः॥२१॥

उत्तरत उपाँस्यत्यबींभत्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावंरुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्याऽहरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पूर्णत्वम्॥२३॥ यस्यं पर्णमयंः सम्भारो भवंति। सोमपीथमेवावंरुन्थे। देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपांश्रणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। सोंऽबिभेत्रा मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहंदयो-ऽग्निराधेय इत्यांहः। मुरुतोऽद्भिरिग्नमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हदंयमाच्छिंन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्यदप्रंथयुद्धृत्यैं बीभत्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णृत्वमंशमयदच्छिन्द्र्स्नीणिं

च॥-----[३]

द्वादशसुं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेवैनंमवरुद्धा धंत्ते। यद्वांदशसुं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंनिमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इति। परिमितं चैवापरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं वै वाचा वंदति। अनृतं मनंसा ध्यायति॥२६॥ चक्षुर्वे सत्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्शमितिं। तत्सत्यम्। यश्चक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। सत्य एवैनमा धंत्ते। तस्मादाहिताभिर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। स्त्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥ आ्रुयाः पृशवंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्नेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अर्धोदिते सूर्य आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वै लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भविष्यचावं रुन्धे॥२८॥ इडा वै मानवी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत।

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽश्रंणोत्। असुरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्न आदंधतः। अथ् गार्हंपत्यम्। अथाँन्वाहार्यपचंनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्यंषा् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्यन्तीतिं॥२९॥ यस्यैवमृग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्रंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधतः। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥ प्राच्येषा्ड् श्रीरंगात्। भृद्रा भूत्वा सुंवृगं लोकमेष्यन्ति। प्रजां तु न वैत्स्यन्त इति। यस्यैवम्ग्निरांधीयते। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भृद्रो भूत्वा सुंवृगं लोकमेति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जनिष्यसे॥३१॥

प्रत्यस्मिँ हो के स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं हो के जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः प्रश्वः प्रजायन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां प्रशून्प्राजंनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिष्टिंव वा अयं होकः। अस्मिन्नेव तेनं होके प्रत्यंतिष्ठत्। अथांऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं होकम्भ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवमृग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृश्निर्मिथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिश्लोके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयति। यस्य वा अयंथादेवतमृग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीति भृग्वङ्गिरसा-

मादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामी-त्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वर्रुणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनोंस्त्वा ग्राम्ण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्निराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वै रात्रिश्चावंरुत्ये भविष्युन्तीत्यंब्रवीज्ञनिष्यसेंऽजयद्वसीयान्भवति नवं च॥——[४]
प्रजापितिर्वाचः सृत्यमेपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन वै स
आधित्। भूर्भुवः सुविरित्यांह। एतद्वै वाचः सृत्यम्। य
एतेनाग्निमाधत्ते। ऋश्नोत्येव। अथो सृत्यप्रांशूरेव भविति।
अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रतितिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। सर्वैः पश्चभिराहवनीयम्॥३६॥ सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मैं लोके वाचः सत्य सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा देधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमार्थत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यंन्तीः प्रजा अभि समावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यंन्तीः प्रजा यजमानम्भि समावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्य्रजापंतिरनूदेंति। वज्री वा पुषः। यदश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृं व्यान्त्रणंदते। पुन्रा वर्तयति॥३९॥

ज्ञिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्कृत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्वम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्ति- धक्ष्यतीति॥४१॥

रुद्रायापिंदधाति॥४३॥

रेवैनंयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरेंत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधोऽधः

शिरों हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रें हरति।

अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु

प्रतिष्ठितमार्थत्ते। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मां

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रंदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रंदाहाय। पुन्रा वर्तयित। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृश्वा एषः। यदर्श्वः। एष रुद्रः॥४२॥ यदिशः। यदर्श्वस्य पदेंऽग्निमांदध्यात्। रुद्रायं पृश्वपिदध्यात्।

अपृशुर्यजेमानः स्यात्। यन्नाऋमयेत्। अनेवरुद्धा अस्य

पशर्वः स्युः। पार्श्वत आर्क्रमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गारा

अभ्यववर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पशवो भवंन्ति। न

त्रीणिं हवी १षि निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तुं यजमानोऽनु

विक्रमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये

शुचंये। यद्ग्रये पवंमानाय निर्वपंति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्रयें पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्रये शुचंये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टादधाति॥४४॥

पुनमाहुवनीर्यं धत्तेऽश्वत्वं वंर्तयति कुरुत् इतिं रुद्रो दंधाति यद्ग्रये शुचंय एकं च॥🗕 [५] देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुपयन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधता इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीर्ति। तदग्निर्नोत्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पशुषु तृतीयम्। अप्सु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥ तद्देवा विजित्यं। पुनरवांरुरुत्सन्त। तेंंऽग्नये पर्वमानाय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपन्। पशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पशुष्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंऽग्नयें पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवाप्स्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥ तें ऽग्नये श्चंये। असौ वा आंदित्यों ऽग्निः शुचिः। यदेवादित्य आसीत्। तत्तेनावांरुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेंत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥ नाङ्गानि। तादृगेव तत्। यदेतानि निर्वपेत्। न तम्।

यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। तादृगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं चरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्धे। आदित्यो भंवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावंरुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूँक्षान्तत्वाय। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। पृशवो वा एतानि ह्वी १षि। एष रुद्रः। यद्ग्निः॥५०॥

यत्सद्य पृतानिं ह्वी १ षिं निर्वपेंत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नानुंनिर्वपेंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृश्ववंः स्युः। द्वादृशस् रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवृत्सरप्रंतिमा वै द्वादंश् रात्रयः। संवृत्सरेणैवास्में रुद्र शंमियत्वा। पृशूनवंरुन्थे। यदेकंमेकमेतानिं हुवी १ षिं निर्वपेंत्॥ ५१॥ यथा त्रीण्यावपंनानि पूर्यंत्। ताद्दक्तत्। न प्रजनंनमुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्मैं
लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु
प्रजायते। अथो यज्ञस्यैवेषाऽभिक्रांन्तिः। रथ्यकं प्रवंतियति।
मनुष्यर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥
वद्यवादिनो वदन्ति। दोवर्यंपशिदोन् (३) न दोवर्या(३)

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यत्न जुंहुयात्। अग्निः पर्रा भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्प्रींणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धे। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावंरुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं एवावंरुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। वहिवां अनुङ्गान्। वहिर्द्धवर्यः॥५४॥

विह्नेनेव विह्ने यज्ञस्यावंरुन्थे। मिथुनौ गावौ ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासो ददाति। सुर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यो ददाति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवृत्सर एव प्रतितिष्ठति। काममूर्ध्वं देयम्। अपरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

आदित्ये तृतीयमुप्स्वासीत्तत्तेनावांरुन्धत् स्यादौप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानिं हुवी॰िषं

निर्वपेंत्प्रत्यवंरोहित ददात्यध्वर्युर्देयमेकं च॥-----[६]

घर्मः शिरस्तदयमग्निः। सिम्प्रियः पशुभिर्भुवत्। छर्दिस्तोकाय तनयाय यच्छ। वार्तः प्राणस्तदयमग्निः। सम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं पंच। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभांहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥ अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पशुर्मिर्भ्वत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुनूः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनाँऽग्ने ब्रह्मंणा। आनुशे व्यांनशे सर्वमायुर्व्यांनशे। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। विरार्द्व स्वराद्वं। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवे तुन्वौं। सुम्राद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तुनुवौं। विभूश्चं परिभूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्तें अग्ने शिवास्तुनुवंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्तें अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरम्ं गंच्छ॥५८॥

चतुंष्पदे जिन्नतां त्नुव्कीणि च॥————[७] इमे वा एते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयंयुर्यजंमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंर्तयति। तथा न शोचयन्ति यजंमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमाणे। अन्तिरिक्षां वै वामदेव्यम्। अन्तिरिक्ष एवैनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवनं पश्व्यमुद्धरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्ह्तो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत॥६०॥ सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङैत्। तं वारवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमभि गायंते। वार्यित्वैवैनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैन्मृत्तंरो युज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आंधीयमान ईश्वरो यजंमानस्य पृश्न् हिश्सिंतोः। सिम्प्रियः पृश्भिर्भुविदित्यांह। पृश्भिरेवैन्श् सिम्प्रियं करोति। पृश्नामहिश्सायै। छुर्दिस्तोकाय तनंयाय युच्छेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्॥६२॥

सप्राणमेवेनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्चेत्यांह। अन्नमेवासमें स्वदयति। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभिक्तिरेवेनंयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवेनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वे देवानामन्नम्॥६३॥ अन्नमेवावं रुन्थे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। समिन्थ एवेनम्। आनशे व्यांनश इति त्रिरुदिङ्गयति। त्रयं इमे लोकाः।

पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्। वीङ्गित्मप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमित्रयः। अवीङ्गितमेवैनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराईं स्वराङ्घ यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवैन् समंध्यति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवैनं पर्राभावयति॥६४॥

लोकोऽस्जतेन्माधंतेऽन्वाहार्य्पचंनं देवानामत्रमेनं प्रतिष्ठित्माधंते पश्चं चा [८] श्रामीगुर्भाद्विप्तं मंन्थित। एषा वा अग्नेर्यक्तियां तृनूः। तामेवास्मे जनयित। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यो देवेभ्यौ ब्रह्मौदनमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोऽधत्त। तस्यै धाता चार्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यैं मित्रश्च वरुंणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या

इन्द्रेश्च विवंस्वा इश्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्ञंन्ति ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं समिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतों-ऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यत्समिधंः।

एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुनत्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥ इयंतीर्भवन्ति। यज्ञपरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतंः सिच्यतें। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भंवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥ एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेजंसा। गायुत्रीभिंब्राह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वे ब्राँह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं।

त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यंः। स्वस्य

छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिवेंश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तः संवत्सरं गोपायेत्। संवत्सरः हि रेतों हितं वर्धते। यद्यंनः संवत्सरे नोपनमेंत्। सिमधः पुन्रादंध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न मार्समंश्ञीयात्। न स्नियमुपेयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्र्ञीयात्। यत्स्रियं मुपेयात्। निर्वीं यः स्यात्। नैनं मृग्निरुपं नमेत्। श्व आंधास्यमां नो ब्रह्मौद् नं पंचिति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नेनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। योऽस्मे प्रजां पृश्न्मंजनयतीति। शल्कैस्ता १रात्रिंम्ग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्षभायं वाशिता न्यांविच्छायति। तादगेव तत्। अपोदृह्य भस्माग्निं मन्थिति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तितिः। तं मिथित्वा प्राश्चमुद्धरित। संवृत्स्रमेव तद्रेतों हितं प्रजनयित। अनाहित्स्तस्याग्निरित्याहुः। यः स्मिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः संवत्स्रे पुरस्तादादंध्यात्। संवत्सरादेवेनंमव्रुध्याधंत्ते। यदिं संवत्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वादृश्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवत्सरप्रंतिमा व द्वादंश्य रात्रंयः। संवत्सरमेवास्याहिता भवन्ति। यदिं द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिंता पुवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयमपचचतुर्थमपचददिती रेतोंऽधत्त सम्मिता घृतवंतीभिरादंधाति राज्नन्यः स्वस्य छन्दंसः

प्रत्ययन्स्त्वायेयाद्गच्छिति मन्थित् रात्रयश्चत्वारिं च॥————[९] प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिंरिचानोंऽमन्यत। स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्मात्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्वत। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम वा एषा॥७५॥ दोहां एव युष्माकुमितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथंवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्यं प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पशून्मं गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ स्भां में गोपायेतिं। सा पंश्चममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपायेतिं। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यदिग्नर्राधीयतें। तस्मदितावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्य प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शङ्स्यं प्रश्नमे गोपायेत्यांह॥७८॥ पश्नवेतेनं स्पृणोति। सप्रथ सभां में गोपायेत्यांह।

प्शृनेवतेन स्पृणीते। सप्रथ स्भा में गोपायत्याह।
स्भामेवतेनेन्द्रिय स्पृणोति। अहे बुध्निय मर्त्रं
मे गोपायत्यांह। मन्नंमेवतेन श्रिय स्पृणोति।
यदांन्वाहार्यपचंनेऽन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः
प्रीतः। यद्गार्हंपत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नींयांज्ञयंन्ति।
तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्वंति॥७९॥
तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यत्सभायां विजयंन्ते। तेन

सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांवस्थेऽत्रू हरंन्ति। तेन् सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधीयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादगेव तत्। पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्यामुग्निमादंधीत। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते। ऋधोत्येनेन॥८०॥

एषा पृश्नमें गोपायेति प्रविष्टा पृश्नमें गोपायेत्यांह जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥———[१०]

ब्रह्म सन्धंत्तं कृत्तिंकामूर्द्धन्ति द्वाद्शसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं इमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तौ दिव्यावथों शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यत्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भूत्वा

जगंतीभि्रशींतिः॥८०॥

ब्रह्म सन्धंत्तमृध्नोत्येंनेन॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यजंमानस्य हन्तु। शिवा नंः सन्तु प्रदिश्रश्चतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्नंवन्तु नः। वैश्वानरस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्नसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवर्तुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौँयज्ञियमागंमिष्ठाः। ऊतीः कुर्वाणो यत्पृंथिवीमचेरः। गुहाकारमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसंमाभरंन्तः। शतं जीवेम शरदः पुरूचीः॥२॥ वम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यबंधिरा भवामः। प्रजापितसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्ये सुवितं नो अस्तु। उप प्रभिन्नमिषमूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रसमाभेरामि। यस्यं रूपं बिभ्रंदिमामविंन्दत्। गुहा प्रविंष्टा सरि्रस्य मध्यै। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अछंम्बद्वारमस्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यत्सरिरस्य मध्यै। उर्वीमपंश्युञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्यायतंनाद्धि जातम्। पूर्णं पृथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभिरद ५ हज्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उवींमिमां विश्वजनस्यं भूत्रीम्। ता नंः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र १ हिरंण्यम्। अद्धः सम्भूतममृतं प्रजासुं। तत्सम्भरंत्रुत्तर्तो निधायं॥४॥ अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वो रूपं कृत्वा यदेश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवत्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भर्रन्तः। शतं जीवेम शरदः सवींराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनंस्पते शतवंलशो विरोह। त्वयां वयमिष्मूर्जं मदंन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया हियमांणस्य यत्तै॥५॥ पर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधिं। सोऽयं पूर्णः सोमपूर्णाद्धि जातः। ततो हरामि सोमपीथस्यावंरुख्यै। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतों ऽसि। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्चसम्। तत्सम्भर्ड्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रंदाहाय॥६॥ शुमी । शान्त्ये हराम्युहम्। यत्ते सृष्टस्यं युतः। विकंङ्कतुं भा आँच्छंज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नों लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदयमाच्छिन्दञ्जातवेदः। मरुतोऽद्भिस्तंमयित्वा। एतत्ते तदंशनेः सम्भंरामि। सात्मां अग्ने सहंदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थात्सम्भृता बृहुत्यः॥७॥ शरीरम्भि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः। तिस्रस्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजात्यै। अश्वत्थाद्धेव्य-वाहािद जाताम्। अग्नेस्तनूं यज्ञियाः सम्भेरािम। शान्तयोनि । शमीगुर्भम्। अग्नये प्रजनियतवे। यो अश्वत्थः शंमीगर्भः। आरुरोह त्वे सर्चां। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥ यज्ञियैं: केतुभिं: सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुनेषि विद्वान्। प्रवेधसे कवये मेध्याय। वचो वन्दार्रु वृषभाय वृष्णें। यतो भयमभयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुवस्यत॥९॥

घृतैर्बोधयतातिथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मंतीः। घृताचीर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठा। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। सम्कुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केशो घृतनिर्णिक्पावकः। सुयुज्ञो अग्निर्युज्ञथाय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोंनिर्ग्निः। घृतैः समिंद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतुप्रुषंस्त्वा सुरितों वहन्ति। घृतं पिबंन्त्सुयजां यक्षि देवान्। आयुर्दा अंग्ने हविषों जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥ त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्रिरे हव्यवाहम्। उ्रुजयंसं घृतयोनिमाहुतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रया रेसि पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋंअते॥१२॥

इन्धांनो अक्रो विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंणामुद्धं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च पशुभिः सह। राष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासन्त्सिवतुः स्व। मही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जातवेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥ आरोहतं द्शत्र शक्करीर्ममं। ऋतेनांग्र आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवन्त उत्तरामृत्तरार् समांम्। दर्शमृहं पूर्णमांसं यज्ञं यथा यजौ। ऋत्वियवती स्थो अग्निरेतसौ। गर्भं दधाथां ते वामृहं देदे। तत्स्त्यं यद्वीरं बिभृथः। वीरं जनियुष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनिय्यर्थः॥१४॥ प्रजयां पृश्मिर्ब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृतात्स्त्यमुपैमि। मानुषाद्देव्यमुपैमि। देवीं वाचं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेमृहम्। उभयौलींकयोर् ऋष्वा। अति मृत्यं तराम्यहम्। जातंवदो भुवंनस्य रेतः। इह सिश्च तपसो यञ्जनिष्यत्तै॥१५॥

यञ्चान्व्यत॥१५॥
अग्निमेश्वत्थादिधे हव्यवाहम्ं। श्वामीग्रमाञ्चनयन् यो मंयोभूः।
अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र
आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः।
येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं
पृथिव्याः। अर्नन्तिमं पितरों लोकमंस्मै॥१६॥
अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमिस। संज्ञानंमिस कामधरणम्। मिथं

ते कामधरेणं भूयात्। संवंः सृजामि हृदंयानि। स॰सृष्टं

मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुनुवंः। सं प्रिया हृदंयानि वः। आत्मा वो अस्तु सम्प्रियः। सम्प्रियास्तुनुवो ममं॥१७॥

कल्पंतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप ओषंधीः। कल्पंन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्येष्ठ्यांय सन्नंताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्रा॥१८॥

अन्तिरक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजीजनत्रमृतं मर्त्यांसः। अस्रेमाणं तरिणं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्नुवंः समीचीः। पुमार्ंसं जातम्भि सर्रभन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण् मह्मम्। दीर्घायुत्वायं शतशांरदाय। शतर शरद्ध आयुंषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वे पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोकुञ्जांतवेदः। प्राणे त्वाऽमृत्मादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यै। सुगार्हपत्यो विदहन्नरांतीः। उषसः श्रेयंसीः

श्रेयसीर्दर्धत्॥२०॥

अग्ने सपत्नार् अप बार्धमानः। रायस्पोषमिषमूर्जमस्मासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौंदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलांय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। सपत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥ यस्तं आत्मा पशुषु प्रविष्टः। पुष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तरिक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमांण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भांहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चे रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महाश् असि। वेदिषन्मानुषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। स्विदाने रोदंसी सं बभूवतुंः॥२३॥ सर्वमायुर्व्यानशे॥ २४॥

तयौः पृष्ठे सींदत् जातवेदाः। शुम्भः प्रजाभ्यंस्त्नुवै स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ देधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्तै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे

नर्य प्रजां में गोपाय। अमृत्त्वायं जीवसें। जातां जिन्ष्यमाणां च। अमृते सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अथवं पितुं में गोपाय। रसमन्नंमिहायुंषे। अदंब्धायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृण्। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्निय मर्त्रं मे गोपाय। यमृषंयस्त्रेविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूर्षेष। सा हि श्रीर्मृतां स्ताम्॥२६॥ चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यें।

मुर्मुज्यमाना महते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय

कामान्। इहैव सन्तत्रं स्तो वों अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। पृश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विराद्गृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥

वि्शन्तु नः पुरूचीर्विधेम नि्धाय यत्तेऽप्रंदाहाय बृह्त्यों ब्रह्मंणा दुवस्यत विश्ववांर इममृंञ्जते

पुरोगां प्रजनियुष्यथों जिन्ष्यतेंऽस्मै मर्म महिम्ना वर्चसे दर्धत्सुवर्गो भांहि सम्बभूवतुरायुर्व्यानशे चतुंष्पदः स्तां प्रजापंतेर्द्वे चं॥-नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युपयन्ति। नवस्वेव तत्सुंवर्गेषुं लोकेषुं स्त्रिणंः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इतिं। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवत्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तदशाः पर्रः सामानः कार्याः॥२८॥ पुशवो वा उक्थानि। पुशूनामवंरुद्धौ। विश्वजिद्भिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तदशाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजमिभ सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिरिच्येते। एकया गौरतिरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिः।

ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर्१ राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीयें। वैरूपं तृतीयें। वैराजं चंतुर्थे। शाकुरं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद् पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्त्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजंमाना अवंरुन्धते। बृहत्पृष्ठं भंवति। बृहद्वै स्वगों लोकः। बृहतैव स्वगं लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम् सामं। माध्यं दिने पर्वमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रिश्शृद्वे देवताः। देवतां पृवावंरुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवत्सरमृप्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ् ये-ऽमुतोऽर्वाश्चमुप्यन्ति। ते हैनः स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्वा अमुतोऽर्वाश्चमुपंयन्ति। यदेवम्। यो ह खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयन्ति॥३२॥

कार्या विराष्ट्रहान्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं च॥———[२] सन्तितिर्वा पुते ग्रहाः। यत्परंः सामानः। विषूवान्दिवाकीर्त्यम्॥ यथा शालांयै पक्षंसी। एवं संवत्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विषूंची संवत्स्रस्य पक्षंसी व्यवंस्रश्सेयाताम्। आर्तिमार्च्छेयुः। यदेते गृह्यन्तें। यथा शालांयै पक्षंसी मध्यमं व १शमभि संमायच्छंति॥३३॥ एव संवत्सरस्य पक्षंसी दिवाकीर्त्यमिभ सं तन्वन्ति। नार्तिमार्च्छन्ति। एकवि १ शमहंर्भवति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्ध्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पशुरालंभ्यते। सौर्यो-ऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवेष बुलिर्हियते। सुप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥ सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावांदित्यः शिरंः प्रजानांम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्मात्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ लोकानुभ्यं जयत्। तस्यासौ लोको ऽनंभिजित आसीत्। तं विश्वकंमां भूत्वाऽभ्यंजयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥ सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्रवा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णते"। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। अन्योंन्यो गृह्येते।

विश्वांन्येवान्येन् कर्माणि कुर्वाणा यन्ति। अस्याम्न्येन् प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धात्संवत्स्रस्यान्योंन्यो गृह्येते। तावुभौ सह मंहावृते गृह्येते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रतितिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्यं भंवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥ स्मायच्छंत्यितिग्रह्यां गृह्यते गृह्यते संवत्स्रस्यान्यौन्यो गृह्येते पश्च च॥———[३] एकविश्श एष भंवति। एतेन् वै देवा एकविश्शेनं। आदित्यमित उत्तमश् स्वुवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष ह्वत एकविश्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं प्रस्तात। स वा एष विराज्यंभयतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष

उभ्यतः प्रतिष्ठितः। तस्मांदन्त्रेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषु लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥ देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचोऽतिपादा-

देविभयुः। तं छन्दोभिरदृश्हं धृत्यै। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवांचोऽवपादादंविभयुः। तं पृश्चभीं रिश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकविश्शेऽह्न्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयुत्रे। ते गांयुत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥ महादिवाकीर्त्य् होतुंः पृष्ठम्। विकुणं ब्रह्मसामम्। भासों ऽग्निष्टोमः। अथैतानि परांणि। परैर्वे देवा आंदित्य र स्वर्गं लोकमंपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां परत्वम्। पारयंन्त्येनं पराणि। य एवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वै देवा आदित्य सुंवर्गं लोकमस्पारयन्। यदस्पारयन्। तत्स्पराणाः स्परत्वम्। स्पारयंन्त्यैनः स्पराणि। य एवं वेदं॥३९॥ एति पर्वमानयोः स्पराणि पर्श्व च॥— अप्रतिष्ठां वा एते गंच्छन्ति। येषा ५ संवत्सरेऽनाप्तेऽर्थ। एकादशिन्याप्यते। वैष्णवं वामनमालंभन्ते। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्यै। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी

पुवार्लभन्ते॥४०॥ वैश्वदेवमार्लभन्ते। देवतां पुवार्वरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमार्लभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायुव्यं वत्समार्लभन्ते। वायुरेवैभ्यां यथाऽऽयत्नाद्देवता अर्वरुन्थे। आदित्यामविं वृशामार्लभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावुरुणीमार्लभन्ते॥४१॥

वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्ट शमयन्ति। वर्रणेन् दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूंपरं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलर्हिंयते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्यै। अज्ञपेत्वान् वा एते पूर्वेमिसैरवं रुन्धते। यदेते गृव्याः पृशवं आल्भ्यन्ते। उभयेषां पशूनामवंरुद्धे॥४२॥

यदितिरिक्तामेकाद्शिनींमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्दौ द्वौ पृशू स्मस्येयुः। कनींय आयुंः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यंतिरिच्यंते। न कनींय आयुंः कुर्वते॥४३॥ त पृवालंभन्ते मैत्रावरुणीमालंभुन्तेऽवंरुद्धौ सुप्त चं॥———[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूतानाः रसं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववर्तीति। तन्महाब्रतस्यं महाब्रत्त्वम्। मृहद्भृतमिति। तन्महाब्रतस्यं महाब्रतत्वम्। महाब्रतत्वम्। महाब्रतत्वम्। महाब्रतत्वम्।

पुश्चविर्शः स्तोमो भवति॥४४॥

चतुंर्वि शत्यर्धमासः संवत्स्रः। यद्वा एतस्मिन्त्संवत्स्रेऽधि प्राजायत। तदन्नं पश्चवि श्रमंभवत्। मुध्यतः क्रियते। मुध्यतो ह्यन्नंमिश्तं धिनोतिं। अथों मध्यत एव प्रजानामूर्ग्धायते। अथ यद्वा इदमंन्ततः क्रियतें। तस्मांदुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायेव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥ त्रेधाविहित हि शिरंः। लोमं छ्वीरस्थिं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तत्महगेव। न मेद्यतोऽन्ं मेद्यति। न कृश्यतोऽनं कृश्यति। पश्चद्रशौंऽन्यः। तस्माद्वया इंस्यन्यत्रम्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रतो हि तद्गरीयः क्रियतें॥४६॥

पृश्चिविष्श आत्मा भेवति। तस्माँनमध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्विविष्शं पुच्छम्ँ। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण सह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्याँत्मनाँऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिष्पन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा एतेन् सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो नुखान्। पृरिमादंः क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नंमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवानाः साम्यंक्षे। तृल्पुसद्यंमभिजयानीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यंमेवाभि जंयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजिंत्ड् स्यात्। स देवाना्ड् साम्यंक्षे। तल्प्सद्यं मा परांजेषीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। न तंल्प्सद्यं परांजयते। प्रेङ्के शर्सति। महो वै प्रेङ्कः। महंस प्वान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकृतें व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णों ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमेंऽरात्सुरिमे सुंभूतमंऋत्नित्यंन्यत्रो ब्रूंयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुंभूतमंऋत्नित्यंन्यत्रः। यदेवैषाः सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽरांद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवादित्यं भ्रातृंव्यस्य संविंन्दन्ते॥५०॥

भुवृति भुवृति ऋियते पुर्रुषो जयत्यजयञ्जयञ्जयत्येकं च॥-----[६]

उद्धन्यमानुं नवैतानि सन्तंतिरेकविष्श एषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षट्॥६॥

उद्धन्यमान र शोचिष्केशोऽग्नें सुपन्नानितग्राह्मां वैश्वदेवमालभन्ते पश्चाशत्॥५०॥

उद्धन्यमान संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। अग्नीषोमयोस्तेज्ञस्विनींस्तुनः सन्न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदि नो जेष्यन्तीति। तेनाुग्नीषोमावपाँकामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तेंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूत्संत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेज्ञस्विनींस्तुन्-रवांरुन्धत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं त्नूर्व्यगृह्णत्ता ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनराधेयें कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनराधेयें कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतिक्रियते। यत्सिमधस्तनूनपांतिमिडो बर्हिर्यजति। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्याहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः प्रवीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनांग्नेय सर्वं भवति। पृक्धा तेंज्ञस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृंतसम्भार् इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धे। तेनोपा १ श्र प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुंनराधेयः। यथोपा १ शु नृष्टमिच्छतिं॥ ५॥ ताद्दगेव तत्। उद्देः स्विष्टकृतमृत्स्ंजित। यथां नष्टं

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृतमुत्सृंजित। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्मयमिति। ताहगेव तत्। एक्धा तेंजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इति। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभंक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्याताम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥ तद्वैश्वानरवंत्युजनंनवत्तरमुपैतीति। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनाँग्नेयं वा एतत्क्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रंथमं विभक्तीनां यजति। अग्निमुंत्तमं पंत्रीसंयाजानांम्। तेनांग्नेयम्। तेन समृद्धं क्रियत इतिं॥७॥

अरु-युत्तैव तद्भंवति सम्पृतिसम्भार् इत्यांहरिच्छति पत्नीसंयाजा नवं च॥——[१] देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। यौऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्येयमपश्यन्। ते। अन्यौऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहम्नेनं यजा इतिं। तैंऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेतिं॥८॥

तस्मिन्नाजिमधावन्। तं बृह्स्पित्रिर्देजयत्। तेनायजत।
स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रोंऽब्रवीत्। माम्नेनं
याज्येति। तेनेन्द्रंमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्।
अगच्छत्स्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मे ज्येष्ठग्राय॥९॥
य एवं विद्वान् वाजपेयेन् यजते। गच्छति स्वाराज्यम्।
अग्रं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मे ज्येष्ठग्राय। स वा एष
ब्राह्मणस्यं चैव राजन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वाजपेय इत्याहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज्र् ह्येतेनं देवा ऐप्सन्।
सोमो वै वाजपेयंः। यो वै सोमं वाज्रपेयं वेदं॥१०॥ वाज्येवैनं पीत्वा भंवति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाजपेयः। य पुवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यान्नादो जांयते। ब्रह्म वै वाजपेयः। य पुवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जांयते॥११॥ वाग्वे वाजस्य प्रस्वः। य पुवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वाजपेयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। पुष वाव यज्ञः। यद्वाजपेयः॥१२॥ अप्येव नोऽन्नास्त्विति। तेभ्यं पुता उित्रितीः प्रायंच्छत्। ता

अप्यव नाऽत्राास्त्वात। तभ्य पुता उाञ्जताः प्रायच्छत्। ता वा पुता उञ्जितयो व्याख्यायन्ते। युज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतानामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नंस्य च् शमंलुमपाँघ्रन्। यद्वह्मणः शमंलुमासीँत्। सा गाथां नाराश्र्ङ्स्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुराँ॥१३॥ तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्।

तस्माद्गायतश्च मृतस्य च न प्रातुगृह्यम्। यत्प्रातगृह्णायात्। शर्मलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्नौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽप्सु यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्मौद्वाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचो-ऽवंरुद्धाः॥१४॥

धावामेति ज्यैष्ठांय वेदं ब्रह्मा जांयते वाज्येयः सुराऽऽर्त्विजीन् एकं च॥——[२]

देवा वै यदन्यैर्ग्रहैं य्व्ञस्य नावारुन्थत। तदंतिग्राह्यंरितृगृह्या-वांरुन्थत। तदंतिग्राह्यांणामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैर्ग्रहैं य्व्ञस्य नावंरुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावंरुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तमास्वाऽवंरुन्थे॥१५॥

गृह्यन्ते। पाङ्का युज्ञः। यावान्व युज्ञः। तमाुस्वाऽवरुन्धे॥१५॥
सर्व ऐन्द्रा भवन्ति। एक्धेव यजंमान इन्द्रियं दंधित।
स्प्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। स्प्तद्शः प्रजापंतिः।
प्रजापंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं
दधाति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वे देवानां
पर्ममन्नम्। यत्सोमंः॥१६॥

पृतन्मंनुष्यांणाम्। यत्सुरां। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर-मृन्नाद्यमवंरुन्थे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मंणो वा एतत्तेजंः। यत्सोमंः। ब्रह्मंण एव तेजंसा तेजो यजंमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यत्सुरां॥१७॥ अन्नस्यैव शमंलेन शमंलं यजंमानादपंहन्ति। सोमृग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुमान् वै सोमंः। स्त्री सुरौं। तिन्मंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहेः स्पृणोति। जायाः सुराग्रहेः। तस्मौद्वाजपेययाज्यंमुष्मिं ह्योके स्त्रियः सम्भंवति। वाजपेयांभिजितः द्वांस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षरं सोमग्रहान्त्सांदयित। पृश्चाद्क्षरं सुराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्ये। एष वे यजंमानः। यत्सोमः। अन्नरं सुरां। सोमग्रहार्श्वं सुराग्रहार्श्वं च्यतिंषजित। अन्नाद्येनैवैनं व्यतिंषजित॥१९॥

सम्पृचंः स्था सं मां भ्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रं वै भ्रम्। अन्नाद्यंनैवैन् स् सर्म्जिति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यत्स्रां। पाप्मेव खलु वे शर्मलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन व्यतिषजिति। यत्सोमग्रहा इश्चं स्राग्रहा इश्चं व्यतिषजिति। विपृचंः स्था वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवैन् शर्मलेन व्यावर्तयित॥२०॥ तस्मांद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यों दक्षिण्यंः। प्राङ्कंविति

सोमग्रहैः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहैः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहैः। यावंदेव स्त्यम्। तेनं सूयते। वाज्रसृद्धः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विशु स् संश्मृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूणं दंदाति। मुध्व्योऽसानीतिं। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यजमान् आयुस्तेजो दधाति॥२१॥

आस्वाऽवंक्त्ये सोमः शमंतं यत्सुग् इंस्थेनं व्यतिषजित व्यावंतियित सृजित च्लारि च॥[३]

ब्रह्मवादिनो वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिरात्रः। अथ कस्माँद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त् इति। प्शुभिरिति ब्रूयात्। आग्नेयं प्शुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावंरुन्थे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सारस्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृंह्तः स्तोत्रम्। एतावन्तो वै यंज्ञऋतवः। तान्पश्भिरेवावंरुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनः स्तोत्रेणं। वार्चमतिरात्रेणं। प्रजां बृंह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥

सुवर्गं लोक र षोंडशिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पुथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक रे रोहति बृहतः स्तोत्रेणं। तेर्ज एवात्मन्धंत्त आग्नेयेनं पशुनां। ओजो बलंमेन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाचर्ं सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं चं मनुष्यलोकं चाभिजंयति मारुत्या वृशयां। सप्तदंश प्राजापत्यान्पशूनालंभते। सप्तदशः प्रजापंतिः॥२४॥ प्रजापंतेराप्त्रैं। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एवमिंव हि प्रजापंतिः समृद्धौ। तान्पर्यप्रिकृतानुत्सृंजति। मरुतों यज्ञमंजिघा रसन्प्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वशामालंभत। तयैवैनानशमयत्। मारुत्या प्रचर्यः। एतान्त्संज्ञंपयेत्। मरुतं एव शंमयित्वा॥२५॥ एतैः प्रचरित। यज्ञस्याघाताय। एक्धा वपा जुंहोति। एकदेवत्यां हि। एते। अथों एकधैव यर्जमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरति। पुतत्पुंरोडाशा ह्यंते। अथो पशूनामेव छिद्रमपिंदधाति। सारस्वत्योत्तमया प्रचंरति। वाग्वै सर्रस्वती। तस्मौत्प्राणानां वागुत्तमा। अथौ प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिर्हि वाक्।

अपंत्रदती भवति। तस्मौन्मनुष्यौः सर्वां वार्चं वदन्ति॥२६॥

अतिरात्रमुन्तरिक्षमुक्थ्येन प्रजापंतिः शमयित्वोत्तमया प्रचरित षद चं॥———[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तांत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमितिं। स्वितृप्रंसूत एव यथापूर्वं कर्माणि करोति। सर्वनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तत्सेतुं यजमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। वाचस्पतिर्वाचंम्द्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वे देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचंमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यचैवेयम्। यच्चास्यामिथं। तदेवावंरुन्थे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-विच्यते। अप्स्वंन्तर्मृतंमप्सु भेषजमित्यश्वांन्यल्पूलयित। अप्सु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्न्ववंप्लवते। यद्प्सु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्याप्सु प्रविष्टम्। तदेवावंरुन्थे। बृहु वा अश्वोऽमेध्यमुपं-गच्छति। यदप्सु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवैनांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुंर्वा त्वेत्यांह। एता वा एतं देवता अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिंरेवैनान्ं युनक्ति। स्वस्योज्जिंत्यै। यजुंषा युनक्ति व्यावृंत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्लोकान् भिजंयित। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्कौ न्यङ्काव्भितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्यै। अशंमरथं भावुकोऽस्य रथों भवति। य एवं वेदं॥३०॥

स्वद्यति प्रत्पूल्यंति व्यावृंत्या अनांत्ये हे चं॥————[५]
देवस्याहर संवितुः प्रस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं
जेषमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मुज्जंयित।
देवस्याहर संवितुः प्रस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं
नाकरं रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं
नाकरं रोहति। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहति। अतो वा
अङ्गिरस उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजमानः
सुवर्गं लोकमेति। आवेष्टयति। वज्रो व रथः। वज्रेणैव
दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना १ साम गायते। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावंरुन्धे। वाचो वर्ष्म देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वनस्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वनस्पतिषु वदति। या दुंन्दुभौ। तस्मौद्दन्दुभिः सर्वा वाचो-ऽतिंवदति। दुन्दुभीन्त्सुमाघ्नंन्ति। पुरमा वा पुषा वाक्॥३२॥ या दुंन्दुभौ। परमयैव वाचाऽवंरां वाचमंवरुन्धे। अथों वाच एव वर्ष्म यजमानोऽवंरुन्धे। इन्द्रांय वार्चं वदतेन्द्रं वार्जं जापयतेन्द्रो वाजमजियदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रेः। यो यजंते। यजंमान एव वाजमुजंयति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तदशं स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥ ३३॥

सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापत्रास्यै। अर्वाऽस् सिरिस् वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सिर्तः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनिक्तः। प्रष्टिवाहिनं युनिक्तः। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनिक्तः॥३४॥ वाजिनो वाजं धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यन्ति। य आजिं धावन्ति। प्राश्चो धावन्ति। प्राङिव् हि सुंवर्गो लोकः। चृत्सृभिरन् मन्नयते। चृत्वारि छन्दा १सि। छन्दोभिरेवैनान्त्सुवर्गं लोकं गंमयति॥३५॥

प्र वा एतें उस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च् आवंतन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वे वार्जः। अन्नमेवावंकन्थे। यथालोकं वा एत उन्नंयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिक्रीयावंरुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पतिरुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवाराणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुभंवति॥३७॥

पृतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवंरुन्थे। स्प्तदंशशरावो भवति। स्प्तदंशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्ये। क्षीरे भंवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। सूर्पिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येपेन यजंते। बार्हस्पत्य एष चरुः। अश्वांन्त्सरिष्यतः ससुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावंरुन्धे। अजीजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुश्चति। यमेव ते वाजं लोकिमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावंरुन्धे॥३९॥ अभिजंयित् वा एषा वार्वीयन्तेऽस्मै युनिक गमयत् य आजि धावंन्ति भवति देवतंयाऽष्टौ

वं प्यं यजंमानं परिधापयति। यज्ञो वे ताप्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। प्वित्रं वे दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवं रुरुत्सते। यो

व दुमाः। पुनात्यवनम्। वाज् वा पुषाऽवरुरुत्सता या वाज्यपर्यन् यज्ञते। ओषंधयः खलु वै वाजः। यद्दर्भमयं परिधापर्यति॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जाय एहि सुवो रोहावेत्यांह। पित्रिया एवैष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपों भवति। सप्तद्दशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्यैं। तूप्रश्चतुंरिश्नभंवित। गौधूमं चषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥ एविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धै। अथों अमुमेवास्मै यद्यूपंः। सूर्वदेवत्यं वासंः। सर्वाभिरेवेनं देवतांभिः समर्धयित। अथो आक्रमणमेव तत्सेतुं यजमानः कुरुते। सूर्वास्यं लोकस्य सम्ध्रे। द्वादंश वाजप्रस्वीयांनि जुहोति॥४२॥ द्वादंश मासाः संवत्सरः। स्वत्सरमेव प्रीणाति। अथो संवत्सरमेवास्मा उपद्याति। सूर्वास्यं लोकस्य सम्ध्रे। द्रशिमः कल्पं रोहित। नव व पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यंथास्थानं कल्पयित्वा। सूर्वां लोकमेति। पृतावद्वै पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः।

यावंत्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवा अगृन्मेत्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैति॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मयां प्रजेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। आस्पुटैर्घन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्यंनैवैन् समर्धयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनंमन्नाद्यंन् समर्धयन्ति। पुरस्तौत्रृत्यश्चं घ्रन्ति॥४५॥

पुरस्ताद्धि प्रंतीचीनमन्नंमद्यतें। शीर्षतो प्रंन्ति। शीर्षतो ह्यनंमद्यतें। दिग्भ्यं प्रंन्ति। दिग्भ्यं प्रवासमां अन्नाद्यमवंरुन्थते। ईश्वरो वा एष परांड्रुद्धः। यो यूप्र रोहंति। हिरंण्यम्ध्यवंरोहति। अमृतं वे हिरंण्यम्। अमृतं स्वर्गो लोकः॥४६॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतितिष्ठति। श्वतमानं भवति। श्वतायुः पुरुषः श्वतिन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पृष्ठौ वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवत्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनमध्यवं रोहति। पृष्ठामेव प्रजनेने प्रतितिष्ठति॥४७॥

प्रिध्यपयंति ग्रेथूमां ज्होति स्वं नैति प्रत्यश्चं प्रन्ति लोको नवं चा——[७] स्प्तान्नहोमाञ्चहोति। स्प्त वा अन्नानि। यावन्त्येवान्नानि। तान्येवावं रुन्थे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवं रुद्धे। अन्नस्यान्नस्य जुहोति। अन्नस्यान्नस्या-वं रुद्धे। यद्वां जपेयया ज्यनं व रुद्धस्याश्रीयात्॥४८॥ अवं रुद्धेन व्यृंद्धेत। सर्वस्य समवदायं जुहोति।

अनंवरुद्धस्यावंरुद्धै। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्व इत्याह। स्वितृप्रसूत एवेनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्यावंरुद्धै॥४९॥

पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभिषिश्चिति। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंम्द्यतें। शीर्ष्तांऽभिषिश्चिति। शीर्ष्तो ह्यन्नंम्द्यतें। आ मुखांद्न्ववं-स्नावयति। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंमभिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। त्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-विश्वामीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवेनंमभि-विश्वति। सोम्ग्रहा इश्वांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्वांनवदानीयानिं च वाज्यसृद्धाः। इममेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। अथो उभयींष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्यसृतः॥५१॥ इन्द्रियस्यावंरुद्धो। अनिरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अत्रं वे वाजंः। अत्रंमेवावंरुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। युज्ञो वे विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवेन ई श्रिये गंमयति॥५२॥

अश्रीयादन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धा इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाज्सृतः शिपिस्नीणिं

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवैतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवैतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। भुवनमग्निति वै तमांहः। भुवनमेवैतेनं गच्छति॥५३॥

अप्सुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वे वसीयान्भवंति। व्योमाग्निति वे तमांहुः। व्योमैवैतेन गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। पृषामेवैतेनं लोकानारं सूयते। तस्माद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयते॥५४॥ गुच्छुति सूयते नवं च॥

नाक्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगन्निति वै तमांहुः। नाकंमेवैतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्यांह। पश्चज्ञनानांमेवैतेनं सूयते। अपार रस्मुद्धंयस्मित्यांह। अपामेवैतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिश्मर स्मार्भृतमित्यांह सश्चुत्रत्वायं॥५५॥

इन्द्रों वृत्र १ ह्त्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोंऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञां-ऽगच्छत्। तं देवाः पुनरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थ वः पुनर्दास्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः कियाता इति॥५६॥ तमेंभ्यः पुनरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः कियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः करोति। पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यज्ञमानः प्रतेन्ते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम इत्याह। पितुरेवाधि

सोमपीथमवंरुन्धे। न हि पिता प्रमीयंमाण आहैष सोमपीथ

इतिं। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे।

तेनेंन्द्रियेणं द्वितीयांं जायामभ्यंश्रुते॥५७॥

पृतद्वै ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य एवं वेदे। अभि द्वितीयां जायामंश्रुते। अग्नयें कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्यांह। य एव पितृणाम्ग्रिः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्मम्पंद्यन्ते॥५८॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षणमादंधाति। अस्ति वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वे पितॄन्प्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्मम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्प्रींणाति। तान्प्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। पराङावर्तते॥६०॥ ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौ व्यावृत उपास्ते। ऊष्मभांगा हि

ह्रीका हि पितरं। ओष्मणों व्यावृत् उपास्ते। ऊष्मभांगा हि पितरं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) त्र प्राश्या (३) मिति। यत्प्राश्चीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्राश्चीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥ पितृभ्य आवृंश्येत। अवघ्रेयंमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरं: प्रयन्तो हर्रन्ति। वीरं वां ददति। दशां छिनति। हरणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तर आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः ह्यंतर्हि नेदीयः॥६२॥ नमंस्करोति। नमस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवायं। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मृन्यवै। नमों वः पितरो घोरायं। पितंरो नमों वः। य एतस्मिं ल्लोके स्थ॥६३॥ युष्मा इस्ते ऽन्। यें ऽस्मिँ ह्यो के। मां ते ऽन्। य पृतस्मिँ ह्यो के स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यैंऽस्मिँ ह्योके। अहं तेषां वसिष्ठो भूयासमित्याह। वसिष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्पितृभ्यः करोति। एष वै मंनुष्यांणां युज्ञः॥६४॥ देवानां वा इतंरे यज्ञाः। तेन वा एतत्पितृलोके चरित। यत्पितृभ्यः करोति। स ईश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययर्चा पुनरैतिं। युज्ञो वै प्रजापंतिः। युज्ञेनैव सुह पुन्रैतिं। न प्रमायुंको भवति। पितृलोके वा पुतद्यजंमानश्चरति। यत्पितृभ्यंः करोतिं। स ईंश्वर आर्तिमार्तोः। प्रजापंतिस्त्वावैनं

तत् उन्नेतुमर्ह्तीत्यांहुः। यत्प्रांजापृत्ययुर्चा पुन्रेतिं।
प्रजापंतिरेवेनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥
इत्यंश्वते पद्यन्ते पद्मने पद्म ऋतवां वर्ततेऽहंविः स्यान्नेदीयः स्थ यज्ञो यजमानश्चरित्
यत्पितृभ्यः क्रोति पश्चं च॥———[१०]

देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यदन्यैग्रीहैंर्ब्रह्मवादिनो नाग्निंष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यर सप्तान्नहोमात्रृषदं त्वेन्द्रीं वृत्रर हुत्वा दर्श॥१०॥

देवासुरा वाज्येवैनं तस्माँद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चंषष्टिः॥६५॥

देवासुरा यजंमानः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें ऽन्य इमें ऽन्य इतिं। स देवान श्रूनंकरोत्। तानभ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तौत्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्॥१॥ देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुरेनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपार्शुः। सोमेन देवाङ्स्तंर्पयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपा ५शुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवा इस्तंर्पयति। यद्ग्रहां जुहोतिं॥२॥ देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंमुसां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेणु यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥ तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति।

व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकमभिजंयति। यानिं मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोमग्रहंणीरितिं। देवा वै पृश्ञिंमदुह्नन्॥४॥ तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्ञिः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पशून् यजंमान इमां दुंहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यर्जमान इमां दुहे। तां विश्वे देवा औग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदौग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां मंनुष्यौ ध्रुवस्थाल्या-ऽऽयुंरदुह्नन्। यद्भुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजंमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णाति। वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण पृशून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतंमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

ग्रहुत्वं ग्रहाँ जुहोत्यंकुर्वतादुहन्नाग्रयणस्थाली भवंति नवं च॥——[१] युवः सुराममिश्विना। नमुंचावासुरे सर्चां। विपिपाना शुंभस्पती। इन्द्रं कर्मं स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांविश्विनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दुर्सनांभिः। यत्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सर्रस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्येते। सुचीवं घृतं चुमू इंव सोमः॥७॥

वाज्सिनि र्रियम्समे सुवीरम्। प्रश्नस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋष्भासं उक्षणः। वृशा मेषा अवसृष्टास् आहुताः। कीलालपे सोमपृष्ठाय वेधसें। हृदा मृतिं जनय चारुमग्रयें। नाना हि वां देवहिंत र सदो मितम्। मा सरसृक्षाथां परमे व्योमन्। सुरा त्वमिसे शुष्मिणी सोमे एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥ यदन्रे शिष्टर रसिनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिबच्छचींभिः। अहं

यदत्रं शिष्ट रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनसा शिवेनं। सोम् राजानिम्ह भक्षयामि। द्वे स्तृती अशृणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन् समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायत्रछंन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥ यस्ते देव वरुण जगतीछन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगतीछन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे। सोमो वा

पृतस्यं राज्यमादंत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजंते। देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्मैं स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनंः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आविशन यंजे राज्यायैकं च॥———[२] उदंस्थाद्देव्यदिंतिर्विश्वरूपी। आयुर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषींदति। यस्यांग्निहोत्री

निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदस्थाद्देव्यदिंतिरितिं। इयं वै देव्यदिंतिः॥११॥

इमामेवास्मा उत्थापयति। आयुंर्यज्ञपंतावधादित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय् वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा एषैतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदति। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदति। तां दुग्ध्वा ब्राह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्याप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्ध्वा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांनु इस्कन्दंति। यद्द्य पयों अघ्नियासुं। पयों वृत्सेषु पयों अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं पुवात्मन्गृहेषुं पुशुषुं धत्ते। अप उपंसृजिति॥१३॥ अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै यज्ञस्यार्ते नानांति स स स्मुजिति। उमे वै ते तर्ह्यार्च्छतः। आर्च्छति खलु वा पृतदिग्निहोत्रम्। यदुह्ममानु इस्कन्दंति। यदंभिदुह्मात्। आर्ते नानौर्तं यज्ञस्य स॰सृंजेत्। तदेव यादकीदक्रं होतव्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होतव्यम्। अनाँर्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥ यद्यद्वंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनरे्यात्। युज्ञं विच्छिन्द्यात्। यत्र स्कन्दैत्। तिन्नषद्य पुनर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवैनृत्पुनंगृह्णाति। तदेव यादक्कीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्धा पुनंर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥ वि वा एतस्यं यज्ञशिछंद्यते। यस्यांग्रिहोत्रेंऽधिश्रिंते श्वाऽन्तरा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्गिः। यद्गामंन्वत्या वर्तयेत्। रुद्रायं पशूनिपं दध्यात्। अपशुर्यजंमानः स्यात्। यदपों-ऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमुग्नेरापः। अनाद्यमाभ्यामपि दध्यात्।

दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीर्प्यसंर्घदापंः। पयों गृहेषु

गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णव्यर्चा-ऽऽहंवनीयाँद्धश्सयनुद्रंवेत्। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञेनैव युज्ञश् सन्तंनोति। भस्मंना पदमपिं वपति शान्त्यै॥१६॥

वै देव्यदितिर्म् अति करोति करोत्याभ्यामिषं दथ्यात् पश्चं च॥———[३] नि वा पुतस्यां ऽऽहव्नीयो गार्हं पत्यं कामयते। निगार्हं पत्यं आहव्नीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्यो ऽभि निम्नोचंति। दर्भेण् हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तां द्धरेत्। अथाग्निम्। अथाग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरेति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवेनं पश्यन्नुद्धंरित। यद्ग्निं पूर्व हर्त्यथांग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेंनैवेनं प्रणयिति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धेरित। अग्निहोत्रम्पूपसाद्यातिमेतोरासीत। व्रतमेव हृतमन् प्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्नोचंति॥१८॥

पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वरुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्कीणीते। नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत्र सूर्योऽभ्युंदेतिं। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तांद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वक् हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा पृतस्मैं व्युच्छन्ती व्यंच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र सूर्योऽभ्यंदेति। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्ग्विद्याज्यंन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंप्साद्यातिमेतोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत् र् सूर्योऽभ्यंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् र सूर्योऽभ्यंदेतिं। मैत्रं च्रं निर्वपेत्। तेनैव यृज्ञं निष्क्रीणीते। यस्यांऽऽहव्नीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वायेंत्॥२२॥ यदांहव्नीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मे जनयेत्। यद्वे यृज्ञस्यं वास्त्व्यंं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्तव्यंमग्निमुपांसीत।

रुद्रौऽस्य पृश्न्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों हृव्यं वंहतु प्रजानन्नितिं। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयति। गार्हंपत्यं मन्थति। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं क्रामन्ति। इषे र्य्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्मै रमयति। सारुस्वतौ त्वोत्सौ सिनेन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुत्सौ। ऋख्सामाभ्यांमेवैन्ध् सिनेन्थे। सम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्तरं वै सम्राट। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवैन् सिमंन्धे। वज्रो वै च्क्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्राऽग्नी यातिं। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृंतं पदश् हि तैं। सूर्यस्य र्ष्मीनन्वांत्तानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भेरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वार्जवृत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं युज्ञनं युज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने सप्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव युज्ञः सन्तंनोति। अग्नयं पथिकृतं पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निर्वपत्। अग्निमेव पंथिकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं युज्ञियं पन्थामिपं नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्येष समृद्धे॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्नोचंति हरेद्देवतां गच्छत्युद्धार्थैन्मन्थेद्रमस्व बृहद्धिराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणिं निम्नोचंति दुर्भेण् यद्धिरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुंणो वारुणं नि वा एतस्याभ्युंदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनर्मित्रो मैत्रं यस्याऽऽहवनीयेऽनुद्धाते गार्हंपत्यो यद्वै मंन्थेदुद्धरेत्॥)॥———[४]

यस्यं प्रातः सबने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सबनं

कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौर्धयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा एतत्। यत्सवंनस्यातिरिच्यते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्तिं। सुन्धेः शान्त्यैं। गायत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनात्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनूत्रंयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मुध्यत एव यज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सवंने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृंतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यत्सवंनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिरिक्तस्य शान्त्यै। बण्महा असि सूर्यति कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यते। तेनैवैनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत साम भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनात्सर्वनान्नयंन्ति। सप्तद्शः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं श स्सति॥३०॥ मध्यत एव यज्ञ स्मार्द्धाति। यस्यं तृतीयसव्ने सोमोऽतिरिच्यंत। उक्थं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽतिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽतिरिच्यंते। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यज्ञंमानं वा एतत्प्शवं आसाह्यंयन्ति। बृहत्सामं भवति। बृहद्वा इमाँ छोकान्दांधार। बार्हताः पृशवंः। बृहतेवास्में पृश्चन्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पृष्टम्। पृष्टमैवेन् समर्धयन्ति। होतुंश्चमसमनूत्रंयन्ते। होताऽनुंश स्मिति। मध्यत एव यज्ञ स्मार्द्धाति॥३१॥ यन्ति। सवनस्यातिरिच्यंते श्रस्ति दाधार्ष्टो चं॥——[५]

प्रकैको वै जनतायामिन्द्रं। एकं वा प्रताविन्द्रंम्भि सश्सुनुतः। यो द्वौ सर्श् सुनुतः। प्रजापित्वी एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सर्भुन्वतोर्निर्बप्सित। पूर्वणोप्मृत्यां देवता इत्याहुः। पूर्वोप्मृतस्य वै श्रेयान्भवित। एतिवन्त्याज्यानि भवन्त्यभिजित्ये॥३२॥

मरुत्वेतीः प्रतिपदः। मरुतो वै देवानामप्राजितमायतनम्।

मुरुत्वताः प्रात्पदः। मुरुता व द्वानामपराजितमायतनम्। देवानामेवापराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्त्रे भंवतः। इयं वाव रथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवैनम्नतरेति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचांपानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥ सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृंत्त्यै। अभिजिद्भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। विश्वजिद्भवति। विश्वस्य जित्यैं। यस्य भूया रेसो यज्ञकृतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्क इतिं। यद्यंग्रिष्टोमः सोमः परस्तात्स्यात्॥३४॥ उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञऋतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्भुन्वतोरभिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दा रेसि वै संवेश उपवेशः। छन्दों भिरेवास्य

छन्दा ईस् वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दा ईस्यभिभंवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्यः॥३५॥ इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्ष्टः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योर्मा पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रयते। प्राणांपानौ मा मांहासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयः। ऋर्कृतांमिवेषां लोकः स्यात्। आहंर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं दक्षिणतो वेद्यै निधायं। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यत्स्तुतमनंनुशस्तमितिं। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मांजांलीयं परींयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वेनं लोकयोः परिंददित॥३७॥
अथो धवन्त्येवैनमं। अथो न्येवासमें हवते। त्रिः परिंयन्ति। त्रयं

अथो धुवन्त्येवैनम्। अथो न्यंवास्मै हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यो धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्मम्पद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षि पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्तरसामेषार सोमः स्यात्। आयुरेवात्मन्दंधते। अथो पाप्मानमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥ अभिजित्ये पृथ्व्याश्च स्यादंध्वर्युर्ब्र्याङ्कोकयोः परिददित कुर्वीर्ष्ड्कीणि च॥——[६]

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मांत्पशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियन्ति। येषां दीक्षितानांमग्रिरुद्वायंति॥३९॥ यदांहवनीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं एव पुनर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निलंयते। यत्र खलु वै निलीनमुत्त्मं पश्यंन्ति। तदेनिमच्छन्ति। यस्माद्दारोरुद्वायेत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमि कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तुनूः। यत्क्रुंमुकः। प्रिययैवैनं तनुवा समंध्यति। गार्हंपत्यं मन्थति॥४१॥ गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनेंर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्येंत्। सुवर्ण् हरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षे ऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयाद्न्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अंभिषूयमांणस्य प्रिया तुनूरुदंकामत्॥४२॥

वा अभिषूयमाणस्य प्रिया तुन्रदंक्रामत्॥४२॥
तत्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। यत्सुवर्ण् हरंण्यं कुर्वन्ति।
प्रिययैवैनं तुनुवा समंध्यन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपृहरंयुः।
क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यस्यं क्रीतमंपृहरंयुः।
आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायुत्री यः

सोममाहंरत्। तस्य योऽ५ंशुः पुराऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परां-ऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदांदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। द्र्या मध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमः स्याद्रथन्तरसामा। य प्वर्त्विजो वृताः स्यः। त एनं याजयेयः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं एव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। सर्वाभयो वा एष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानमागुरते। यः स्त्रायांगुरते। एतावानखलु व पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्यः एव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

उद्वायंति मन्थेन्मन्थत्यक्रामत्प्राऽपंतन्मध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥———[७]

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स पुंनातु मा। पुनन्तुं मा देवजनाः। पुनन्तु मनंवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयर्वः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीर्घत्। अग्ने ऋत्वा ऋतू र रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रंम्चिषि। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं प्नीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं प्नीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागात्। यस्ये बह्वीस्तन्वो वीतपृष्ठाः। तया मदंन्तः सध्माद्येषु। वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्॥४७॥ वैश्वान्रो रिश्मिमिम् पुनातु। वातः प्राणेनेषिरो मयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पयोभिः। ऋतावरी यज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठेदेव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कर्शः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मंणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येति। ऋषिभिः सम्भृत्र् रसम्। सर्व्र् स पूतमंश्ञाति। स्वृद्तितं मांत्रिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येति। ऋषिभिः सम्भृत्र् रसम्। तस्मै सर्रस्वती दहे। क्षीर्र सर्पिर्मधूदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्घा हि पर्यस्वतीः। ऋषिंभिः सम्भृतो रसंः। ब्राह्मणेष्वमृत ५

हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथी अमुम्। कामान्त्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुदुघा हि घृतश्चतः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत रे हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदाँ। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्। शतोद्यांम र हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों व्यम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्नु रयीणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुदुघा हि घृंतश्चृत ऋषिंभिः सम्भृंतो रसः पुनातु त्रीणि

प्रजा वे स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्नतीः। देवा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनाधमास अर्जुमवारुग्धत। तस्मादर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवारुग्धत। तस्मान्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं

घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥ तम्पोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्धत। तस्माद्विरह्नों मनुष्येभ्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। पशवोऽपश्यश्रमसं घृतस्यं पूर्ण इ स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्जमवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥ तम्पोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवत्स्र ऊर्जुमवांरुन्थत। ते देवा अमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः स्म इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषान्तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥ यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावंरुन्धे। यत्पतृभ्यः करोतिं। यामेव पितर ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावंरुन्थे। यदांवसथेऽन्नं हरेन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावंरुन्धे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥ यामेव पशव ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावंरुन्धे। यचांतुर्मास्यैर्-यजंते। यामेवासुरा ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावरुन्धे।

भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृं व्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिं होके प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुणप्रघासैरन्तिरक्षे। साकमेधेरमुष्मिं होके। एष ह त्वावेतत्सर्वं भवति। य एवं विद्वाङ्श्रांतुर्मास्यैर्यजंते॥५६॥ मृनुष्यं अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधामसंग अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधामसंग अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधामसंग अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधामसंग अप्रिवत्स्यः। १९] अग्निर्वाव संवत्स्रः। आदित्यः पंरिवत्स्रः। चन्द्रमां इदावत्स्रः। वायुर्गनुवत्सरः। यद्वैश्वदेवेन यज्ञंते। अग्निमेव

इदावत्स्रः। वायुरनुवत्स्रः। यद्वश्वदेवन् यजते। अग्निम्व तत्संवत्स्रमाप्नोति। तस्माद्वश्वदेवन् यजमानः। संवत्स्रीणाः स्वस्तिमाशांस्त् इत्याशांसीत। यद्वंरुणप्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्पंरिवत्स्रमाप्नोति॥५७॥ तस्माद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। परिवत्स्रीणाः स्वस्तिमाशांस्त् इत्याशांसीत। यत्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तिदंदावत्स्र-माप्नोति। तस्मात्साकमेधेर्यजंमानः। इदावत्स्रीणाः स्वस्तिमाशांस्त् इत्याशांसीत। यत्पितृयज्ञेन् यजते। देवानेव तदन्ववंस्यति। अथवा अस्य वायुश्चांनुवत्स्रश्चाप्नीता-वृच्छिष्येते। यच्छुंनासीरीयेण् यजते॥५८॥ वायुमेव तदंनुवत्स्रमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवृत्स्रीणाई स्वस्तिमाशाँस्त इत्याशांसीत। संवृत्स्रं वा एष ईंप्सृतीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह त्वै संवृत्स्रमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वं देवाः समयजन्त। तेंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥ यस्मिन्नग्निः। यहँश्वदेवेन यजंते। एतमेव लोकं जयित। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुंज्यमुपैति। यदा मैवत्सरस्यं

यजेते। अर्थ संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संहस्रयाजिनंमाप्नोति॥६०॥
अर्थ गहमेधिनंमाप्नोति। यदा गहमेधिनंमाप्नोति।

अर्थ गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्रां। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेयारंसि भवन्ति। यद्विश्वं देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांऽऽदित्यो वरुण् रांजानं वरुणप्रघासैरंयजत। स

पुतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वेरुणप्रघासैर्यजंते। पुतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुंज्यमुपैति। यदांदित्यो वरुण् राजांनं वरुणप्रघासे-रयंजत। तद्वंरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथु सोमो राजा छन्दार्श्स साकमेथेरयजत॥६२॥

स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यत्सांकमेधेर्यजंते। पृतमेव लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस पृव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। पृष हु त्वै साक्षात्सोमं भक्षयित। य पृवं विद्वान्त्सांकमेधेर्यजंते। यत्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधंन्त॥६३॥

तत्सिकमेधाना रे साकमेधत्वम्। अथुर्तवेः पितरेः प्रजापंतिं पितरें पितृयज्ञेनायजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवेः। यत्पितृयज्ञेन यजेते। एतमेव लोकं जयित। यस्मिन्नृतवेः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यद्दतवेः पितरेः प्रजापंतिं पितरें पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥ अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अंप्रथन्त। य एवं विद्वाङ्क्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पृश्गिः। अथं वायुः पंरमेष्ठिन १ शुनासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तां प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं श्रिदें श्रत्। यदि हेमंन् हेम्न्तः। ऋतुर्भूत्वा संवत्स्रमप्येति। संवत्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

पृरिवृत्स्रमाँप्रोति शुनासीरीयेंण् यजंतेऽजयन्त्सहस्रयाजिनंमाप्रोतिं वैश्वदेवृत्वः सांकमेधेरंयजत स्मैधंन्त पितृयज्ञृत्वं जंयति यस्मिन्वायुर्हेमुन्तस्रीणिं च॥——————[१०]

उभयें युवर सुराम्मुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सवन एकैंकोऽसुर्यं पवंमानः प्रजा वै स्त्रमांसता्ग्निर्वाव संवत्सरो दशं॥१०॥

उभये वा उदंस्थात्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राँह्मणेष्वर्थं गृहमेधिन् षट्थ्यंष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिंकाः। शुक्रं प्रस्ताङ्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका वितंतानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनंवस्। वातः प्रस्तांदार्द्रम्वस्तांत्॥१॥ बृह्स्पतेंस्तिष्यः। जुह्वंतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तांत्। सर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानत्यंन्तो-

सूर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः पुरस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तांत्। पितृणां मुघाः। रुदन्तः पुरस्तांदपश्रू श्रोंऽवस्तांत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया पुरस्तांदृषभोंऽवस्तांत्। भगस्योत्तरे। वृह्तवंः पुरस्ताद्वहंमाना अवस्तांत्॥२॥ देवस्यं सिवृतुर्हस्तः। प्रसावः पुरस्तांत्सनिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं पुरस्तांत्सत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ठां वृतितिः। पुरस्तादिसंद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानि पुरस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्परस्तांदभ्यारूढमवस्तांत्॥३॥ इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्परस्तौत्प्रतिशृणद्वस्तौत्। निर्ऋत्यै मूलवर्हंणी। प्रतिभुञ्जन्तंः पुरस्तांतप्रतिशृणन्तोऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः परस्तात्सिमितिरवस्तात्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्परस्तांदभिजितमवस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तात्।।४॥ वसूना ॥ श्रविष्ठाः। भूतं पुरस्ताद्भृतिरुवस्तात्। इन्द्रेस्य श्तिभिषक्। विश्वव्येचाः पुरस्तौद्विश्वक्षितिर्वस्तौत्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वानरं परस्ताँद्वेश्वावसवम-वस्तांत्। अहें बुंध्रियस्योत्तरे। अभिष्रिश्चन्तंः पुरस्तांदभि-षुण्वन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गार्वः पुरस्तांह्वत्सा . अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामः पुरस्तात्सेनाऽवस्तात्। यमस्यापभरंणीः। अपकर्षन्तः परस्तांदपवहन्तोऽवस्तांत्। पूर्णा पश्चाद्यत्ते देवा अदेधुः॥५॥

आुर्द्रमुवस्ताद्वहंमाना अवस्तांदुभ्यारूंढमुवस्तात्पन्थां अवस्तांद्वत्सा अवस्तात्पश्चं च॥———[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्धंर्वीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेतिं। अथ नक्षंत्रं नैतिं। यावंति तत्र सूर्यो गच्छेंत्। यत्रं जघन्यं पश्येत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ हु वै युज्ञेषुं च शृतद्युंम्नं च मात्स्यो निरवसाययां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्तियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशांखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्तिर्यः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः॥७॥

अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। यां कामयेत दृहितरं प्रिया स्यादिति। तां निष्ठांयां दद्यात्। प्रियेव भेवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायें। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजित्त्वम्। यं कामयंतानप-ज्ययं जंयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपुज्य्यमेव जंयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावन्त एवाभवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥ ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चौर्वाचीन् सोमौत्। प्रैव भेवन्ति। स्लिलं वा इदमेन्त्रासीत्। यदतंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु स लोकं नेक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति।

यानि वा इमानि पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षित्राणि। तस्मादश्चीलनामङ्श्चित्रे। नावस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। ताहगेव तत्। देवनक्षत्राणि वा अन्यानि॥११॥ यमनक्षत्राण्यन्यानि। कृत्तिकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपभर्रणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि। तानि दक्षिणेन

तान्युत्तरेण। अन्वेषामरात्स्मेतिं। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषाम-विध्यमेतिं। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूंलवर्हंणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्तभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपुभरंणीष्वपांवहन्। तानि वा पुतानि यमनक्षत्राणि। यान्येव देवनक्षत्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुकारैवं वेदोभयोरिनं लोकयौर्विदुरजयत्रेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमुन्यानि यानि यमनक्षत्राण्यश्लीणद्यम-

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमांस्वो-ऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रातस्तनात्। प्राचीनर् सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मात्तर्हिं पृशवंः सुमायन्ति। यत्प्रंतीचीनर् सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोड्शिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमानाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्णात्। प्राचीन रं सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः। वर्रुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविर्शो नक्षंत्राणाम्। सुमानस्याहः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चत्वार्यंश्लीलानिं। तानि नवं। यर्च परस्तान्नक्षंत्राणां यचावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्सरं व्रतं चरति। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भंवति। सुमानस्याहः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चत्वार्यश्लीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्सरं व्रतं चरित। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भंवति॥१८॥

सङ्गवाथ्योंडुशिनुं निरंमिमत् तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गो वंदेद्भवति समानस्याहः पश्च पुण्यांनि

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कति पात्रांणि यज्ञं वंहन्तीतिं। त्रयोंदशेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भ्यात्। कुतस्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाईं-श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा श्रासवंनम्। वाच ऐंन्द्रवायवम्। दुक्षुक्रतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंब्रीयत। स प्रतान्प्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निर्वपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्रयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत् षद्वं॥———[४]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंतियत्। अन्तान्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशान् ओजसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रो मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आऋांन्तमुष्णिहां। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेर्जमा। ऋतेनास्य नि वर्तये। सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंर्तये। तदतं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥ यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन ओर्ज्ञसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिरुस्तपुस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेर्जसा। ऋतेनास्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंर्तये। तदतं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥ एकं मासमुदंसृजत्। परमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभयो मह आवंहत्। अमृतुं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदुं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवत्सराः। येन ते तें प्रजापते। ईजानस्य न्यवंर्तयन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंतियामि जीवसें। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सृत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शृग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तत्सृत्यम्। तद्वृतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिवर्तये सुहाभिवर्तय उष्णिहां राध्यासुं न्यवर्तयृत्तुपंवर्तये चृत्वारिं च। (ऋतमेव षोडंश। यद्धुर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकं मासुं चतुंविं शितः)॥————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेंऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथोपपक्षौ। ततस्तेऽवांश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं

वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्ं। तत्स्तें-ऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवंत्यात्मनां। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिंथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेंऽवपत। अथोपपक्षौ। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां पृशुभिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवत्स्रे व्यायंच्छन्त। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवेनं चतुरों मासोंऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंर्तयन्त परि च। वरुणप्रघासैश्चतुरों मासोऽवृञ्जत वर्रुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्तु परि च। साकमेधेश्चतुरों मासों ऽवृञ्जत् सोमंराजानः। ताञ्छी्र्षं नि चार्वर्तयन्तु परि च। या संवत्सर उपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभेवन्। पराऽसुराः॥२८॥ य एवं विद्वाः श्चांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। यैषा संवत्सर उंपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वंर्तयते। यद्वा इमामग्निर्ऋतावागंते निवर्तयंति। एतदेवैना ५ रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ ल्लोहितायुसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवन्नेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानां मृद्धानि। त्रीणि छन्दा स्मि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥ ऋध्यामेव तद्वीर्यं एषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पश्निमे मन्यते॥३१॥

पृत्येत्ययुक्षतासंग एति लोका मंन्यते॥——[६] आर्युषः प्राण १ सन्तंनु। प्राणादंपान १ सन्तंनु। अपानाद्यान १ सन्तंनु। व्यानाच्यक्षुः सन्तंनु। चक्षुषः श्रोत्र १ सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मनंसो वाच १ सन्तंनु। वाच आत्मान १ सन्तंनु। आत्मनंः पृथिवी १ सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्ष १ सन्तंनु। अन्तरिक्ष १ सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥ ३२॥

अन्तरिक्षः सन्तंतु हे चं॥————[७] इन्द्रो दधीचो अस्थिभैः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घाने

नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनो बृहत्॥३३॥ इन्द्रम्केभिर्राकणाः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सचाँ। सम्मिश्च आवंचो युजाँ। इन्द्रो वुजी हिर्ण्ययः। इन्द्रो दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर् रोहयिद्वि। वि गोभिरद्रिमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिंः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्त्वे। स वृषां वृष्मो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिंष्टः स बलें हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबेलो अनंपच्युतः। वृवृक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥ वृह्चास्तृंतः॥———[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनमसुंरा बलीयाश्सोऽहन्निति। प्रह्नादों हु वै कायाधवः। विरोचन् स्वं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनं देवा अहन्निति। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्योचुः। नाराजकस्य युद्धमस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेति। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥ तं यंज्ञकृतिभर्नान्वंविन्दन्। तिमष्टिंभिरन्वैंच्छन्। तिमष्टिंभिरन्वं-

विन्दन्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह वै नामं। ता इष्टंय

इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां पृतमांग्रावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपृद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥ ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि स्मारोंहन्। तदंपृद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छ्य्य्वंन्त उपानयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि स्मारोंहन्। तदंपृद्रुत्यांतन्वत। तानिडांन्त उपानयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता पृतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पृव र हि देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुंविन्दन्ति। उपार्श्रूपसदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुंवेत्स्यन्तीति। त उपार्श्रूपसदमतन्वत। तिस्र एव सामिधेनीर्नूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्य। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांपसदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधीड् स्वाहेति। अशुन्यापिपासे हु वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एत॰ हु वाव तच्चंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिघ्नरे। तथों एवैतदेवंविद्यजमानः। तिस्र एव सामिधेनीरनूच्यं। सुवेणांघारमाघार्यं॥४०॥

तिसः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोप्सदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी इस्वाहेतिं। अशनयापिपासे ह वा उग्रं वर्चः। एनश्च वैरहत्यं च त्वेषं वर्चः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजंमानोऽपं हते। तेंऽभिनीयैवाहंः पशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥ तस्मादिभिनीयैवाहंः पशुमा लंभेत। अह्नं एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेंव रात्रेः प्रचंरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उंपवसथीयेऽहं द्विदेवत्यंः पशुरा लेभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ होके यर्जमानः। अस्थिं च मा १ सं च। अस्थिं चैव तेनं मार्सं च यजमानः सङ्स्कुरुते। ता वा एताः पश्च देवताः। अग्नीषोमांवग्निर्मित्रावरुंणौ॥४२॥ पश्चपश्ची वै यर्जमानः। त्वङ्गारसङ् स्नावाऽस्थिं मज्जा।

पृतमेव तत्पंश्वधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मंश्वित। भेषजतांये निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभेश्छन्दोभिः प्रातरंह्वयन्। तस्मौत्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दार्शसे प्रातरनुवाकेऽनूच्यन्ते। तमेतयोपस्मेत्योपासीदन्। उपास्मै गायता नर् इतिं। तस्मोदेतयां बहिष्पवमान उपसद्यः॥४३॥

ऐच्छुन्नन्युः स्तिष्ठन्तेऽन्च्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्य रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिष्ठरे मित्रावर्रुणौ नवं च (देवा यर्जमानो देवा देवा यर्जमानो यर्जमानः प्राचेरं प्रचेरेदालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिष्ठरे भ्रातृंव्यान्॥)॥———[९]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वंलद्भृम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वालः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वैद्यन्तः। तदेतित्रिंशलं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवित्स्तं खेनन्ति। स सुंवर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तं यद्स्या अध्यजनेयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यत्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रद्शेनाहंरन्। यावंती पश्रद्शस्य मात्रां॥४५॥ तर संप्तदशेनाभि प्रास्तुंवत। तर संप्तदशेनादंदत। त संप्तदशेनाहं रन्। यावंती सप्तदशस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्शेनं ह्रियमाणस्य तेजो हरोऽपतत्। तमेकवि॰शेनाभि प्रास्तुंवत। तमंकविश्शेनादंदत। तमंकविश्शेनाहंरन्। यावंत्येकवि १ शस्य मात्रां। ते यत्रिवृतां स्तुवतें॥ ४६॥ त्रिवृतैव तद्यजंमानमादंदते। तं त्रिवृतैव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेर्दहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायुं ज्य र सलोकर्तां गमयन्ति। अथ यत्पं श्रदशेनं स्तुवतें। पश्चदशेनैव तद्यजंमानमादंदते॥४७॥ तं पंश्रदशेनैव हंरन्ति। यावंती पश्चदशस्य मात्रां। चन्द्रमा वै पंश्रद्शः। पुष हि पंश्रद्श्यामंपक्षीयतें। पृश्रुद्श्यामांपूर्यतें। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकर्तां गमयन्ति। अथ यत्संप्तदंशेनं स्तुवतें। सप्तदंशेनेव तद्यजंमानमादंदते। त र संप्तदशेनैव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतेरेवेनं तत्। मात्रा्र् सायुंज्यः सलोकतां गमयन्ति। अथ्

नाचांमेत्॥५०॥

यदेकिविश्शेनं स्तुवतें। एकिविश्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेंकिविश्शेनेव हंरन्ति। यावंत्येकिविश्शस्य मात्रां। असौ वा आंदित्य एकिविश्शः। आदित्यस्येवेनं तत्॥४९॥ मात्राश् सायंज्यश् सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंप्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णाऽभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तत्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ् यदंस्तमेतिं। एतामेव तद्रज्तां कुशीमनुसंविशति। प्रहादों हु वे कांयाध्वः। विरोचन् श्रस्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रंद्रोऽभवत्। तस्मांत्प्रद्रादंद्कं

ये वै चृत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती १षि। य एतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चद्रशः संप्तद्रश एंकिवि १ शः॥५१॥ एतानि वाव तानि ज्योती १षि। य एतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। स्प्तद्रशेनं ह्रियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत् मेतिं। तमृश्विनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कर्म्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यद्श्विभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावरुणयोः पयस्याऽथं। कस्मादेतेषा हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीति। एता ह्येनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भिर्मिषज्य इस्तस्मादिति। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवनेऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन माध्यं दिने सवने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाः स्तृतीयसव्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। एकांदशकपालाः स्तृतीयसव्ने। यज्ञस्यं सलोमृत्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सव्नम्। रुद्राणां माध्यं दिन् सर्वनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसव्नम्। अथ् कस्मांदेतेषाः हृविषामिन्द्रंमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इतिं ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्मिरभिं-

षज्युङ्स्तस्मादितिं॥५४॥

पुक्षिक्ष आंहुस्तृतीयसव्ते प्रांतः सव्तं पश्चं च॥————[११]
तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तस् छन्दंः
स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्।
यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच
प्वावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्त्रराणि
छन्दाङ्स्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदंभवन्॥५५॥

स बृंह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादृशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठिदिति। यानि च छन्दा ईस्यत्यरिच्यन्त। यानि च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वृह्ती। मामेव भूत्वा। मामुप सङ्श्रंयतेति। चतुर्भिरक्षरैरनुष्ठुग्बृंह्तीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैं: पङ्किर्बृह्ती-मत्यरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्यां- दधात्॥५७॥

ते बृंहती एव भूत्वा। बृहतीमुप समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैं रुष्णिग्बृंहतीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैं स्त्रिष्टुग्बृंहतीमत्यं-रिच्यत। तस्यामेतान्यष्टावक्षरांण्यपच्छिद्यांदधात्। ते बृहती एव भूत्वा। बृहतीमुप समंश्रयताम्। द्वाद्शभिर्क्षरैंगायत्री बृहतीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिंरुक्षरै्र्जगती बृहतीमत्यंरिच्यत। तस्यामेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥ ते बृंहती एव भूत्वा। बृहतीमुप समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दा र्सि रथों मे भवत। युष्माभिर्हमेतमध्वानमनु सश्चराणीति। तस्यं गायत्री च जगंती च पक्षावंभवताम्। उष्णिक्नं त्रिष्टुप्च प्रष्ट्यौं। अनुष्टुप्चं पुङ्किश्च धुर्यौं। बृहत्येवोद्धिरंभवत्। स पुतं र्छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानुमनु समंचरत्। एतः ह वै छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु सश्चरित। येनैष एतत्सश्चरंति। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजेते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥ अभव-वाव सा देवाक्षरा बृह्त्यंदधाद्वादंशाक्षराँण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय षद्वं॥———[१२]

अग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रों

दधीचो देवासुराः स प्रजापंतिः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥ अग्नेः कृत्तिका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चृत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अग्नेः कृत्तिका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अनुमत्यै पुरोडाशंमष्टाकंपालं निर्वपति। ये प्रत्यश्चः शम्यांया अवशीर्यन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन पूर्वेण प्रचरित। पाप्मानमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्धैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥ रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्युं च यजमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्यैवैन र् शमयति। नार्तिमार्च्छत्यध्वर्युर्न यजमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋंत्यै भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋंत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥ स्वकृत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै निर्ऋत्या आयतंनम्। स्व एवायतंने निर्ऋतिं निरवंदयते। एष तें निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें हविष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंर्तते। मुश्चेमम १ हंस् इत्यांह। अ १ हंस एवै नं मुश्रति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रंतीक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाहा नमो य इदं चकारेति पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावंर्तन्ते। आनुमतेन प्रचरित। इयं वा अनुमितिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमनुं मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयींष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवींषु च मानुंषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्य समृद्धे। आग्नावेष्ण्वमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवताँश्चैव यज्ञं चार्व रुन्थे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँश्चेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृंद्धौ। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालुं निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहृन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपंति॥६॥ वार्त्रघमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धै। इन्द्रों वृत्र हत्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैंन्द्राग्नमेकांदशकपालमपश्यत्। तिन्नरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्ध। यदैंन्द्राग्नमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनैंन्द्रियं च यजमानोऽवंरुन्धे। ऋष्भो वही दक्षिणा॥७॥
यद्वही। तेनांग्नेयः। यदंषभः। तेनैन्द्रः समृद्धै। आग्नेयमष्टाकंपालं

निर्वपति। ऐन्द्रं दिधे। यदौग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। यज्ञमुखम्विद्धं पुरस्तौद्धत्ते। यदैन्द्रं दिधे॥८॥ इन्द्रियमेवावंरुन्थे। ऋषुभो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनौग्नेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धे। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्ञन्। ताः पर्गंऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयः। ता ईन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैन्द्राग्नो भवत्युज्जित्यै। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासौः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवंरुन्थे। वैश्वदेवश्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्। अन्नमेवास्मै स्वदयति॥१०॥

प्रथम् जो वृत्सो दक्षिणा समृद्धै। सौम्य श्र्यामाकं च्रं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टप्च्यस्य राजां। अकृष्टप्च्यमेवासमें स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धे। सरंस्वत्यै च्रं निर्वपति। सरंस्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धै। एति वा एष यंज्ञमुखाद्याः। योंऽग्नेर्देवताया एति। अष्टावेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखाद्यां अग्नेर्देवतांयै नैति॥११॥

र्ड्युर्निरवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमतिर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय

स्वदयित गावो दक्षिणा समृंद्धौ षद्वं॥———[१]

वैश्वदेवन् व प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजनयेयमिति। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनक्ति यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमानौ। तास्वग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥ सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजनयत्। सरंस्वती वार्चमदधात्। पूषाऽपोषयत्। ते वा एते त्रिः संवत्स्रस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पुष्टिंपतयः। संवत्सरो वै प्रजापंतिः। संवत्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतो ऽघ्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतेतिं॥१३॥

स एतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वे प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मारुतो निरुप्यते। यज्ञस्य क्रुप्त्यै। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वे मुरुतः। गुणुश एवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयित। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवित। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयित। वाजिनमानयित। प्रजास्वेव प्रजातासु रेतों दधाित। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवित। प्रजा एव प्रजाता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परिं गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रं यजत। मया मुख्नासुंराञ्जेष्यथेति। मां द्वितीयमिति सोमोंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेति। मां तृतीयमिति सिवता। मया प्रसूता जेष्यथेति। मां चेतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धांस्यामीति। मां पेश्चममिति पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेति॥१७॥

तैंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १ विं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पशवंः॥१८॥

ऐदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीत्प्रतिष्ठयां जेष्य्थेत्येतर्हिं पृशवंः॥———[२]

त्रिवृद्धर्हिर्भवति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवति। एकं इव् ह्ययं लोकः॥१९॥ प्रथमजामेव पृष्टिमवंरुन्थे। प्रथमजो वृत्सो दक्षिणा समृद्धे। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो व पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्थे। पृश्रगृहीतं भविति। पाङ्का हि पृशवंः। बहुरूपं भविति॥२०॥ बहुरूपा हि पृशवः समृद्धे। अग्निं मंन्थिन्ति। अग्निमृंखा व प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थंन्ति। अग्निमृंखा अग्निमृंखा पृव तत्प्रजा यजमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी १षिं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतिंतिष्ठति। प्रसुवों भवन्ति।

त्रिष्शत्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्थयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृश्भिः समर्धयति। यदल्पंमानयंत्। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्बह्वांनयंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंअन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवैनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यर्जमान्स्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यर्जमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि र्जुहोति। यर्जमानमेव सुंवर्गं लोकं गमियत्वा। तेर्जसा समर्थयति। यर्जमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाक्षोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। सुचा जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रे। यत्प्राङ्घवेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पिंतृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा रेसि युज्ञर हंन्युः। यदुदङ्कं। मनुष्यलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतितिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवंः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥ वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजित। अथो खल्वांहुः। छन्दा ५सि वै वाजिन इतिं। तान्येव तद्यंजित। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरीं सोमुपानौं। तयोः परिधयं आधानम्। वार्जिनं भागधेयम्॥२७॥ यदप्रहत्य परि्धीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहृत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छति। ब्रहिषिं विषिश्चन्वाजिन्मा नंयति। प्रजा वै ब्रहिः। रेतो वार्जिनम्। प्रजास्वेव रेतों दधाति। सुमुप्हूयं भक्षयन्ति। पुतत्सोमपीथा ह्यंते। अथों आत्मन्नेव रेतों दधते। यर्जमान उत्तमो भंक्षयति। पुशवो वै वार्जिनम्। यर्जमान एव पश्नप्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥ लोको बंहुरूपं भंवत्याज्यंभागौ पुशव आज्यंमवद्येदांहवनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यों

प्रजापितः सिवता भूत्वा प्रजा असृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अस्मादपाँकामन्। ता वर्रुणो भूत्वा प्रजा वर्रुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रुणगृहीताः। प्रजापितुं पुन्रुपाधावन्नाथिम्च्छमानाः। स एतान्य्रजापितिर्वरुण-प्रघासानपश्यत्। तां निर्वपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुञ्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यंक्र आसींत्। स्व्यः प्रसृंतः। स एतां द्वितीयाँन्दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयाँन्दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्माँचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं श्लोक उभयाबांहुः। यज्ञाभिंजित् इ ह्यंस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्माचातुमास्ययाज्यमुष्पिक्षाक उभयाबाहुः। युज्ञााभाजतुङ् ह्यंस्य। पृथमात्राह्नेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥
तस्मांत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तंरस्यां वेद्यांमृत्तरवेदिमुपं वपित।
पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावंरुन्थे। अथो यज्ञपुरुषोऽनंन्तिरत्यै। पृतद्भौह्मणान्येव पश्चं ह्वीश्षिं। अथेष ऐन्द्राग्नो
भवति। प्राणापानौ वा पृतौ देवानौम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो
भवति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्थे। ओजो बलं वा पृतौ देवानाँम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलमेवावं रुन्थे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमशौ भवतो मेध्यत्वायं॥३२॥ शुमीपुर्णान्युपं वपित। घासमेवाभ्यामिपं यच्छित। प्रजापितमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं शुतेध्मेन हृविषा-ऽन्नाद्यमवारुन्थ। यत्परः शुतानिं शमीपुर्णानि भवंन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। सौम्यानि वे क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयित। यत्क्रीरांणि भवंन्ति। सौम्ययैवाहंत्या दिवो वृष्टिमवंरुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चित। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चित॥३३॥

निरुप्यन्ते भवतो भवंति मेध्यत्वायं रुन्धे षद्वं॥-----[४]

उत्तरस्यां वेद्यांम्न्यानिं ह्वी १ षिं सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अप्धुरमेवैनां युनक्ति। अथो ओजं पुवासामवं हरति। तस्माद्धह्मणश्च क्षुत्राच् विशों उन्यतो उपक्रमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचंरति। अनृंतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वरुणमवं यजते। यदेवाध्वर्यः करोतिं॥ ३४॥ तत्प्रंतिप्रस्थाता करोति। तस्माद्यच्छ्रेयांन्करोति। तत्पापीयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति।

अथो तपं एवैनामुपं नयति। यञ्जारः सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञातिः रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवैनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयित। अह्नतैवैनांम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वींयो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार्थं सवीर्यत्वायं। यद्ग्रामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यज्मानदेवत्यो वा आहवनीयः॥३६॥ भ्रातृव्यदेवत्यो दक्षिणः। यदांहवनीयं जुहुयात्। यजंमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पण जुहोति। अन्यंमेव वर्रणमवं यजते। शीर्षत्रिधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वर्रणमवं यजते। शीर्षत्रिधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वर्रणमवं

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत इत्यांह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदांह। वरुणगृहीतं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते।

यजते। प्रत्यङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

तुषाश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वर्रुणगृहीतेनेव वर्रुणमवंयज्ञते। अपोऽवभृथमवैति॥३८॥ अप्सु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवंयज्ञते। प्रतियुतो वर्रुणस्य पाश् इत्याह। वर्रुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतिक्षमा यन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौऽस्येधिषीमहीत्याह। समिधैवाग्निं नमस्यन्तं उपायन्ति। तेजोऽसि तेजो मिये धेहीत्याह। तेजं पुवात्मन्धंत्ते॥३९॥

क्रोतिं ग्राहयत्याहवनीयस्तिष्ठं जुहोत्यूपोंऽवभृथमवैति धत्ते॥————[५]

देवासुराः संयंता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींकवती तन्ः। तां प्रीणीत। अथासुरान्भि भंविष्यथेति। ते देवा अग्नयेऽनींकवते पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकान्य-जनयत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुराः॥४०॥

जनयत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥४०॥
यद्ग्रयेऽनीकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति।
अग्निमेवानीकवन्त्र् स्वेनं भाग्धेयेन प्रीणाति।
सौऽग्निरनीकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चृतुर्धाऽनीकानि
जनयते। असौ वा आंदित्यौऽग्निरनीकवान्। तस्यं र्षमयो-

ऽनीकानि। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनीकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावापृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरुं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवी-भ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरुं निर्वपति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तदुंभ्यतो यजंमानो भ्रातृंव्यान्त्सन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्ठं तपंति। चुरुर्भवति। सूर्वतं पृवैनान्त्सन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वांसान्दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिंता एवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेति। स शृतोऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्वन्। न हि देवा अहुंतस्याश्वन्ति। तैंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इति। मुरुद्धों गृहमे्धिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमे्धिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाक्त्रा क्रियतें। पृश्व्यं तत्। पाक्त्रा वा पृतिक्रंयते। यन्नेध्माब्र्हिर्भवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥ न प्रयाजा इज्यन्तें। नानूयाजाः। य एवं वेदं। पृश्वमान्भंवति। आज्यंभागौ यजति। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। मुरुतों गृहमेधिनों यजति। भागुधेयेंनैवैनान्त्समंध्यति। अग्निइस्वंष्टकृतंं यजित प्रतिष्ठित्यै। इडान्तो भवति। पृशवो वा इडां। पशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतितिष्ठति॥४५॥

असुरा अश्रयन्गृहमेधीयं चुरुं निरंवपन्नजुहवुर्न्वाहेडाँन्तो भवति द्वे चं॥———[६]

यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहमेध्येव स्याँत्। वि त्वंस्य यज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्याँश्जीयात्। गृहमेध्येव भवति। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धाते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आश्वेताभ्येश्वत। अनुं वृत्सानेवासयन्। तेभ्योऽसुंराः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंरान्पुनंरगच्छत्। गृह्मेधीयेंनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आश्वेतऽभ्यंश्वते॥४७॥

अनुं वृत्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं

प्रहिंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेतिं। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तत। गृहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावर्तते। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनैवैन् समंध्यति। ऋष्भमाह्वयति। वृषद्भार एवास्य सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्का। इन्द्रो वृत्र हत्वा। परां परावतंमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यंमानः। सौऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीतिं। तेऽब्रुवन्मुरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिविर्निरुप्याता इतिं। त एंनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिविर्निरुप्यते विजित्ये। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वे लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्त्समृंद्धो। एतद्ग्राह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। एतद्ग्राह्मण ऐन्द्राग्नः। अथेष ऐन्द्रश्चरुर्भविति॥५०॥ उद्धारं वा एतिमन्द्र उदंहरत। वृत्र हत्वा। अन्यासुं देवतास्वर्धि। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजमान् उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्वर्धि। वैश्वकुर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माणि यजमानोऽवंरुन्थे॥५१॥

कृष्यते असे जहोति वृणामहै भवत्युष्टी चं॥———[७] वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुण-प्रघासेर्वरुणपाशादमुश्चत्। साक्रमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्।

रुद्र निरवादयत। पितृयुज्ञेन सुवुगे लोकमगमयत्। यद्वैश्वदेवेन यजेते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मुंश्चति। साक्मेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यम्बकै रुद्रं निरवंदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयित। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपित। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपेत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। अथो यदेव दक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणार्वत्। सोमांय पितृमते पुरोडाश् ष्टूंपालं निर्वपित। संवत्सरो वै सोमंः पितृमान्॥५३॥

संवृत्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्भों धानाः। मासा

वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुंषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं छोके भविति। बहुरूपा धाना भविन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पितृभ्यौंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरौंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥ अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भविति। सा हि

अधुमासान्व प्राणाता आमुबान्याय दुग्ध मवाता सा हि पितृदेवृत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्युर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एक्योपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनार्भ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरश्चेज्यन्तै। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मध्यतोंऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भेवित व्यावृत्त्ये। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मनुष्यलोकात्। यत्परुषि दिनम्। तद्देवानांम्। यदंन्तरा। तन्मंनुष्यांणाम्॥५७॥

यत्समूलम्। तत्पंतृणाम्। समूलं ब्र्हिर्भवित् व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षद्भम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। यत्प्रंस्त्रं यजुंषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानांयतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिदध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न पंरिद्ध्यात्। रक्षारंसि य्ज्ञर हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्यै। अथो मृत्योरेव यजंमान्मुत्सृंजित। यत्रीणि त्रीणि ह्वी इष्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषार साकं प्रमीयेरन्। एकैं कमनूचीनांन्युदाहंरन्ति। एकैं क पृवैषांमन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपं कशिप्व्यांय। उपबर्हंणमुपबर्ह्ण्यांय। आञ्चनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्चनमभ्यञ्चन्यांय। यथाभागमे-वैनांन्प्रीणाति॥६०॥

निरवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थृत्यखाता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते

पश्चं च॥_______[८]

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायानुं ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञप्रुषोरनंन्तरित्यै। नार्षेयं वृंणीते। न होतांरम्॥६१॥ यदांर्षेयं वृंणीत। यद्धोतांरम्। प्रमायंको यज्ञमानः स्यात्। प्रमायंको होतां। तस्मान्न वृंणीते। यज्ञमानस्य होतुंगींपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजित। प्रज्ञा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्संजित। आज्यंभागौ यजित॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुंरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतुमवं द्यति॥६३॥

ऋतूनाः सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं एवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंया- ऽत्यानंयति। रात्रियै द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतोऽवदायं। उद्दुःतिं क्रामति व्यावृत्त्यै॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयति। अस्तुं स्वधेतिं प्रत्याश्रांवयति। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रें यजति। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजति। संवत्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवत्सरमेव तद्यंजति। पितृन्वंहिषदों यजति॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजिति। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य पुव पितृणाम्ग्निः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। तादृगेव तत्। एतते तत् ये च त्वामन्विति तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृंह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तैं। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्रो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मंनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृश्मनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आहवनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्येवास्मै तद्भुवते। यत्सत्याहवनीये। अथान्यत्र चरंन्ति। आतमिंतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्निरवंदयन्ते। अन्तुं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतर्मितोरुप तिष्ठंन्ते। सुसुन्दर्शं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥ प्राणो वै सुंसन्हक्। प्राणमेवात्मन्दंधते। योजा न्विंन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनंरयुक्त। अक्षन्नमींमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमींमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह इति वावैतदांह। अमींमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥ अथों तर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पशुभिः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावनूयाजौ यंजित। प्रजा वै ब्रहिः। प्रजा पुव मृत्योरुत्सृंजति। चतुरंः प्रयाजान् यंजति। द्वावंनूयाजौ। षद्भम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयोजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यत्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयाजयन्ति। पित्रंयै गोपीथायं॥७०॥

होतांरमाज्यंभागौ यजित् सन्तंत्मवंद्यति व्यावृत्त्यै बर्हिषदों यजित् तमेव तद्यंजृत्यनु

निष्क्रांमन्त्याहैनानृतवो नवं च॥

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपति। जाता एव प्रजा

रुद्रान्निरवंदयते। एकमतिंरिक्तम्। जनिष्यमांणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एकधैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयेंत्। अन्तरवचारिण ई रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

तिद्धि रुद्रस्यं भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अपशुकांया आहुंत्यै नातिष्ठत। असौ तें पशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आृखुस्तें पशुरितिं ब्र्यात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्तिं। नार्ण्यान्। चृतुष्पृथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पड्वीशो नामं। अग्निवत्येव जुहोति। मध्यमेनं पर्णेनं जुहोति। सुग्घ्यंषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होतव्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

एष तें रुद्र भागः सह स्वस्राऽम्बिकयेत्यांह। शरद्वा -अस्याम्बिका स्वसा। तया वा एष हिनस्ति। य हिनस्ति।

तयैवैन १ सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावंन्त एव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषुजं कंरोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगस्य लीप्सन्ते। मूर्तेकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतंऽवसं करोति। ताहगेव तत्। एष तं रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्यै। अप्रंतीक्षमा यंन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्यै। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं च्रं पुन्रेत्य निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयान्त्रिरवंदयते शास्ते सिश्चित् षद्वं॥-----[१०]

अर्नुमत्ये वैश्वदेवेन् ताः सृष्टास्त्रिवृत्य्रजापंतिः सिवृतोत्तंरस्यान्देवासुराः सौँऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन् ता वंरुणप्रघासैरुग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दशं॥१०॥

अर्नुमत्यै प्रथम्जो वृत्सो बंहुरूपा हि पृशवृस्तस्मांत्पृथमात्रं यद्ग्नयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥

अनुंमत्यै प्रतिंतिष्ठन्ति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुतद्वाँह्मणान्येव पश्चं हवी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपति। संवत्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्यै प्रदापयिता। स पुवास्मै वृष्टिं प्रदापयति। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं ल्लोके वृष्टिर्धृता। स एवास्मै वृष्टिं नियंच्छति॥१॥ द्वादशग्व सीरं दक्षिणा समृद्धौ। देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणास्रानिभंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकेरिष्य इतिं। स त्रेधा-ऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सौंऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रौंऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभवत्। तदिन्द्रतुरीयस्थैन्द्रतुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥ वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांग्रेयी। यद्गोः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यत्स्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी समृंद्धै। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥

त र सृष्ट रक्षा ईस्यजिघा र सन्। स पृताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निर्रमिमीत। ताभिवें स दिग्भ्यो रक्षा रेसि प्राणुंदत। यत्पंश्वावृत्तीयं जुहोतिं। दिग्भ्य पृव तद्यजंमानो रक्षा रेसि प्रणुंदते। समूंढ र रक्षः सन्दंग्ध र रक्ष इत्यांह। रक्षा ईस्येव सन्दंहित। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य पृव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धे॥५॥

इन्द्रों वृत्र १ हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नालंभत। तर शृच्यांऽगृह्णात्। तौ समंलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरो-ऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सन्धार सन्दंधावहै। अथ् त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्कंण नार्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमिति। स पृतम्पां फेनेमसिश्चत्। न वा पृष शुष्को नार्द्रो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा पृतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं ल्लोके। अपां फेनेन शिर् उदंवर्तयत्। तदेन्मन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स पृतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षाङ्स्यपाहतः। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपहत्यै। पृकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे रक्षंसां भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षांश्रीस हन्ति॥८॥

स्वकृत इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वे रक्षंसामायतनंम्। स्व एवायतंने रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मणेव रक्षा रेसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रमुव इत्याह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा रेसि हन्ति। हृत र रक्षो-ऽविधिष्म रक्ष्म इत्याह। रक्षंसा र् स्तृत्यें। यद्वस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्ये। अप्रतीक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्नतर्हित्ये॥९॥

युच्छुति वरुंणं तृतीयं विजित्या असृजत् समृंद्धौ हनो मित्रंद्रुगिति हन्ति स्तृत्यै त्रीणि च॥[१]

धात्रे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवृत्सरो वै धाता। संवृत्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुमितिर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपति। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्णवं त्रिकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रंः। वीर्यं विष्णुंः। प्रजा एव प्रजांता वीर्यें प्रतिष्ठापयति। तस्मौत्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्मो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँग्नेयः। यदंषभः॥११॥ तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धौ। अग्नीषोमीयमेकां-दशकपालं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकादशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥ अग्निः प्रजां प्रजानयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। बभुर्दक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं चरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रंजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं पुवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पश्न्प्रजंनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुभंवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धै। बहु वै

पुर्रुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वानरं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवत्सरो वा अग्निर्वैश्वानरः। संवत्सरेणैवैन ई स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

पवित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्। बहु वै राजुन्योऽनृतं करोति। उपं जाम्यै हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वदत्यनृंतम्। अनृते खलु वै ऋियमाणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं येवमयं चरु निर्वपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्चति। अश्वो दक्षिंणा। वारुणो हि देवतयाऽश्वः समृंद्धौ॥१५॥

पुन्द्रावैष्णुवमेकांदशकपालुं यहंषुभो दर्धाति पूषा पुशून्प्रजनयति हिरंण्युं दक्षिणा दक्षिणैकं

रिनामेतानि हवी १ षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारः। एतेंऽपादातारंः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। येंऽपादातारंः। त एवास्मै राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भंवति। यत्संमाहृत्यं निर्वपेता अरंब्रिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रब्रित्वायं॥१६॥ यत्सद्यो निर्वपेत्। यावंतीमेकंन हविषाऽऽशिषंमव रुन्धे। तावंतीमवंरुन्धीत। अन्वहन्निवंपति। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्धे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं चुरुं निर्वपिति ब्रह्मणों गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रम्न्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥ ऐन्द्रमेकांदशकपाल र राज्ञन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋष्मो दक्षिणा समृद्धौ। आदित्यं चरुं मिहंष्यै गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुदिक्षंणा समृद्धौ। भगांय चरुं वावातांयै गृहे। भगंमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दिक्षंणा समृद्धौ॥१८॥

नैर्ऋतं चुरुं परिवृत्त्यै गृहे कृष्णानां व्रीहीणां नुखिनिर्भिन्नम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धे। आग्नेयमृष्टाकंपाल समृद्धे। या्रुगं दक्षिणा समृद्धे। वा्रुणं दश्वंकपाल स्सूतस्यं गृहे। व्रुणस्वमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धे। मा्रुत स्माकंपाल ग्रामण्यो गृहे॥१९॥ अन्नं व म्रुतंः। अन्नमेवावं रुन्थे। पृश्चिदिक्षिणा समृद्धे। अन्नं व म्रुतंः। अन्नमेवावं रुन्थे। पृश्चिदिक्षिणा समृद्धे।

अत्र व मुरुतः। अन्नम्वाव रुन्या पृश्युदाक्षणा समृद्धा सावित्रं द्वादेशकपालं क्षुत्तुर्गृहे प्रसूँत्यै। उप्ध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धै। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥ अन्नं वै पूषा। अन्नमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धै। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तृत एव रुद्रं निरवंदयते। शुबल उद्वारो दक्षिणा समृद्धौ। द्वादंशैतानि ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मै र्षष्ट्रमवंरुन्धे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥ यन्न प्रंति निर्वपेत्। रुबिनं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपति। इन्द्रांय सुत्राम्णे पुरोडाशमेकांदशकपालम्। इन्द्रांया १ होमुचैं। आशिषं एवावंरुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भवति। श्वेतायै श्वेतवंत्सायै दुग्धे॥२२॥ बार्हस्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्हस्पत्येन पूर्वेण प्रचरित। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बुर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै। तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंत्सा दक्षिणा

समृंद्धौ॥२३॥

र्िाबृत्वाय समृद्धै पष्टौही दक्षिणा समृद्धै ग्रामण्यों गृहे भागदुघस्यं गृहे भविति दुग्धेंऽभिजिंत्यै

देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्मैं स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एंन १ सुवन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ सुवते। सोमो वनस्पतींनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिंवीचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः सत्यानौम्॥ २४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वां प्रस्वानारं सुवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानंराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार् राजेत्यांह। तस्मात्सोमंराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिंदधाति। स्वां तनुवं वर्रुणो अशिश्रेदि-त्यांह। वरुणस्वमेवावंरुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिंमेवेनं व्रत्यंं करोति। अमंन्मिह मह्त ऋतस्य नामेत्यांह। मृनुत एवेनम्ं। सर्वे व्राता वर्रुणस्याभूवित्रत्यांह। सर्वव्रातमेवेनं करोति। वि मित्र एवेररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अर्रातिमैवैनं तारयति। असूषुदन्त यृज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वद्यंत्येवैनम्। व्यं त्रितो जंरिमाणं न आन्डित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्रीषोमीयस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं ह्विषांमृग्नयें स्वष्टकृते समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुकृमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्लोकान्भि-जंयति॥२७॥

स्त्यानांमध्यित्यांहातागृदित्यांह कमत् एकं चा-----[४] अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों हिविष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा॰ राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंमभिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। व्रजिक्षितः स्थेत्याह। एता वा अपां विशेः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मरुतामोजः स्थेत्याह। अन्नं वै मरुतः। अन्नमेवावंरुन्धे। सूर्यंवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥ राष्ट्रमेव वेर्चस्व्यंकः। सूर्यत्वचसः स्थेत्याह। सत्यं वा एतत्। यद्वर्षिति। अनृतं यदातपंति वर्षिति। सत्यानृते एवावंरुन्धे। नैन र सत्यानृते उंदिते हि र्स्तः। य एवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥ वाशाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव वश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्याह। पशवो वै शक्वरीः। पशूनेवावंरुन्थे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पंयुस्व्यंकः। जनुभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्यौः स्थेत्यांह॥३१॥ राष्ट्रमेव तेंजस्व्यंकः। अपामोषंधीना् रस्ः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव मंधव्यंमकः। सारस्वतं ग्रहंं गृह्णाति। पुषा वा अपां पृष्ठम्। यत्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन ५ समानानां करोति। षोडशभिंगृह्णाति। षोडशकलो वै पुरुषः। यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोडशभिंर्जुहोतिं षोड्शभिंगृह्णाति। द्वात्रिर्श्यत्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिर्श्यदक्षरा-ऽनुष्टुक्। वागंनुष्टुप्सर्वाणि छन्दार्श्स। वाचैवैन्र् सर्वेभिश्छन्दोभिरभिषिश्चिति॥३२॥

क्रिंगित्यांह सूर्यवर्षमः स्थत्यांह ब्रह्मवर्ष्ट्रस्थकस्तेज्स्याः स्थत्यांहेव पुरुषः पद चं॥—[५] देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीिभः सृज्यध्विमित्यांह। ब्रह्मणैवैनाः स॰सृंजित। अनांधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवैनाः स०स्ंजित। अनांधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवैनाः सादयित। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनश्च सादयित। आग्नेयो व होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभयतो राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिरण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्ये हि पवित्रांभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृत्त्ये॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्र्ं ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुः। तृपोजा इत्यांह। तृपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रम्सीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र॰ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र॰ हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत १ हिरंण्यम्॥ ३५॥

स्वाहां राज्यसूयायेत्यांह। राज्यसूयांय ह्यंना उत्पुनाति। सधमादों द्युम्निनीरूर्ज एता इतिं वारुण्यर्चा गृह्णाति।

वरुणस्वमेवावं रुन्थे। एकंया गृह्णाति। एक्धेव यर्जमाने वीर्यं दधाति। क्षत्रस्योल्बंमिस क्षत्रस्य योनिंर्सीतिं ताप्यं चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः पंवयति। शतायुर्वे पुरुषः शतवींर्यः। आत्मैकंशतः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शष्पांण्याशयति। सुरांबितमेवेनं करोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः।
मित्रावर्रुणौ प्राणापानाभ्याम्। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्।
स दिवंमिलखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आवित्रे
द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स
आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आवित्रे
द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रस्तो यर्जमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविंन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्यांह। इयं वै देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। आविंन्नोऽयमसावांमुष्यायणौंऽस्यां विश्यंस्मित्राष्ट्र इत्यांह। विशैवैन ५ राष्ट्रेण समर्धयति। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानेराज्यायेत्याह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। एष वों भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना १ राजेत्यां ह। तस्मात्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥ इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छति विजित्यै। शत्रुबार्धनाः स्थेतीषून्। शत्रूनेवास्यं बाधन्ते। पात माँ प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो वै शंरव्याः। प्रतीचीं तिरश्चनूचीं। ताभ्यं एवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य पुवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाुष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्टुमां बाह् उद्गृह्णाति। इन्द्रियं वै वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यावृत्त्यै दात्रम्सीत्यांहामृत्र् हिरंण्यमेकश्तो गंमयन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चुत्वारि

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रकामैंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मन्साऽनु प्रकांमित। अभि दिशों जयति। नोन्माँद्यति। सुमिधुमा तिष्ठेत्यांह। तेजं पुवावंरुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावंरुन्थे। विराज्मातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावंरुन्थे। उदीचीमा तिष्ठेत्यांह। पृश्नेवावंरुन्थे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनून्निंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री॥४२॥

मारुत एष भंवति। अत्रुं वै मुरुतः। अत्रमेवावंरुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्येरेव पृशुभिरारण्यान्पृशून्परि गृह्णाति। तस्माँद्राम्यैः पृशुभिरारण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिवैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥ स राष्ट्रं नाभवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्।

तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोति। राष्ट्रमेव भवति। बार्ह्स्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भवति। ऐन्द्रमुत्तरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति॥४४॥

षद्वुरस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षडुपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपांव्याधो भवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं पृवेनमवंयजते। तस्माद्राज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वे। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

क्षे समंध्य असिच्यत स्थापयित जायते पश्चं चा [७] सोमंस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भ्यादिति शार्दूल-चर्मापंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँर्दूले। तामेवावंरुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँर्दूलः। अमृत्र् हिरंण्यम्। अमृतंमिस मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यम्पाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्थत्ते। श्वतमांनं भवति॥४६॥ श्वतायुः पुरुषः श्वतिन्द्र्यः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिधे निदंधाति। उभयतं एवास्मै

विध्यति। दन्दशूकांनेवावंयजते। तस्मांत्क्रीबं दंन्दशूका द शुंकाः। निरंस्तं नमुंचेः शिर इतिं लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानंमेव नमुंचिं निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥ सोमो राजा वर्रणः। देवा धर्मसुवश्च ये। ते ते वाच ५ सुवन्तां ते ते प्राण र सुवन्तामित्याह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिंश्वति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिंश्वामीतिं। तेजस्वयेव स्यांत्। दुश्चर्मा तु भवत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुषः॥४८॥ स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चति। अग्नेस्तेजसेत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्याह। वर्च एवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावर्रुण-योवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोजुसेत्यांह॥४९॥ ओर्ज एवास्मिन्दधाति। क्षत्राणां क्षत्रपंतिरसीत्यांह। क्षत्राणांमेवैनं क्षत्रपंतिं करोति। अतिं दिवस्पाहीत्यांह। अत्युन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नधरागुदींचीरित्यांह।

शर्म दधाति। अवैष्टा दन्दशूका इति क्लीब॰ सीसेन

राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवर्मकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं हुरेत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रं यत्ते ऋयी परं नामेत्यांह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिनस्ति। यश हिनस्ति। तेनैवैन सह शंमयति। तस्मै हुतमंसि यमेष्टं मुत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादिति। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन वैश्यंः। विशंमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन जन्यः। मित्राण्येवास्मै कल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥ भवत्याहुः पुरुष् ओज्सेत्यांह निर्वदयते यजते जन्यो हे चं॥———[८]

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युनुज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। ह्रौ संव्येष्ठसार्थी। षद्गम्पंद्यन्ते॥५३॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनिक्तः। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ छोकान्भिजंयति। यः क्षित्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भविति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

म्रुतां प्रस्वे जेष्मित्यांह। म्रुद्धिरेव प्रसूत उज्जयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैप्सीत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनौकान्त एवाक्रमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यो राजन्यं जिनाति। सम्हिमिन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥ इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंत्ते। पृशूनां मृन्युरंसि तवेव मे

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंते। पृशूनां मृन्युरंसि तवेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृशूनां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंशूनां मृन्युमात्मन्धंते। अभि वा इय स्पृष्वाणं कामयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादातोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानौत्यै॥५६॥

नमों मात्रे पृथिव्या इत्याहाहि सायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्में धेहीत्यांह। आयुंरेवात्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवात्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह। वर्चे एवात्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मां चतुर्जुहोति। यदुमौ सहावृतिष्ठंताम्। समानं लोकिमियाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथ्वाहंने रथ्मादंधाति। सुवृगदिवेनं लोकादन्तर्दधाति। हु सः श्रुंचिषदित्यादंधाति। ब्रह्मणैवेनं मुपावृहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिच्छन्दसाऽऽदंधाति। अतिच्छन्दा व सर्वाणि छन्दा स्ति। सर्वेभिरेवेनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदितंच्छन्दाः। यदितंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्म् वा प्षा छन्दंसाम्। यदितंच्छन्दाः। यदितंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्म् वे॥ सम्। नानां करोति॥५८॥ प्रमुन्ते व्यक्ति वर्ष्मेलेयाहानांत्ये प्रतिष्ठित्ये ब्रह्मणाऽऽदंधाति स्म चे॥ [९]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यांमेवेनंमुपावंहरति। मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रो वै दक्षिणः। वारुणः स्वयः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनौं भाग्धेयंमुपावंहरति। समृहं विश्वेंद्वेरित्यांह॥५९॥ वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्षत्रस्य नाभिरसि

वैश्वदेव्यो वै प्रजाः। ता पृवाद्याः कुरुते। क्ष्रतस्य नाभिरिस क्षत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुणः पुस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्रांज्यमेवैनश् सुक्रतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। स्वितारंमेवेनश् सृत्यसंवं करोति॥६०॥ ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोऽसि सृत्यौजा इत्यांह।

इत्याहा सावतारम्बनः स्त्यसव कराता हि। ब्रह्मा(३)न्त्वः राजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोऽसि स्त्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवैनः स्त्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वः राजन्ब्रह्माऽसि मित्रोऽसि सुशेव इत्यांह। मित्रमेवैनः सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वः राजन्ब्रह्मासि वरुणोऽसि स्त्यधर्मेत्यांह। वरुणमेवैनः सत्यधर्माणं करोति। स्विताऽसि सत्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरति। इन्द्रोऽसि सत्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति॥६१॥

मित्रोऽसि सुशेव इत्याह। जर्गतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दा रेसि। सत्यमेवावंरुन्थे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्याह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते प्वावंरुन्थे॥६२॥

नैन र् सत्यानृते उदिते हि इस्तः। य एवं वेदे। इन्द्रेस्य वज्रोऽिस् वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छिति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेणेवास्मां अवरप्र १ रन्थयित। एव १ हि तच्छ्रेयः। यदस्मा एते रध्येयः। दिशोऽभ्यंय १ राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छिति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवेनं करोति॥६३॥ ओदनमुद्भवते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोदनः। प्रमामेवेन् इ

श्रियं गमयित। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्ग्लाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आशिषंमेवेतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवेनं मुश्लित। प्रः शृतं भंवित। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंवि शितिकपालस्य वैश्वदेव्यै चामिक्षांया अग्नये स्वष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभयतः परिं गृह्णाति।

अपान्नम्ने स्वाहोर्जो नम्ने स्वाहाऽग्नये गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्याह सत्यसंवं करोति त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति सत्यानृते एवावंरुन्धे करोति श्तोन्द्रियः

षट् चं॥____

-[१०]

पृतद्ग्राह्मणानि धात्रे रिवनान्देवसुवाम्र्थेतो देवीर्दिशः सोम्स्येन्द्रंस्य मित्रो दर्शा॥१०॥ पृतद्ग्राह्मणानि वैष्ण्वं त्रिंकपालमत्रुं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थांपयृत्युदंह्वरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ राजञ्जतुष्यष्टिः॥६४॥

पुतद्वाँह्मणानि प्रतितिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धिन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तत्स्र सृद्धिरन् समंसर्पत्। तत्स्र सृपारं सरसृत्त्वम्। अग्निनां देवनं प्रथमेऽहृन्ननु प्रायुङ्का। सरंस्वत्या वाचा द्वितीयें। स्वित्रा प्रंस्वनं तृतीयें। पूष्णा प्रशुभिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवनं षष्ठे। वर्रुणेन् स्वयां देवतंया सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञां ऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनां ऽऽप्रोत्। यत्म् रस्पो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुखे। पुरस्तां दुप्सदा र्स् सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वेष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्ततः प्रतितिष्ठति॥२॥

जामि वा एतत्कुंर्वन्ति। यत्सुद्यो दीक्षयंन्ति सुद्यः सोमं

क्रीणिन्ति। पुण्डिरिस्रजां प्रयंच्छुत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अप्सु दींक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डिरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दींक्षात्पसी अवंरुन्धे। दृशभिवत्सत्रैः सोमं क्रीणाति। दशांक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्क्रा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दशपेयों भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सप्तदशः स्तोत्रं भविति। सप्तदशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशाविध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुकार होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं प्रस्तोतृप्रतिहृतृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥ द्वादंश पष्ठौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावंरुन्थे। वशां मैत्रावरुणायं।

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुंरेवावंरुन्धे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छुर्सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रिया-व्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्याम्। प्वित्रं पुवास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वरुणमवं यजते॥६॥ अनुङ्वाहंमुग्नीधें। वहिर्वा अनुङ्वान्। वहिरुग्नीत्। वहिंनैव वहिं यज्ञस्यावंरुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं पर्ग-ऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सर्रस्वती तृतींयम्। भार्गवो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। वारवन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सारस्वतीरपो गृंह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुख्ये। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यर्५ श्रयति। वारवन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥ विराद्रुजापंतिरर्श्वः प्रजापंतेरास्यै यजते ब्रह्मसामं भंवति सप्त चं॥————[२] ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पत्यमभिघांरयति। यजमानदेवत्यों वै बृहस्पतिः। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयति॥८॥ आदित्यां मुल्हां गुर्भिणीमा लेभते। मारुतीं पृश्विं पष्ठौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरित। मा्रुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरांदित्याया आश्रांवयति। उपा्रशु मांरुत्यै। तस्मांद्राष्ट्रं विशमितंवदित। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेविन्द्रियाव्यंकः। अगुर्भा मांकृती। विश्वे मुरुतः। विश्वंमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधायं। अनृतेनासुरानभ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः सत्यमवांरुन्धत॥१०॥

यदिश्वभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपंति। अनृतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवंरुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे चरुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। सिवृत्रे सत्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादेशकपालं प्रसूत्ये। दूतान्प्रहिंणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्वश् शुंष्कदृतिदंक्षिंणा समृद्धौ॥११॥

आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्मौद्धस्नतं व्यवसायादयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्मौत्पुरस्ताद्यवानाः सवित्रा विरुन्धते। बार्ह्स्पत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्रं द्वादंशकपालम्। तस्मां अघन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपश्चाला यांन्ति। सार्स्वतं चुरुं निर्वपति। तस्मांत्प्रावृष् सर्वा वाचों वदन्ति। पौष्णेन् व्यवंस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृंता आसते। क्षेत्रपृत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँ स्येतानि ह्वी १ वि निरुप्याणीत्यां हुः। तेनै वर्तृ न्प्रयं क्क्षं इतिं। अथो खल्वां हुः। कः संवत्सरं जीविष्यतीति। षडेव पूर्वे द्युर्निरुप्यांणि। षडुं त्तरे द्युः। तेनै वर्तृ न्प्रयं क्कें। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तरं उत्तरेषाम्। संवत्सरस्यैवान्तौ युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री॥१४॥ व्याष्ट्रम् हाकेपालं दक्षते युनक्तेकं च॥———[४]

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धिन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स

यत्प्रेथमं निरष्ठीवत्। तत्क्वेलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदेरम्। यत्तृतीयम्। तत्ककन्धुं। यन्नस्तः। स सिश्हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूलः। यत्कर्णयोः। स वृक्तः। य ऊर्धः। स सोमः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुद्धे। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावंरुन्थे। त्रयो ग्रहाँः। वीर्यमेवावंरुन्थे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिद्श्मी। प्राणा इन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्थंते। सीसेन क्रीबाच्छष्पाणि कीणाति। न वा एतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥ यत्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुरा। यत्सीत्राम्णी समृंद्धौ। स्वाद्वीन्त्वां स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृंष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीं: क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुत्मिति यजुंषा पुनाति व्यावृत्त्यै। प्वित्रेण पुनाति। प्वित्रेण हि सोमं पुनन्ति। वारेण शश्वंता तनेत्यांह। वारेण हि सोमं पुनितं। वायुः पूतः पवित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिपवितस्यैतयां पुनीयात्। कुविदङ्गेत्यनिंरुक्तया प्राजापृत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृंह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वै सर्रस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भः सैन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमांनि हिरंण्यं वसति गृह्णति भिषज्यत्येकं च॥———[५]
यित्रिषु यूपेष्वालभेत। बहिर्धाऽस्मादिन्द्रियं वीर्यं

दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयत्। एक्यूप आलंभते। एक्धेवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। नैतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशा ह्यंते। युवश् सुराममिश्वेनेति सर्वदेव्त्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वृत्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्यै समृद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्च पुरोडाशांश्च भवन्ति समृद्धै। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये एवास्मैं स्मीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचरित। पृशवो व पुरोडाशौः। पृश्नेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालुं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालुं प्रसूत्ये। वारुणं दशंकपालम्। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थं सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यत्सौँत्राम्णी समृंद्धौ। बार्ह्स्पत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणेव यज्ञस्य व्यृंद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुभंवति। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णायारं स्मवंनयति॥२४॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्तरा धारयित। पूतामेवैनां जुहोति। श्तमांनं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तोन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। यत्रैव श्रातातृण्णां धारयंति॥२५॥

तिन्नदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। यश् सोमोऽति पवंते। पितृणां याँज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छति। तदेवावं रुन्धे। तिस्भिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मै भेषजं करोति॥२६॥

प्राणाति प्रथमो दक्षिण समवंनयति धारयंतीन्द्रियाणि च्लारि चा——[६]
अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अग्निष्टोमः।
यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा ऋंमते। अथैषोऽभिषेचनीयंश्चतुस्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्श्चद्वे देवताः। ता
प्वाप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्यमाः स्तोमाः॥२७॥
एतावान् वै यज्ञः। यावान्पर्वमानाः। अन्तः श्लेषंणं त्वा

अन्यत्। यत्समाः पर्वमानाः। तेनाऽसर्श्वारः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनैवाग्निष्टोमेनुर्मोतिं। आत्मना पुण्यों भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यों भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥

स्तोमाः प्रावं उक्थान्येकं चा-----[७]
उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवति। वाग्वै वायुः। वाच

पुवैषों ऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजाना रे सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेति वदन्ति। एतम् त्यन्दश् क्षिप् इत्याह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानां मेवैतेन सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अक्रन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अंग्रिय् इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रंथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राज्नन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैन र्रं स्व उपनमित। यः सामभ्य एतिं। पापीयान्त्सुषुवाणो भंवति। एतानि खलु वै सामांनि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवंन्ति॥३१॥ तैरेव स्वान्नेति। यानि देवराजाना समानि। तैरम्पिँ होक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजानाः सामानि। तैरस्मिँ होक ऋंध्रोति। उभयोरेव लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकवि शों ऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भंवति। एकवि श्राः केशवपनीयस्य प्रथमः। सप्तदशो दंशपेयः॥३२॥ विड्वा एंकवि शः। राष्ट्र संप्तदशः। विशं एवैतन्मंध्यतों-ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मंध्यतों ऽभिषिच्यतें। यद्वा एनमदो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तत्सुंवर्गं लोकमभ्या रोहति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिजनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रंतीचीनंः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवंरोहति। अथों अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

अक्रंब्राज्न्यों भवंन्ति दश्पेयों माध्रेशीणं च॥———[८] इयं वै रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवेनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अभिष्विच्यमान्स्यापः। इन्द्रियं वीर्यं निरंप्रन्। तत्सुवर्ण् १ हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्या- निर्घाताय। श्वतमानो भवति श्वतक्षेरः। श्वतायुः पुरुषः श्वतिन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। आयुर्वे हिरण्यम्। आयुष्यां पुवैनंमभ्यति क्षरन्ति। तेजो वै हिरण्यम्। वेजस्यां पुवैनंमभ्यति क्षरन्ति। वर्चो वै हिरण्यम्। वर्चस्यां पुवैनंमभ्यति क्षरन्ति॥३४॥

शतक्षंरोऽष्टौ चं॥___ अप्रतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो राजसूर्येन यर्जत इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण यज्तते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवत्सरमाँप्रोति। यावन्ति संवत्सरस्याहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥ नानैवाहोंरात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंर्भवति। व्यंष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्धमासयोः प्रतिंतिष्ठति। अमावास्यांयां पूर्वमहंर्भवति। उद्दंष्ट उत्तंरम्। नानैव मासंयोः प्रतितिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुंण्याहे स्याताम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥ अपुश्वयो द्विरात्र इत्याहुः। द्वे ह्येते छन्दंसी। गायत्रं च त्रैष्टुंभं च। जगंतीम्न्तर्यन्ति। न तेन् जगंती कृतेत्यांहुः। यदेनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीति। यदा वा एषाऽहीन्स्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सवनम्। अथैव जगंती कृता। अथं पश्र्व्यः। व्यृष्टिर्वा एष द्विरात्रः। य एवं विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्येवास्मां उच्छति। अथो तमं एवापं हते। अग्निष्टोममंन्त्त आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्ये पश्चर्यः सप्त चं॥————[१०]

वर्रणस्य जामि वा ई श्वर आँग्रेयमिन्द्रंस्य यिष्ठिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वै रंजुताऽप्रतिष्ठितो दर्श॥१०॥

वर्रणस्य यदिश्विभ्यां यत्रिषु तस्मादुर्द्वतीः सप्तित्रिर्श्शत्॥३७॥

वरुंणस्य प्रतितिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्चिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तेंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंऽस्या ओषंधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिंमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासाँ जुग्ध्वा रुप्यन्त्यैत्। तेँऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भागधेयंमिच्छमाना इतिं पितरौँऽब्रुवन्। किं वों भागधेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भागधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टिं। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृत्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदापयेति। सौंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीति। तस्मांद्वत्सं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारंवृत्ड् ह्यंस्य। तस्माँद्वत्स र सर्रमृष्टध्य र रुद्रो घातुंकः। अति हि सुन्धान्धर्यति॥३॥

अलिम्पन्वेद् षातुंक एकं च॥——[१] प्रजापतिर्श्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपांस्त। सोंऽस्य प्रजाभिरपांकामत्। तमंवरुरुत्समानो-

ऽन्वैत्। तमंबुरुधं नाशंक्रोत्। स तपोंऽतप्यत। सोंऽग्निरुपांरम्तातांपि वे स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्र्राटांदुदमृंष्ट। तस्मांद्र्राट्रे केशा न संन्ति। तद्ग्री प्रागृह्णात्। तद्यंचिकित्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तिद्वंचिकित्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विचिकित्संति॥५॥

वसीय एवं चेतयते। तं वाग्भ्यंवदञ्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोत्स्वाहेतिं। तत्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एवं स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। करोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥ भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहुत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्र्ममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिर्वे मांऽऽप्नोतीति। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायस्वेति। सौंऽब्रवीत्। किं भांग्धेयंमभि जंनिष्य इतिं। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भांग्धेयंमभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥ तस्मांदग्निहोत्रमंच्यते। तद्भूयमांनमादित्यौंऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यं जुहवन्ं। प्रातमह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांदग्नयं साय हूंयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आग्नेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहैः। यदनुंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नये साय हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अह्य प्रतिं तिष्ठन्ति। यत्सायं जुहोतिं॥१०॥ प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो व स प्राजायत। यस्यैवं विदुष उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वे द्वौ पुण्यौं गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्य राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृंच्छ्तीतिं। अग्निं वावा-ऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्दूरान्नक्तं दहशे। उभे हि तेजंसी सम्पद्येते॥१२॥ उद्यन्तं वावाऽऽदित्यमग्निरन्ं समारोहित। तस्मांद्रूम

प्वाग्नेर्दिवां दहशे। यद्ग्रयें सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यत्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयें वृश्च्येत। देवतांभ्यः समदंं दध्यात्। अग्निज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्येव सायश् होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्यार् सायश् हूंयते॥१३॥ उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निज्यांति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमृत्तंरामाहुंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। यद्दिते सूर्यं प्रातर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रुंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हरंन्ति। ताहरोव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यत्स न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्सं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौषसं पंरिवेवेष्टि। ताहरोव तत्॥१५॥

अमृष्ट् विचिकित्संति जुह्वंत्यजामंसृजताग्निहोत्र सूर्याय प्रातर्जुहोति जुह्वंति सम्पद्येते हूयते

स्थापयित सम्प्रति द्वे चं॥______[२]

रुद्रो वा एषः। यद्गिः। पर्ली स्थाली। यन्मध्येऽग्नेरंधिश्रयैत्। रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचो-ऽङ्गारान्निरूह्याधिं श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥ घर्मो वा एषोऽशाँनतः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पृशुकांमस्य। शान्तिमेव हि पंश्व्यम्। न प्रतिषिश्चेद्रह्मवर्च्सकांमस्य। सिमंद्धिमेव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चिति॥१७॥ तत्पंश्व्यम्। यञ्चहोति। तद्बंह्मवर्चिस। उभयंमेवाकः। प्रच्युतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अर्गतं देवलोकम्। यच्छृतः हिवरनंभिघारितम्। अभि द्योतयित। अभ्येवैनंद्घारयित। अथो देवत्रैवैनंद्मारयित॥१८॥

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्धासयैत्। यज्ञंमान शुचाऽपंयेत्। यद्दक्षिणा। पितृदेवत्य स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी श्राचा ऽपंयेत्। उदीचीन् मुद्वांसयित। एषा वै देवमनुष्याणा श्रान्ता दिक्। तामे वैन्दनू द्वांसयित शान्त्यै। वर्त्मं करोति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपित। उपैव तत्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥ पश्नेवावंरुन्थे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयित। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः।

अनूच् उन्नंयित। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजा-ऽर्धुंका भवति। सम्मृंशित् व्यावृंत्त्यै। नाहोंष्यन्नुपं सादयेत्। यदहोंष्यन्नुपसादयेंत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्च्येत। यदेव गार्हपत्येऽिं श्रयंति। तेन गार्हपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्युन्तीति। स पुतार स्मिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽिंधयन्त॥२२॥

यदेन समर्यच्छत्। तत्स्मिधंः सिम्त्वम्। स्मिध्मा दंधाति। सम्वेनं यच्छति। आहंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रम्वेध्मवंत्करोति। आहंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका समिधंमाधाय द्वे आहंती जुहोतिं। अथं कस्या समिधं द्वितीयामाहंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। तस्मौद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति॥२४॥

भुवृति प्रतिषिश्चतिं गमयति प्रत्यक्पशवं उपनिधायाँध्रियन्तेति तच्चत्वारिं च॥———[३]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुराः। यं कामयेत वसीयान्तस्यादिति। कनीयस्तस्य पूर्वर् हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उंत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अंजुहवुः। ततुस्तेऽभवन्॥२५॥ यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयंत पापीयान्तस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्व १ हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। पुषा वा अवाच्याहंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। ततस्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परैव भंवति॥२६॥ हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतीक्षते। अनंनुध्यायिनमेवैनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै

जुंहुयात्॥२७॥ यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति।

स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। एष वा

अंग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि

यज्ञस्थाणुमेव परि वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामित। अवाचीन सायमुपंमार्ष्टि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ क्षं द्वे आहुंती भवत इतिं। अग्नौ वैंश्वान्र इतिं ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैंश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्भम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्रूयात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैंन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यित्रमार्ष्टिं। तदोषंधीनाम्। यिद्वृतीयम्। तत्यंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपति स्वगाकृंत्यै। उद्दिंशति। सप्तर्षीनेव प्रींणाति। दक्षिणा पूर्यावंर्तते। स्वमेव वीर्यमनुं प्रयावंति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धं आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मनुं प्रयावंति। हुत्वोप् सिमन्धे॥३२॥ ब्रह्मवर्चसस्य सिमें छै। न बर्हिरनु प्र हरेत्। असई स्थितो वा एष यज्ञः। यदंग्निहोत्रम्। यदंनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभ्वन्भवति जुहुयान्नयति मार्ष्टि द्विः प्राश्ञांति प्राजापृत्यमाचांमतीन्थेऽकः॥———[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृत्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तरिक्षमाग्नीं द्धम्। द्यौर्हं विर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो बर्हः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशंः परिधयंः। आदित्यो यूपंः। यजंमानः पृशुः। समुद्रोऽवभृथः। संवृत्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बंहिष्यं दत्तं भंवति। यत्सायं जुहोतिं। रात्रिंमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यंं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा।

यावंन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदंग्निहोत्र श् सर्वस्यैव संमवदायां जुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृतिमपश्यन्नितिं। यत्सायं जुहोतिं। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेज्रस्व्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूनाः रूपम्। रूपेणेवास्में पृशूनवंरुन्थे॥३८॥

पृशुमानेव भेवति। दुभ्नेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भेवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्योषधा वै मनुष्याः। भागधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भेवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥ चतुरुन्नंयति। चतुंरक्षर॰ रथन्तरम्। र्थन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्येक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तत्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योंप्सदो वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योंप्सदं:॥४१॥

य एवं वेदे। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्भारं वेदे। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्भारः॥४२॥

य एवं वेदे। तस्य त्वेव हुतम्। सायं यावानश्च वै देवाः प्रांतयावाणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागच्छन्ति। तान् यन्न तर्पयेत। प्रजयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्तर्पयेत। तृप्ता एनं प्रजयां पृशुभिस्तर्पयेयुः। सजूर्देवैः सायं याविभिरितिं साय श् सम्मृंशति। सजूर्देवैः प्रातर्याविभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावानो ये चे प्रात्यावाणः॥४३॥

तानेवोभया ईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाह स्मायं प्रांत्वं अतृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीया स्मो आतृंव्या इति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। स्मित्संप्तमी। सप्तपंदा शक्वंरी। शाक्वरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तत्सायं प्रांत्वं यं यं मानो आतृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य आतृंव्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातर्हुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा केरोत्येता वा अग्निहोत्रस्योंप्सदों वषद्भारश्चे

प्रात्यावांणो वज्रुस्त्रीणि च॥————[५]

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वन्मं जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्याँऽऽत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरादित्यः। तेँऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहौषीदात्मन्वन्मं जायेतेतिं। तस्यं वयमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमग्निः। तनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा ५ हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै

पर्यस् व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्ञमायन्। स आंदित्यों ऽग्निमंब्रवीत्। यत्रो नौ जयात्। तन्नौ सहासदितिं। कस्य कोऽहौषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्य क इतिं। प्राणानांमहिमत्यग्निः॥४६॥ तनुवां अहमितिं वायुः। चक्षुंषोऽहिमत्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेरहुतादंजनीतिं। तदिग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अंग्निहोत्रम्। य एवं वेद गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्निः समंध्यति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य पृवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मितिं। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युद्भवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्युद्भवंति। वायुमेव तेन प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लुम्भ्यंमविंत्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि पूर्यावंर्तत। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्य-मात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांं धुर्यावंर्तत। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतैकाहमुत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवित। असौ ह्यांदित्यों ऽग्निहोत्रम्॥४९॥

त्त्रवै वायुर्णिर्भवत्यवित्वा भवत्यवे च॥———[६]
रौद्रं गिवे। वाय्वयंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्।
सौम्यं दुग्धम्। वारुणमिधे श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः।
पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र शरंः।
धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्र क्रौन्तम्।
द्यावापृथिव्यई ह्वियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वाऽऽह्रंतिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र हतम्॥५०॥

उद्यंसितः स्म चं॥———[७] दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोिध। मनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वो दुह्याङ्येष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्य। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्यं। यो वा बुमूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा

बुभूषेद्धियमाणआयते द्वे चं॥

पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंन्नीयमानम्। बृह्स्पतेरुन्नीतम्। सवितुः प्रक्रौन्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वे धेनुं तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यर्जमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिंः। प्र सुवर्गं लोकं जानाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृशुभिंमिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

त्रयो वै प्रैयम्धा आंसन्। तेषां त्रिरेकौंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकंः। स्कृदेकंः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यजुंषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥ यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। ताबुभावौंर्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्यौ। तूष्णीमृत्तंरा। उभे पृवधी अवंरुन्थे। अग्निज्योतिज्योतिंर्ग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः

स्वाहेति प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयित। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत् स्यार्ऽभ्यंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङ्क् दाद्रंवेत्। स उपसाद्यातमिंतोरासीत। स यदा ताम्येँत्। अथ भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवेनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छंति यजंमानः॥५६॥
तूणीं जीयते यजंमानः॥—[१]

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्द्धग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वति। वसुष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भेवति। निर्हितो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्धग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भेवति। प्रथमिध्ममूर्चिरा लंभते। आदित्यास्तर्द्धग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्रश् हुतं भवति। सर्वं एव संवृंश इध्म आदींप्तो भवति। विश्वं देवास्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। विश्वंष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्रश्हृतं भवति। नित्रामृचिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। इन्द्रं एवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। ब्रह्मंन्नेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्ध्विप्तिरन्त्रं एवास्यांप्रिहोत्रर हुतं भवति देवेषुं च्त्वारं च (यद्प्रित्निहितः प्रथमर सर्व एव नित्रामङ्गांगः शरोऽङ्गांग् ब्रह्म वसुंष्व्ष्टो॥)॥————[१०] ऋतं त्वां सृत्येन् परिषिश्चामीति सायं परिषिश्चति। सृत्यं त्वर्तेन् परिषिश्चामीति प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावादित्यः सृत्यम्। अग्निमेव तदादित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनां-ऽऽदित्यं प्रातः सः। यावदहोरात्रे भवतः। तावदस्य लोकस्यं। नार्तिनं रिष्टिः। नान्तो न पर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वति। य उचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति हे चं॥———[११]
अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्निर रुद्र उत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः
प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मुन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणृतस्त्रयो वै यद्ग्निमृतं त्वां सुत्येनैकांदश॥११॥

अङ्गिरसः प्रैव तेनं पुशूनेव यन्निमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योपसदी दक्षिणतः षुष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेतिं। स एतं दशंहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेंणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहत्वम्। यः कामयेत प्रजायेयेति। स दर्शहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिर्वे दर्शहोता॥१॥ प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराध्यै। न्यूनया जुहोति। न्यूनाद्धि प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना् सृष्टौ॥२॥ दर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वे योनें प्रजापंतिः प्रजा असृजत। यस्मदिव योनेंः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तस्मदिव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजांयते। ग्रहों भवति। प्रजाना ५ सृष्टानां धृत्यैं। यं ब्रौह्मणं विद्यां विद्वा ५ सं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भर्थं। ब्राह्मणं देक्षिणतो निषाद्यं। चतुर्होतॄन्व्याचंक्षीत। पृतद्वै देवानां पर्मं गुह्यं ब्रह्मं। यचतुर्होतारः। तदेव प्रंकाशं गंमयति। तदेनं प्रकाशं गतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्यं व्याचंष्टे॥४॥

अग्निवान् वै दर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशे ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मे देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधानो दर्शहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजातमेवैनमा धत्ते। तेनैवोद्दुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजातमेवैनंज्जहोति। ह्विर्निर्वृप्स्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजातमेवैनं निर्वृपति। सामिधेनीरंनुवृक्ष्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथों युज्ञो वै दर्शहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः।

नाभिर्दशमी। सप्राणमेवेनंम्भि चंरति। एतावृद्धे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्तिं। तदभि चंरति। स्वकृत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वा अस्यै निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋंतिगृहीत एवैनं निर्ऋंत्या ग्राहयति। यद्वाचः क्रूरम्। तेन् वर्षद्वरोति। वाच एवैनं क्रूरेण प्र वृश्चिति। ताजगार्तिमार्च्छति॥७॥ दर्शहोता सृष्ट्यां ऋच्छे, द्याचेष्टे रुन्ध एव तंनुते निर्ऋतिगृहीतं पश्चं च॥______[१] प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुंर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्मात्सृष्टावपां-क्रामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहत्वम्। दुर्शपूर्णमासावालभेमानः। चतुर्होतारं मनसाऽनुद्रुत्यां-

हवनीयें जुहुयात्। दुर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥ ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यै। सोंऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स एतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स चांतुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्मात्सृष्टान्यपाँकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥ पश्चेहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानारं सृष्टानां धृत्यैं। सोऽकामयत पशुबन्धर सृंजेयेति। स एतर पह्नोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो व स पंशुबन्धमंसृजत। सोस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्॥१०॥

तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्थेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कौतारं मनंसाऽनुद्गुत्यांऽऽहव्नीयं जुहुयात्। पृशुब्न्थम्व सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्थस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोऽकामयत सौम्यमंध्वर सृज्येतिं। स पृत स्माहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्गुत्यांऽऽहव्नीयंऽजुहोत्। ततो व स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥ सौऽस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य

सोंऽस्मात्मृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहत्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-ऽऽहवनीये जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै युज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावुच्छः समंभरन्॥१२॥ वा अतिथ्यम्। मुख्त एव यज्ञ स्ममृत्य प्र तंनुते। अयंज्ञो वा एषः। योऽप्लीकः। न प्रजाः प्रजांयेरन्। पलीर्व्याचेष्टे। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। उपसत्सु व्याचेष्टे। एतद्वे पलीनामायतंनम्। स्व एवेनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥ वृत् अल्लंमानोऽग्हादस्जनाभरआयेर्न्यदं॥———[२] प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। स त्रिवृत् स्तोमंमसृजत। तं पंश्रद्धः स्तोमो मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चापरपक्षश्चामवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृज्यन्त। अप्रपक्षमन्वसृंगः। ततो देवा अभवन्। पराऽस्ंगः। यं

यत्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों यज्ञः प्राभवत्। यत्संम्भारा

भवंन्ति। यज्ञस्य प्रभूत्यै। आतिथ्यमासाद्य व्याचेष्टे। यज्ञमुखं

कामयेत् वसीयान्त्स्यादिति॥१४॥
तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भवित। यं कामयेत्
पापीयान्त्स्यादिति॥ तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव
भविति। तस्मौत्पूर्वपक्षोऽपरपक्षात्करुण्यंतरः। प्रजापंतिवै
दशहोता। चतुरहोता पश्चहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवेः
संवत्सरः॥१५॥
प्रजाः पश्चवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूया रसं

वेदं। ब्होरेव भूयाँन्भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। सौंऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्माङ्स्तप्साऽसृंक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमिति॥१६॥

ते तपोंऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्त्संवत्स्रम्। प्रजाः पृशून्। इमाँ ह्योकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जंनयतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तं चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिर्वे भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जायते। वीर॰ हि देवा पृतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकेंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमियाम वयं पूर्व इति॥१८॥ त आदित्या पृतं पश्चंहोतारमपश्यन्। तं पुरा

त अदित्या एतं पश्चेहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींभ्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवृगं लोकमायन्। यः सुवृगंकामः स्यात्। स पश्चेहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्रींध्रे जुहुयात्। संवृत्सरो वै पश्चंहोता। संवृत्सरः सुवर्गो लोकः। संवृत्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवृर्गं लोकमेति। तेंऽब्रुवन्निङ्गेरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्थ। क्वं वः सुद्धो हूव्यं वंक्ष्याम् इति। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायित्रियाित्रिष्टुभि जगत्यािमिति। तस्माच्छन्दः सु सुद्धा आदित्येभ्यः। आङ्गीरसीः प्रजा हूव्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्म प्रजा बिलम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छिति। य एवं वेदं। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकिविश्शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥ स्यादिति संवत्सरे जनयध्वमितीत्यंब्रवीत्पृवं इत्यांदित्यानृतवः पदं॥———[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेविते। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दर्शहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः स्रुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावान्

यज्ञकृतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोंऽनन्दत्॥२१॥ असृंक्षि वा इममितिं। तस्य सोमों हुविरासींत्। स

चतुर्होत्राऽतप्यत। सोऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्धि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥ सोंऽन्तिरक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामांनि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुवरिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वे लोकानन् प्रजाः प्शवृश्छन्दा से प्राजांयन्त। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां प्शुभिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारमसृजत। स हिवर्नाविन्दत। तस्मै सोमस्तुनुवं प्रायंच्छत्। एततें हिवरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥ तद्दुर्वर्ण् हिरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधत। स देवानंसृजत। तदंस्य प्रियमांसीत्। तत्सुवर्ण्क् हिरंण्यमभवत्। तत्सुवर्ण्स्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एवक् सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एवक् सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एवक् सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं वदं॥२५॥

सुवर्णं आत्मनां भवति। दुर्वर्णों ऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मौत्सुवर्ण् र् हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रिंयम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोत्रैव सुंवर्गं लोकमैंत्। त्रिणवेन स्तोमेंनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रि एकवि १ शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकवि १ शेन रुचं मधत्त॥ २६॥ सप्तदशेन प्राजायत। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजेते। सप्तहों त्रैव स्वर्गं लोकमेंति। त्रिणवेन स्तोमें नैभ्यो लोकभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रि शोन प्रतिंतिष्ठति। एकवि शोन रुचं धत्ते। सप्तदशेन प्र जांयते। तस्मौत्सप्तदशः स्तोमो न निर्हृत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तदशः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंत्ते प्रजाँत्यै॥२७॥

अन्द्रब् इति व्याहंग्डेदांभीडेदांधत् प्रजांत्ये॥———[४]
देवा वे वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्ये देवतांये
दक्षिणामनंयत्। तामंत्रीनात्। ते उत्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिंगृह्णाम।
तथां नो दक्षिणा न ब्रेष्यतीति। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो
वे तान्दक्षिणा नान्नीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां
प्रतिगृह्णाति। नैनं दक्षिणा न्नीनाति॥२८॥

गृह्णाति। वर्रुणायाश्वमित्यांह॥२९॥

राजां त्वा वर्रणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिरंण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिंगृह्णाति। सोमाय वास इत्यांह। सोम्यं वै वासंः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिंगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं-

वारुणो वा अश्वंः। स्वयैवेनं देवतंया प्रतिगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषिमत्यांह। प्राजापत्यो वे पुरुषः। स्वयैवेनं देवतंया प्रति गृह्णाति। मनंवे तल्पमित्यांह। मानवो वे तल्पंः। स्वयैवेनं देवतंया प्रति देवतंया प्रति गृह्णाति। उत्तानायां क्षीर्सायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आंक्षीरसः॥३०॥

अन्यैवेन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्रो वे देवत्या रथंः। स्वयैवेनं देवत्या प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवात्मन्धंत्ते। वयों दात्र इत्यांह। वयं पृवेनं कृत्वा। सुवृगं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं एवेषा परीतिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेंन हि ददांति। कामेंन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कार्मः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविशे-त्याह। समुद्र इंव हि कार्मः। नेव हि कामस्यान्तोऽस्ति। न संमुद्रस्यं। कामेंन त्वा प्रतिंगृह्णामीत्यांह। येन कामेंन प्रतिगृह्णातिं। स एवैनंममुष्मिं लोके काम आगंच्छति। कामैतत्तं एषा तें काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानो-ऽमुष्मिँ लोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतरिं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रतिं गृह्णाति॥३३॥ ब्रीनात्यश्वमित्यांहाङ्गीर्सः प्रंतिग्रहीत्र इत्यांह प्रतिग्रहीतेत्यांह दक्षिणेत्यांह चुत्वारि च॥—[५] अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दशमेऽहंन्त्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तंं गत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्धते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यो-ऽन्नाद्यमवं रुन्धते। पृश्ञिंवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्ञिं॥३४॥ अन्नमेवावं रुन्धते। मनंसा प्रस्तौति। मनसोद्गांयति। मनंसा प्रतिं हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। देवा वै सर्पाः। तेषांमिय राज्ञीं। यत्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्तिं।

अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचंष्टे। स्तुतमनुंशश्सित शान्त्यै। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंरहोतारः। दश्मेऽहुङ्श्चतुंरहोतृन्व्याचंष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्धे। तदेव प्रकाशं गंमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयित। वाचं यच्छित। यज्ञस्य धृत्यं। यज्ञमानदेवत्यं वा अहं। भ्रातृव्यदेवत्यं रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यिद्ववा वाचं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृजिति। एतावंन्तमेवास्में लोकमुच्छि १ षिति। यावंदादित्यों उस्तमेतिं॥ ३ ७॥

पृष्टिं तिष्टिन गमयित शिर्षेत्यः च॥————[६]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविशत्। तस्मादाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता

नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मादाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं।

तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयंते॥३८॥

मित्रमेव भेवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजतः। स इन्द्रमिष् नासृंजतः। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। स आत्मित्रन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजतः। तं त्रिष्टुर्ग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्रशो हस्त आपंद्यतः। तेनोदय्यासुंरान्भ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवृगं लोकमांयन्। तेंऽमुष्मिंश्लोके व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमृतंः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चे। य एवं वेदे। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सच्चो देवेभ्यो ह्व्यं वहिति। य एवं वेदे। उपैनं यज्ञो नमिति। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमिष्यन्त इतिं। स वाचेस्पते हृदिति व्याहंरत्। तस्मात्पुत्रो हृदेयम्। तस्मादस्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदंयम्॥४१॥

ह्यंते अभवत्कल्प्येतीति च्त्वारि च। [७] देवा वै चतुंरहोतृभिर्यज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भ्रातृं व्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वा ॥ श्रुतंरहोतृभिर्य्ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भ्रातृं व्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मे वै लोकाय षड्ढोंता। घ्रन्ति खलु वा एतत्सोमम्। यदंभिष्णवन्तिं॥ ४२॥

ऋजुधेवैनंममं लोकं गंमयति। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुंर्होता। यशं पृवात्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पृशुमुपंसादयति। सुवर्ग्यो वै पश्चंहोता। यजमानः पृशुः। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। ग्रहाँनगृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वै सप्तहोता॥४३॥

इन्द्रियमेवात्मन्धेत्ते। यो वै चतुर्होतॄननुसव्नं तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन॰ सोमपीथो नंमति। बहिष्पवमाने दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। मार्ध्यं दिने पर्वमाने चतुरहोतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चंहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुसुवनमेवेना इंस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नमिति। देवा वै चतुंर्होतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तत्सहास्दितिं। सोम्श्चतुंर्होत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढोंत्रा॥४५॥

इन्द्रंः सप्तहाँत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषाक् सोम्क् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैष्त्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तित्रिविदाँन्निवित्त्वम्॥४६॥ आप्रीभिराप्रुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्रन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वे नः श्रेष्ठो-ऽभूत्॥४७॥

तमंवधिष्म। पुनिर्मि सुंवामहा इति। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्ना समानयन्। तत्साम्नः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशः। य एवं विद्वान्त्सोमंमागच्छंति। यशं एवेनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छुतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्मात्सोमे सोमः प्रोच्यः। यशं एवेनंमृच्छति॥४९॥

अभिषुण्वन्ति सप्तहौता तर्पयित् षड्ढौत्रा निवित्त्वमभूँतिष्ठति प्राहेति द्वे चं॥———[८]

इदं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोंऽकुरुत स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोंऽजायत। तद्भ्योंऽतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूयोंऽतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्शिरंजायत। तद्भ्योंऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाद्गिरंजायत। तद्भ्योंऽतप्यत॥५०॥
तस्मौत्तेपानाञ्च्योतिंरजायत। तद्भ्योंऽतप्यत। तस्मौत्तेपानाद्विरंजायत। तद्भ्योंऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयोऽजायन्त। तद्भ्योंऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त।
तद्भ्योंऽतप्यत। तद्भ्रमिव समंहन्यत। तद्वस्तिमंभिनत्॥५१॥
स संमुद्रोंऽभवत्। तस्मौत्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनंनिमव

हि मन्यंन्ते। तस्मौत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्तौद्यन्ति। तद्दशहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिल्लिमांसीत्। सोऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥ स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रतिष्ठाया इति। यद्प्स्वंवापंद्यत।

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रतिष्ठाया इति। यद्प्स्वंवापंद्यत। सा पृथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरक्षमभवत्। यदूर्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयो रोद्स्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदं। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदं। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छंति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स ज्ञानादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपाहत। सा तिमंस्राऽभवत्। सोऽकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सौन्तर्वानभवत्। स प्रजननादेव प्रजा अंसृजत। तस्मांदिमा भूयिष्ठाः। प्रजननाद्धेना असृंजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपाहत। सा जोत्स्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपृक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रे घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सुन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्वानंसृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

सा तुनूरासात्। तामपाहता तदहरभवत्॥५७॥

पृते वै प्रजापंतेर्दोहाँ:। य पृवं वेदं। दुह पृव प्रजाः। दिवा

वै नोंऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य पृवं देवानां देवत्वं
वेदं। देववांनेव भवति। पृतद्वा अहोरात्राणां जन्मं। य

पृवमंहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥

अस्तोऽधि मनोंऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत।

प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंरमं

प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वोवस्यसन्नाम ब्रह्मं।

व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्युंच्छति। प्रजांयते प्रजयां पृशुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अग्निरंजायत् तद्भूयोंऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंसृजुतासृंजत घृतमंदुह्द्याऽस्य सा

त्न्रासीदहंरभवदच्छिति वेदं (इदं धूमौँऽग्निज्योतिर्चिर्मरीचय उदारास्तद्भः स ज्ञधनात्सा तिमस्या स प्रजनंनात्सा जोत्स्य स उपपक्षाभ्याः सौंऽहोरात्रयौः सन्धः स मुखात्तदहंदिववौन्मुन्मये दारुमये रज्ञते हरिते तेभ्यस्ताभ्यो हे तेऽत्रं पयौ घृतः सोमम्॥॥———[९] प्रजापितिरिन्द्रेमसृजतानुजावरं देवानौम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां देवानामधिपतिरेधीति। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। व्यं वै त्वच्छ्रेयाः सम् इति। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वै त्वच्छ्रेयाः सम् इति मा देवा अंवोचित्रिति। अथ् वा इदं तर्हि प्रजापतौ हरे आसीत्॥६०॥

यद्स्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिर्भविष्यामीति। कोऽह स्यामित्यं ब्रवीत्। एतत्प्रदायेति। एतत्स्या इत्यं ब्रवीत्। यदेतद्भवीषीति। को ह व नामं प्रजापंतिः। य एवं वेदं॥६१॥

विदुरेनं नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों

देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सौंऽमन्यत। किं किं वा अंकरमितिं। स चन्द्रं म आहरेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रमस्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥ चुन्द्रवानेव भवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथां गोपायत इतिं। तत्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्गोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भवति॥६३॥ अयं वा इदं पंरमों ऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनंः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। परमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तांत्। रुद्रा दक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वे देवा उत्तरतः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥ साध्याः पराश्चम्। य एवं वेदं। उपैनः समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दंक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः।
मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः
पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः।
मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तरतः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्न्यंवर्तयत। ताः स्वंतोंमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति॥६७॥

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्त्स्यामितिं। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्त्स्यामितिं। स दशंहोतार् प्रयुंजीत। बहोर्न्व भूयांन्भवित। सोऽकामयत वीरो म आजांयेतेतिं। स दशंहोतुश्चतुंरहोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुंङ्का ६८॥ तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म आजांयेतेतिं।

स चतुंर्होतारं प्रयुं श्रीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्त्स्यामितिं। स चतुंर्होतुः पश्चंहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्त्स्यामितिं। स पश्चंहोतारं प्रयुंश्चीत॥६९॥

पृशुमानेव भेवति। सोंऽकामयत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चेहोतुः षड्ढोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्यृतवौं-ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स षड्ढोतारं प्रयुंश्चीत। कल्पेन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोम्पः सोंमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोंमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः सप्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायंङ्कः। तस्य प्रयंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेति। स सप्तहोतारं प्रयंजीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जांयते। स वा एष पृशुः पंश्वधा प्रतितिष्ठति॥७१॥ पद्भिर्मुखेन। ते देवाः पृशून् वित्वा। सुवृगं लोकमांयन्।

तें ऽमुष्मिं ह्योके व्यंक्षुध्यन्। तें ऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येति। तस्य वा इयं क्रुप्तिः॥७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यों हृव्यं वंहति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नंमित। यो वै चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवति। अग्निहोत्रं वै दर्शहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पृशुबन्धः षङ्कोतुः। सौम्यौऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुंरहोतृणां निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवति॥७३॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेति प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतार् तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा वै वर्रुणमन्तो वै प्रजापंतिरकामयतः सृष्टाः समंक्षिष्यं देवा वै चतुंर्होतृभिरिदं वा अग्रै प्रजापंतिरिन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवैनृत्तस्य वा इयं क्रृष्टिस्तस्मात्तेपानाञ्च्योतिर्-

यदस्मिन्नांदित्ये स पङ्कृतः सप्तहोतार्त्रिसंप्ततिः॥७३॥

प्रजापंतिरकामयत निदानंबान्भवति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके

द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चंतुर्धा होतांरः। तेन चतुर्होतारः। तस्माचतुर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षड्ढ्रोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥ प्रजापंतिर्दशहोता। य एवं चतुर्होतृणामृद्धिं वेदं। ऋभ्नोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदं। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं क्लिप्तिं वेदं। कर्ल्पतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतेनवान्भवति। य एंषामेवं प्रतिष्ठां वेदं॥२॥ प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दशंहोता चतुंर्होता।

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दर्शहोता चतुर्होता। पश्चेहोता षड्ढोता सप्तहोता। अथ कस्माचतुर्होतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुर्होता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतानामुप्-देशनात्। य प्विमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतानामुप्देशनाद्वेदं। विसिष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादिति। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्।

अयमवांसादितिं॥ ३॥

स्महोता प्रतिष्ठां वेदं ब्ध्यन्ते षद्वं॥———[१] दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्त्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानमेव

सिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौँ प्रजापंतिरेवैनाँ भूत्वा प्रतिगृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृत सन्तं निर्हरेरन्। आग्नीध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाज्येन। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्गिष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्यंनं पुनंरुप् शिक्षेयुः। आग्नींप्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाज्यंन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविग्राहम्। प्राणानेवास्मे कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृंतुमुखऋंतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्मै कल्पयति। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

क्रुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढांता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोंऽसृजत। मनुसोऽधि गायत्रीमंसृजत। तद्गायत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तत्साम् यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥ साम्रोऽधि यजू ईष्यसृजत। यजुर्भ्योऽधि विष्णुम्। तिद्वष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णो्रध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तत्सोमं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादिधं पृशूनंसृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥ तिदन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेन्न्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यश्स्वी भंवति। य पृवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तत्सर्वमृत्तान पृवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रति-गृहीतं नाहिनत्। यत्कं चं प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमृत्तानस्त्वां-ऽऽङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णात्वत्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवेनत्प्रतिंगृह्णाति। नैनई हिनस्ति। बर्हिषा

प्रतीयाद्गां वाऽश्वं वा। एतद्वे पंशूनां प्रियं धार्म। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभृतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥———[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपौप्माऽमुिष्में छोके भविति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपौप्मा-ऽमुिष्में छोके भविति। देवता वै सप्त पुष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चे पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चे चन्द्रमाः। अग्निर्न्यवर्तयतः। स साहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिभिरपुष्यत्। वायुर्न्यं-वर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिक्षं न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स र्शिमभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्त्र्युत्भिः संवत्सरेणांपुष्यत्। तान्योषांन्पुष्यति। याःइस्तेऽपुष्यन्। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परि च॥१०॥

अपुष्यत्रक्षंत्ररपृष्यत्यश्चं च॥————[३]
तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धमिन्द्रियस्यापाँक्रामत्। तद्तेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे सोंऽर्धमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्धमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं
विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं।
अर्धमस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वे सोमस्य वासंः

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्त। तृतींयमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य

प्रतिजग्रह्षंः। तृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामत्॥११॥

एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथु योऽविद्वान्प्रति-गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंत्रामति। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त॥१२॥ चतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रंतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चुतुर्थमंस्येन्द्रिय-स्यापंत्रामित। तस्य वै वरुणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पश्चमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स पंश्रमिनिद्वयस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। पृश्रमिनिद्वयस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥ अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पश्चममंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रह्षंः। षष्ठमिन्द्रिय-स्यापाँ ऋामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षष्ठमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। षष्ठिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षुष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति॥१४॥ तस्य वै मनोस्तर्ल्यं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिनिद्रय-

स्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्वयस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। सप्तमिनिद्वयस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वाङ्स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। सुप्तममंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति। तस्य वा उत्तानस्यौऽऽङ्गीर्सस्याप्राणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टममिन्द्रियस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै सौंऽष्टमिनिद्रयस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्त। अष्टमिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानप्रांणत्प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अष्टम-मंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति। यद्वा इदं किं चं। तत्सर्वमुत्तान एवाऽऽङ्गीरुसः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिंगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चे प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमुत्तानस्त्वाँऽऽङ्गीरसः प्रतिंगृह्णात्वित्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आँङ्गीरुसः। अनयैवैनत्प्रतिंगृह्णाति। नैन 🕏 हिनस्ति॥१६॥

तृतींयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधृत्तार्श्वं प्रतिगृह्णातिं षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्ट्मिनं

न्द्रियस्यापाँकामत्प्रतिगृह्णीयाचृत्वारिं च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यु सोमंस्य वासुस्तदेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन् वर्रुणस्यार्थं प्रजापंतेः पुर्रुषं मनोस्तल्पन्तमेतेनौत्तानस्य तदेतेनाप्रांणद्यद्वै। अर्थं तृतींयमष्ट्मं तच्चंतुर्थं तां पंश्चम॰ षष्ठ॰ संप्तमन्तम्। तद्तेन् द्वे तामेतेनैकुं तमेतेन् त्रीणि

तद्तेनैकम्॥)॥___ ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दर्शहोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृजन्तेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः सुत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृज्नन्तेतिं। सोमेंनु वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥ तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैंषां पशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥ केनर्तूनंकल्पयन्तेतिं। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनर्तूनंकल्पयन्त। यत्सप्तहोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन सुवंरायन्। केनेमाँ लोकान्त्समं-तन्वन्नितिं। अर्थम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन सुवंरायन्। तेनेमाँ श्लोकान्त्समंतन्वन्नितिं॥१९॥ एते वै देवा गृहपंतयः। तान् य एवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षंते। अवान्तरमेव सत्रिणांमृध्नोति। यो वा

अंर्युमणुं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। युज्ञो वा अंर्यमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रशश्सिन्ति। आर्यावसतिर्भवति। य एवं वेदं॥२०॥ यद्वा इदं किं चं। तत्सर्वं चतुरहोतारः। चतुरहोतृभ्योऽधिं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतृन् वेदेतिं। स ह्यंव भूयो वेदं। यश्चतुंर्होतृन् वेदं। यो वै चतुंर्होतृणाु १ होतॄन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥ सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दशंहोतृणा १ होतां। सोमश्चतुंर्होतृणा १ होतां। अग्निः पश्चंहोतृणा १ होतां। धाता षड्ढोतृणा १ होतां। अर्यमा सप्तहोतृणा १ होतां। एते वै चतुंर्होतृणा होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नमित्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥ आर्धुवृत्रार्धुवृत्रित्येवं वेदाँत्ति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं सुत्रङ्केनं॥)॥————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्रश्सत। स हृदंयं भूतोऽशयत्। आत्मन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंश्रण्वन्। ता अग्निहोत्रेणैव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतिन्त। ताः कुसिन्धुमुपौहन्। तस्मादिग्निहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वो-

ऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंशृण्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंर्तन्त। त उपौह् श्रृक्ष्वार्यङ्गांनि। तस्मां दृर्शपूर्ण-मासयों यंज्ञऋतोः। चृत्वारं ऋत्विजः। पृश्र्वकृत्वोऽह्वंयत्। पृश्रवः प्रत्यंशृण्वन्। ते चांतुर्मास्येरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंर्तन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मा समस्थं मृज्ञानम्। तस्मां चातुर्मास्यानां यज्ञऋतोः॥२४॥ पश्चित्वंजः। षद्भत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते

पश्चर्त्विजंः। षट्कृत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुब्न्धेनेव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंतिन्त। त उपौहुन्त्स्तनांवाण्डो शिश्ञमवाश्चं प्राणम्। तस्मांत्पशुब्न्धस्यं यज्ञऋतोः। षट्ट्रित्वजंः। सप्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सोम्येनेवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपूर्यावंतिन्त॥२५॥ ता उपौहन्त्सप्त शीर्ष्ण्यांन्प्राणान्। तस्मांत्सोम्यस्याध्वरस्यं यज्ञऋतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्वुवन्ति। दशकृत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंश्रणोत्। तत्कर्मणेव संवत्सरेण सर्वैयंज्ञऋतुभिरुपं पर्यावंतित। तत्सर्वमात्मानमपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मांत्संवत्सरे पर्यावंतित। तत्सर्वमात्मानमपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मांत्संवत्सरे

सर्वे यज्ञऋतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुंर्होता।

पश्चंहोता षड्ढोंता सप्तहोंता। एकंहोत्रे बिलिश् हंरन्ति। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बिलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

चन्द्रमांश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरिष्यरेणं यज्ञकृतुनोपं पूर्यावर्तन्त सुप्तहोता च्त्वारि च॥—[६] प्रजापितः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नम्स्त्वितिं। सोंऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीतिं। स

प्ता इश्चर्तं त्र्वे प्रतास्परंणानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। एकंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। चतुर्होतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारिं चाऽऽत्मनोऽङ्गांनि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। स्मित्पंश्चमी। पश्चहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानिं। लोमं छुवीं मा॰्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥ तानिं चाऽऽत्मनः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति।

तानि चाऽऽत्मनः स्पृणाति। आदित्यस्य च सायुज्य गच्छात। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षङ्कोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानि चाऽऽत्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मित्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्।
स्प्त चाऽऽत्मनंः शीर्षण्यांन्प्राणान्त्स्पृणोति। आदित्यस्यं च्
सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टि। द्विः
प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति संवत्स्रम्। सर्वं
चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गं स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं
गच्छति॥३०॥

अ्षिहोत्रं मुझान्निद्धर्जुहोत्यपंरिवर्गः स्पृणोत्येकं च॥———[७]
प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत।

सौंऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावोऽभवत्। तस्मात्स्र्यंन्तर्वत्री। हरिणी सती श्यावा भवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मौत्तान्तः कृष्णः श्यावो भवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य एवमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्त्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितृनंसृजत। तत्पितृणां पिंतृत्वम्। य एवं पिंतृणां पिंतृत्वं वेदे। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ँ। स पितॄन्त्सृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजत। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मृनुस्त्येव भंवति। नैनं मनुर्जहाति। तस्मै मनुष्यांन्त्ससृजानायं। दिवां देवृत्रा-ऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानां देवृत्वम्। य एवं देवानां देवृत्वं वेदं। दिवां है्वास्यं देवृत्रा भंवति। तानि वा एतानिं चत्वार्यम्भा स्सि। देवा मनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य एवं वेदं॥३३॥

अजीवत्स्वानां भवति देवानंस्जत स्प्त चं॥———[८] ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पवंते। यदंभि पवंते। यदंभि सम्पवंते। सर्वमायुंरियात्। न पुरा-ऽऽयुंषः प्र मीयेत। पशुमान्त्स्यांत्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा

इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भवति। विन्दते प्रजाम्। अद्भाः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥ अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सं पंवते।

अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सं पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सं पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सं पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वां प्रजाः प्रतिं नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्देक्षिणतो वाति। मात्रिश्वेव भूत्वा देक्षिणतो वाति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश् आ वाति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मांतिरिश्वैव। अथु यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥ अथ यदंत्तर्तो वार्ति। स्वितेव भूत्त्वोत्तंर्तो वांति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तांदायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एनन्दक्षिण्त आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य एवास्यं दक्षिणतः पाप्मानंः। ता इस्ते ऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ य एनं पश्चादायन्तंमुप वदंन्ति। य एवास्यं पश्चात्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पश्चादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप वदंन्ति। य पुवास्यौत्तरतः पाप्मानः। ता इस्ते ऽपं घ्रन्ति॥४१॥ उत्तरत इतरान्पाप्मनेः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवे नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषेत। मण्टयेदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत मे पाप्मानुमपं हन्युरितिं। स यान्दिशर्ं सुनिमेष्यन्तस्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथ प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूंढं गन्धमभि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सं पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वात्येष पर्वमान एव दक्षिणत आयन्तंमुप वदंन्त्युत्तर्तः

प्रजापंतिः सोम् राजांनमसृजत। तत्रयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनश्रकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरं प्रजापंतिमुपंससार। तर् होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनङ्कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इति। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंर्होतारन्दक्षिण्तः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारश्च पत्निभिश्च मुखेंऽलङ्कत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। तार होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्त्स्वेतिं। तर होवाच। भोगन्तु म् आचंक्ष्व। पुतन्म् आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उ ह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुह् स्नियो भोग्मैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामिति॥४५॥ यं वा कामयेत प्रियः स्यादिति। तस्मां एतः स्थांग्रमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तां द्याख्यायं। चतुंरहोतारन्दक्षिण्तः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारश्च पित्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रजेत्। प्रियो हैव भेवति॥४६॥

अयान्यलङ्कृत्यं स्यामिति भवति॥———[१०] ब्रह्मौत्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मन्नात्मिनित्यामंत्रयत। तस्मैं दश्मभ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा पुतं दंहूत्थ सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

अत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै सप्तम हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स सप्तहूंतोऽभवत्। सप्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा एत स्मप्तहूंत स्मन्तम्। सप्तहोतेत्याचं क्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै षष्ठ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स षड्ढूंतोऽभवत्॥४८॥

वेदं॥५०॥

षड्ढंतो ह वै नामैषः। तं वा एत षड्ढंतु सन्तम्। षड्ढोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मुन्नात्मुन्नित्यामंत्रयत। तस्मै पश्चम र हूतः प्रत्यंशृणोत्। स पश्चंह्रतोऽभवत्। पश्चंहूतो ह वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहृत् र सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण॥४९॥ परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं चतुर्थ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स चतुंर्ह्तोऽभवत्। चतुंर्ह्तो ह वै नामैषः। तं वा एतश्चतुंर्हत सन्तम्। चतुंर्होतेत्याचंक्षते परोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंब्रवीत्। त्वं वै मे नेदिंष्ठ र हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयैंनानाख्यातार् इतिं। तस्मानु हैना १ श्वतुं रहोतार् इत्याचं क्षते। तस्माँच्छु श्रूषुः पुत्राणा १ हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो ब्रह्मंणो भवति। य एवं

देवाः षड्ढंतोऽभवत्पश्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंणाश्रौषीः षद्वं॥_____[११]

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यद्दर्शहोतारः प्रजापंतिर्व्यस्रं प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वान्ब्रह्मवादिनो यो वा इमं

विद्यात्प्रजापंतिः सोम् राजानं ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥

ब्रह्मवादिन्स्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदं किं चं प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणृतः पंश्चा्रात्॥५०॥

ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। श्त्रूयतामा भंरा भोजनानि। अग्ने शर्ध महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सऔस्पत्य र सुयममा कृंणुष्व। शत्रूयतामभि तिष्ठा महार् सि। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिघा ५सति॥१॥ ता इस्त्वं वृत्रहं जिह। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नो-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यंः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्वमिन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥ अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराधरा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्मो भुंवत्। युजे रथंङ्गवेषंणु हिरिभ्याम्। उप ब्रह्मांणि जुजुषाणमंस्थुः। विबांधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥ हव्यवाहंमभिमातिषाहम्। रक्षोहणं पृतंनासु जि्ष्णुम्।

ज्योतिष्मन्त्नदीद्यंतं पुरेन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृत्मा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतेना अभि ष्य। उरुन्नः पन्थां प्रदिशन्विभाहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरंत्र आयुंः। त्वामंग्ने हविष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यें त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रक्षित्वर्वतः। पूषा वाजरं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥ सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अप्रृणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेंण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षारंसि

सेधित। शुक्रशोंचिरमंर्त्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हंसः॥६॥ प्रतिं ष्म देव रीषंतः। तिपेष्ठैरुजरों दह। अग्ने हरसि

प्रति ष्म देव रिषतः। तिपिष्ठरुजरी दह। अग्ने हशस् न्यंत्रिणम्। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश्हि विश्वभेषजः। देवानांन्दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौं वातः॥७॥

आ सिन्धोरा परावतः। दक्षं मे अन्य आवात्। परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह। वात आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नों हृदे॥८॥ प्रण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा

हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नो धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदन्नमंः। कामो भूतस्य भव्यंस्य। सुम्राडेको विराजिति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुत्सृंजते वृशी। कामस्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनंसो रेतः प्रथमं यदासीत्। सतो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्शिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगों मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मृन्युं विश्वं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्भृच्छुचिः। देवा असांदया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिभ्रंद्वतपा अदाँभ्यः। यजां नो देवा अजरः सुवीरः। दध्द्रत्नांनि सुविदानो अग्ने। गोपाय नो जीवसे जातवेदः॥११॥

जिघारं सत्यमित्रां अधुन्वानींडते सर्वा अरहंसो वातो हुदे राजत्यग्निरूपाः सुविदानो अंग्नु एकं

ਹ।____

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मां-ऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृंण्। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृंण्। यत्किश्चासौ मनंसा यचे वाचा। यज्ञैर्जुहोति यजुंषा हिविर्भिः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन सत्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तत्समृद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत हिवः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँ ते उभौ बाहू। अपनह्याम्यास्यम्॥१३॥ अपं नह्यामि ते बाह्। अपं नह्याम्यास्यम्॥ अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधेषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्कारात्। युज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टमस्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापुन्न-रांतयः। अन्तिं दूरे सतो अंग्रे। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥ वषद्कारेण वज्रेण। कृत्या हंन्मि कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वज्जेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडे अग्निं विपश्चितम्॥१५॥ गिरा यज्ञस्य साधंनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावानम्। अग्ने शकेमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषार्श्स तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोंकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतमद्य नंः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रयावम्॥१६॥

तुगमश्रंको वृष्भः शोशुंचानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यंमानः। आ तन्तुंम्गिर्दिव्यन्तंतान। त्वन्नस्तन्तुंकृत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देव्यानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संधमादं मदेम। उदुंत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पाशं मध्यमश्रृंत। अवांधमानिं जीवसें॥१७॥ अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपर्हीं। उदश्शेंन पित्विद्यें जिगाय। त्रिश्शदंस्या ज्ञ्चनं योजनािन। उपस्थ इन्द्र्र् स्थिवेरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंनञ्जया। विश्वव्यंचा अदितिः सूर्यत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

व्यर सोम ब्रुते तवं। मनंस्तुनूषु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचितः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथिवी। ध्रुवं विश्वंमिदं जगत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्राणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवन्ध्रुवेणं ह्विषां। तस्में देवा अधिब्रवन्। अयं च् ब्रह्मंणस्पतिः॥२०॥

हुविर्भिरास्यंमभि दासंतो विपश्चित्मप्रयावश्चीवसे ददांना व्यथिष्ठा ब्रव्नेत्रकं च॥———[२]

जुष्टीं नरो ब्रह्मंणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलारिषाथ। यच्छक्षरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदंधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरंस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। यृज्ञं वेष्टु ध्रिया वंसुः। सरंस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्रो। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यंक्षि सद्म सदंने पृथिव्याः। अश्रांयि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्रये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतो हवामहे। यो गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नों युज्ञं विंह्वे ज्रंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनंन्त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः कृविरुदंतिष्टो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते कृतुरंभविद्द्वि श्रितः। अग्निरग्रे प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद हिवरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंतुः हि शंक्रा। विश्वैर्देवैर्युज्ञियैः संविदानौ। दीक्षाम्स्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तिद्वर्ष्णुः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमणेषु। अधि क्षियन्ति भुवनानि विश्वा। नूमर्तो दयते सिन्ष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दार्शत्॥२४॥

प्र यः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्तृत्रर्यमा विवांसात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्रांय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति स्युजिनंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इं ह्यंस्य स्थविरस्य नामं॥२५॥

स्थावरस्य नाम॥२५॥
होतांरश्चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्।
प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य मृह्रा। श्रिया त्वंग्निमितंथिं जनांनाम्।
आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्च
याहि। वरीवृज्तस्थिवंरिभिः सृशिप्र। अस्मे दधद्वृषंण् र्
शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः
पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयुन्मनंवे केतुमह्राम्। अविन्दुज्योतिर्बृह्ते रणांय।

अश्विनाववंसे निह्नंये वाम्। आ नूनं यांतर सुकृतायं विप्रा। प्रात्युंक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टन्थीष्वश्विना न आसा। प्रजावद्रेतो अहंयं नो अस्ता। आवान्तोके तनये तूर्तुजानाः। सुरत्नांसो देववींतिङ्गमेम॥२७॥

त्वः सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वदन्दक्षैः सुदक्षो विश्ववंदाः। त्वं वृषां वृष्वत्वेभिर्मिहृत्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्प्रंभवो नृचक्षाः। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्प्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजाः सुंक्षितिः सुश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यो घृतासुंतिः। विभूतद्यम्न एव या उं स्प्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमो यज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवींयसे। सुमज्ञांनये विष्णवे ददांशित। यो जातमस्य महतो महि ब्रवात। सेदु श्रवींभिर्युज्यं चिद्भ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ हिवषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

सेचंते। श्रुतो गुण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रंः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायाँ ह्यर्वाङ्। प्र यत्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र १थ्यंव जग्मुः। अतिश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी सोमः पृणितं दुग्धो अश्राः। ह्वयांमिस त्वेन्द्रं याह्यर्वाङ्॥३१॥ अर्रन्ते सोमस्तन्वं भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुत्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो

विदानाः। ऋभुर्येभिर्वृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू

गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेडमान उपंयाहि

युज्ञम्। तुभ्यं पवन्तु इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्त्स्वमोको

अच्छ्रं॥३२॥

इमा धाना घृंतुस्रुवंः। हरी इहोपंवक्षतः। इन्द्र ५ सुखतंमे रथें।

एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदथें शश्सिष हरीं। य ऋत्वियः प्रते

वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिश्चारु

हरिवर्पसङ्गिरं। आचेर्षणिप्रा वृषभो जनानाम्। राजां

इन्द्रा गंहि प्रथमो यज्ञियांनाम्। या ते काकुत्सुकृता या वरिष्ठा। यया शश्वत्यिबंसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र तें

अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रों वर्ततामिन्द्र गव्युः। प्रातर्युजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयै। प्रातयावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्हि यज्ञमिश्वना दर्धाते। प्रशर्रेसन्ति कवयः पूर्वभाजः। प्रातर्यंजध्वमिधनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अर्जुष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वो यजमानो वनीयान्॥३३॥

चाश्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशन्नामांभिश्रीर्गमेम सुप्रथां भजामहे विशन्तु याह्यंर्वाङच्छं पिबाथः

नक्तं जाताऽस्योपधे। रामे कृष्णे असिंक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासंश्र पिलतं च। निरितो नांशया पृषेत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। परां श्वेतानिं पातय। असिंतन्ते निलयंनम्। आस्थानमसिंतन्तवं॥३४॥

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मंणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सर्रूपा नामं ते माता। सर्रूपो नामं शुन १ हुंवेम मुघवांन्मिन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये समत्सं। घ्रन्तं वृत्राणि स्ञितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसं। नि वो वनां जिहते

यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृश्चिमातरः। युधे

ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥

यदुंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्चन्ति वनस्पतीन्॥३६॥ प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सदङ्कासी। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समत्सुं त्वा हवामहे।

स्मत्स्विग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्ररोधसम्। सङ्गंच्छध्व संवंदध्वम्। सब्वौं मना स्सि जानताम्॥३७॥ देवा भागं यथा पूर्वै। सञ्जानाना उपासंत। समानो मञ्जः सिनितः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानङ्कितो अभि सर् रेभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः।

संज्ञानंत्रः स्वैः। संज्ञान्मरंणैः। संज्ञानंमिश्विना युवम्।

यथां वः सुसहासंति॥३८॥

इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पतिः। संज्ञान र सविता करत्। संज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगंन्मु शर्म ते वयम्॥३९॥

अग्रे हिरंण्यसन्दशः। अदंब्येभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्नः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गवांमृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूश्ता। उभया ह्स्त्या वस्। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचीं वस्तवं द्रस्मां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहंडंनम्। देवां सश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्यर्तेनं मुश्चत। ऋतस्यर्तेनं दित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। युज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेंकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येंन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥ द्रुपदादिव मुश्रत्। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव। पूतं पवित्रेणेवाज्यम्। विश्वे मुश्रन्तु मैनंसः। उद्वयन्तमंसस्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवन्देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥४३॥

तर्व कृषि वनस्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नर्व च॥-----[४] वृषासो अर्शः पंवते हविष्मान्त्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋंतयुः श्तायुः। स मा वृषाणं वृष्भं कृणोतु। प्रियं विशा सर्ववीर स्पृवीरम्। कस्य वृषां सुते सर्चा। नियुत्वांन्वृषभो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणेपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मर्नः॥४४॥ त सधीचीं रूतयो वृष्णियानि। पौ इस्यांनि नियुतः सश्चरिन्द्रम्। सुमुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचेसङ्गिर आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयुन्त्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चुक्रिया शचीभिः। विष्वंक्तस्तम्भं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुंध्रम्। वार्णवांतुस्तर्विषीभिरिन्द्रं:॥४५॥

दृढान्यौं घ्रादुशमांन् ओर्जः। अवांभिनत्कुकुमः पर्वतानाम्।

आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। र्यिं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकन्धेंहि जीवसेँ। त्व सोम महे भगम्ँ। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षंन्दधासि जीवसेँ। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविष्टिषु॥४६॥

रजारंसि चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच्रं सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामरेपसम्। अयुंक्त सप्त शुन्ध्युवंः। सूरो रथंस्य नित्रियंः। ताभियाति स्वयुंक्तिभिः। विहिष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसिंतन्देव वस्वः। दविध्वतो र्श्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वन्तः। पूर्जन्याय प्र गायत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छतु। अच्छां वद त्वसंङ्गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यन्नम्साऽऽविवास। कनिन्नदद्वृष्भो जीरदानुः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवांं कृणोत्यवंताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्। तस्मा इदास्यें हुविः। जूहोता मधुंमत्तमम्। इडाँन्नः संयतंङ्करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन् शुचंयः सप्यन्। नामानि चिद्दधिरे युज्ञियानि। असूदयन्त तनुवः सुजाताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भन्थत्तर्थं स्वस्तयौ। ययोरिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोरान्नदो निहिंतो महंश्च। शुनांसीरावृत्भिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनाँ। हथो वृत्राण्यंप्रति। युव हि वृत्रहन्तमा। याभ्या हस्वर्जयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यौ। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हवे वाम्॥५०॥

पन इन्द्रो गविष्टिषु तन्तुक्षर्थ सुजांताः सखां सह चं॥————[६]

मन् इन्द्रो गविष्टिषु तन्तुङ्गर्भेष्ट्र सुजांताः सखां सुन चे॥————[५] उत नेः प्रिया प्रियासुं। सुप्तस्वसा सुर्जुष्टा। सरंस्वती स्तोम्यां- ऽभूत्। इमा जुह्वांनायुष्मदा नमोभिः। प्रति स्तोम्पं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मान्प्रियतंमे दर्धानाः। उपस्थेयाम शर्णन्न वृक्षम्। त्रिणि प्दा विचेन्नमे। विष्णुंर्गोपा अदांभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देव्यवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धंरित्था। विष्णोः पदे पर्मे मध्य उत्संः। कृत्वादा अस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्तस्रेक्णाः। मर्त आनाश सृवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्र्हिः सींद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥ उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंत्सावीः सौभंगम्। परां दुष्वप्रिय स्व। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रन्तन्म आ स्व। श्रुचिमकैर्बृह्स्पतिम्॥५३॥ अध्वरेषं नमस्यत। अनाम्योज आ चंके। या धारयंन्त देवा

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एतिं। सक्तिमिन्द्र सच्यंतिम्। सच्यंतिञ्जघनंच्युतिम्॥५४॥ कनात्काभान्न आ भंर। प्रयप्स्यन्निंव सक्थ्यौं। वि नं

कुनात्कामात्र आ मरा प्रयुप्स्यात्रव सुक्था। वि न इन्द्र मृधो जिहा कनीखुनदिव सापयन्। अभि नः सुष्टुतिन्नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधात्सपम्। कार्मस्य तृप्तिमान्न्दम्। तस्याँग्ने भाजयेह माँ। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनंसश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमहि। पृशूना रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहमस्या अतृप स्त्रिय पुमान्। यथा स्त्री तृप्यंति पुर्से प्रिये प्रिया। पृवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यंः प्रियः। ददामीत्यग्निवंदति। तथेतिं वायुरांह्
तत्। हन्तेतिं स्त्यश्चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमितिं।
आपस्तत्सत्यमा भरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ
मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिवंदन्नन्यम्स्मात्।
वैश्वान्रात्पुरण्तारम्ग्रेः॥५७॥

वैश्वान्रात्पुंरपृतारंम्ग्रेः॥५७॥
अथेममन्थन्नमृत्ममूंराः। वैश्वान्रङ्क्षेत्रजित्यांय देवाः।
येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि।
वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः।
पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमूतये
दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तिरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षित। देवाङ्श्च याभिर्यजंते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जते। न सङ्स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभंयं तस्य ता अन्। गावो मर्त्यंस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियों ऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वार्चमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पशवीं वदन्ति। सा नों मन्द्रेषमूर्जन्दुहांना। धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतुं॥६०॥ यद्वाग्वदंन्त्यविचेतनानिं। राष्ट्रीं देवानांनित्रष्सादं मुन्द्रा। चर्तस्र ऊर्जन्दुदुहे पया रेसि। क्वं स्विदस्याः परमं जंगाम। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार् समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिशश्चतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकंर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गुणवान्त्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपला वाचं मनंसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपला श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयत् जर्हंषाणः। अयं वां जयतु वाजंसातौ। अग्निः क्षंत्रभृदिनिभृष्टमोजः। स्ह्सियो दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः सिमधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्पुरोडाश्ं बृह्स्पतिं ज्ञघनंच्युतिमान्नदो भगंस्य तृप्याण्यग्नेः पृथिवी यज्वंन एतु प्रदिश्श्चतंस्रो

वार्जसातौ चृत्वारिं च॥-----[६]

वृषाँऽस्य १ शुर्वृष्भायं गृह्यसे। वृषाऽयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्भस्य या कुकुत्। विषूवान् विष्णो भवत्। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जनेंभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्भं कृणु। यः सुशृङ्गः सुवृष्भः। कुल्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अर्रूरेणेव सूर्पिषां। मृथंश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतंनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो हुविः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथो हिन्त पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमातीः। नि शृंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेहि प्र भेरा सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृषम् तिष्ठ शुष्मैंः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्रे जेता त्वं जय। शत्रूंन्त्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधीं नुद। एतन्ते स्तोमंन्तुविजात् विप्रंः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्रे प्रतित्वन्दंव हर्याः॥६६॥ सुवंवतीर्प एना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय

सुवंवितीर्प एना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जित्राषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृतनासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्य सुवर्महत्। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्श्स। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वा॥६७॥ इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिंवः कृणोतु। अयं कृत्ररगृंभीतः। विश्वजिदुद्भिदित्सोमंः। ऋषिर्विप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्भिः शिवाभिः। वायों शुक्रो अयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्ठिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षत्रियांणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजाः। अस्मा इंन्द्र महि वर्चा रेसि धेहि। अवर्चसंङ्कणुहि शत्रुंमस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निरमुं भंज योऽमित्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षत्रस्यं ककुभिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥ असमे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथाङ्घर्मदुघेव धेनुः। अय^५ राजाँ प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृषभ इस्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मानवानाम्। उत्तरस्त्वमधेरे ते सपत्नाः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः स्अयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्र्यतः

संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयों यविष्ठ। बुलिमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिंष्ठस्य सुमृतिश्चिंकिद्धि। बृहत्तें अग्ने महि शर्म भुद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वधुस्नैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विश्रश्चिके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥ प्र सद्यो अंग्ने अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो बभूथं। ईडेन्यों वपुष्यों विभावाँ। प्रियो विशामतिंथिर्मानुंषीणाम्। ब्रह्मं ज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवुमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हति ब्रह्मंणा स्पर्धेतुङ्कः। ब्रह्म सुचो घृतवंतीः। ब्रह्मणा स्वरंवो मिताः॥७२॥ ब्रह्मं युज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः।

अभिुभूरंसि। जुहि शत्रू रप मृधों नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामसि जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वसूनि जिगीवान्त्सहोभिर्मिता नंश्वत्वारि

च्या अवस्थारा आर्थसम् ६वा विचारमु वर्षाः ।अस्यारराह्यासार्याः सञ्चरकार

स प्रंत्वन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेन संयता। बृहत्तंतन्थ भानुना। नवृत्रु स्तोमंम्ग्नये। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसोः कुविद्वनातिं नः। स्वारुहा यस्य श्रियों दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने यज्ञस्य चेतंतः। अदांभ्यः पुरएता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव् सोमांय वाजिने। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट् शुचितमं वसुं। नव से सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमतिं वृंणीमहे॥७५॥ स नो रास्व सहस्रिणंः। नव हिवर्जुषस्व नः। ऋतुभिः सोम् भूतंमम्। तदङ्ग प्रतिहर्य नः। राजन्त्सोम स्वस्तये। नव्हस्तोम् त्रव हिवः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्जुंषेता स् सचेतसा। शुचित्रु स्तोम् त्रवंजातम् द्य। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा जुषेथांम्॥७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजर सुद्य उंश्वते

धेष्ठाँ। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौँ। युज्ञन्न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तश् सुवर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाश्स्तंप्यत॥७७॥

हविषोऽस्य नवंस्य नः। सुवर्विदो हि जंजिरे। एदं बर्हिः

सुष्टरीमा नवेन। अयं यज्ञो यजंमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी समीचीं। तन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पृष्टिम्मृत्त्रवेन॥७८॥ इमे धेनू अमृतं ये दुहातें। पयंस्वत्युत्तरामंतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहंनः। चित्रभांनुर्घुतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्रे तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्रे देवतांभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव्ड् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भुद्रान्नः श्रेयः समनैष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विंशस्व। शन्तोकायं तनुवें स्योनः। एतमु त्यं मधुना संयुतं यवम्। सर्रस्वत्या अधिमनावंचकृषुः। इन्द्रं आसीत्सीरंपतिः श्तकंतुः। कीनाशां आसन्म्रुतः सुदानंवः॥८०॥

पुरुपता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृतन्नवेंन मीयसे स्योनश्चत्वारिं च॥————[८]

जुष्टश्चक्षंषो जुष्टींनरो नक्तआता वृषास उत नो वृषाँऽस्य १ शः सप्रंत्नवद्ष्टौ॥८॥ जुष्टो मन्युर्भगो जुष्टी नरो हरिंवर्पसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामुत नः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशीतिः॥८०॥

जुष्टंः सुदानंवः॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रक्षिति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनिं। स इत्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो ह्विः। मनसिश्चित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम॰ हवम्ँ। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् यूज्ञपंतिन्दधंत्। जुषतां मे वागिद॰ ह्विः। विराङ्देवी पुरोहिता। हृव्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशा॰सि देवाः पंरमे ज्नित्रें। सा नों विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिंर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानांय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमहि। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतींर्यताम्। अनंन्धाश्चक्षुंषा वयम्। जीवा ज्योतिंरशीमहि। सुवर्ज्योतिंरुतामृतम्। श्रोत्रेण भूद्रमुत शृंण्वन्ति सृत्यम्। श्रोत्रेण वार्चं बहुधोद्यमांनाम्।

श्रोत्रेण मोर्दश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोमि। येन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्यें दिशः शृण्वन्त्युंत्त्रात्। तदिच्छोत्रंं बहुधोद्यमानम्। अरान्न नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अश्यमनंपस्फरनी मृत्यः सम चे॥———[१] उदेहिं वाजिन्यो अस्यप्स्वंन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदञ्जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहं रेरोह् रेरोहिंत आर्रुरोह। प्रजािमवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। तािमः सःरंब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहांर्षोद्राष्ट्रमिह रोहिंतः। मृधो व्यांस्थदभयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वंरीभिः। राष्ट्रन्दुंहाथामिह रेवतींभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाचक्राणः प्ररुहो रुह्ंश्च। दिवं गृत्वायं महृता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रम्नेनत् पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृत्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विंशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येतु रोहिंतः॥५॥ यूयमुंग्रा मरुतः पृश्विमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृंणीथ शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अद्दर्द्द्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंद्दर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुव्रन्वंविन्दन्। सृशेवंन्त्वा भानवो दीदिवा सम्मा समग्रासो जुह्वो जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिन्मा घृतेनं। सरसंमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं मह्ते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्यर सुयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्ससा७॥

अस्त्वेतु रोहितो नाको महारेसि॥———[२] पुनर्न इन्द्रो मघवां ददातु। धनांनि श्राक्रो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणुतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषो जुषाणः। यानि नोऽजिनन्धनांनि। जहर्थं शूर मन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नस्तानि। अनेन ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परि। सर्वाभ्योऽभंयङ्करत्॥८॥ जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा स्मृधेँ त्वा। पुरो दंधे अमृत्त्वायं जीवसेँ। आकूंतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृंद्धौ। इन्द्रंस्य युञ्जते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो दंधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेन्द्धृदंये निविष्टम्॥९॥

सेदग्निर्ग्नी १ रत्यैत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशांनान्त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं हिवषां वयम्। विश्वा आशा मधुना स १ सृंजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यजमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥

अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः संह्स्री। पूषा नो गोभि्रवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समंनक्त युज्ञेः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगरं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिद्ददिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

क्रिविंष्टमस्यतान्नवं च॥

-[३]

आ नो भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि ते देष्णस्यं धीमहि प्ररेक। उर्व इंव पप्रथे कामो अस्मे। तमापृणा वसुपते वसूनाम्। इमङ्कामं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सुवर्यवो मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कुशिकासो अक्रन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानि चकारं प्रथमानि वज्री॥१२॥

अह्न्नहिमन्वपस्तंतर्व। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्न्निहुं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र ई स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इंव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणो-ऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्वपिबत्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथम्जा महीनाम्॥१३॥ यदिन्द्राहंन्प्रथमजा महीनाम्। आन्मायिनाममिनाः प्रोत

यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महींनाम्। आन्मायिनामिंनाः प्रोत मायाः। आत्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न किलांविवित्से। अहंन्वृत्रं वृत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्ज्रण महता व्धेनं। स्कन्धारंसीव कुलिंशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरन्तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥ नातांरीरस्य समृतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहांया अर्तिः। वसुंदिधे हस्ते दक्षिणे। त्रिण्नं शिश्रथत्। श्रवस्यया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिष्ध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिषे। विश्वंस्मा इत्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुजिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यिजेष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यि बंहुलाङ्गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंदमृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद ससा। पूषा रक्षतु नो र्यिम्॥१६॥

ड्मं यज्ञम्भिनां वर्धयंन्ता। ड्मौ र्यिं यजंमानाय धत्तम्। इमौ प्शून्नंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सृत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं नों ह्व्यं घृतवंत्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभेरेमा ह्वी १ षिं। ड्मानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिंव्य १ सुभगांसः स्याम॥१७॥

वुज्यहींनामृजीषं व्यृंण्वति रक्षतु नो र्यिः सौर्भगान्येकं च॥———[४]

युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिं दधातु। युज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं युज्ञो वर्धताङ्गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं बर्हिरित बर्ही श्ष्यन्या। इमं युज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं व्यं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तन्त्वां भग् सर्व् इज्ञोहवीमि। स नो भग पुरण्ता भंवेह। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भग्मान्धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वंतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वंतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्तः शश्वंतीनाः समानाः शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं परमा रुरोह॥१९॥

इयमेव सा या प्रंथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणिं कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नं मेतत्। स्नातनं वितंत्र् षण्मंयूखम्। अवान्याः स्तन्त्रंन्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गंमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्य। वृष्टिं ये विश्वं मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः समिद्धः। एतं जुंषध्वङ्कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसन्नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पिति सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिन्दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष संपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यः॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिष्टिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं केरिष्ठः। पूष्ट् स्तवं व्रते वयम्। निरंष्येम कृदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः समुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिरेक्षे चरन्ति। याभिर्यासि दृत्याः सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥ अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिव विन्दती ३। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दृश्यते॥२३॥ उतो अंरण्यानिः सायम्। शुक्टीरिंव सर्जति। गामुङ्गेषु आ ह्वंयति। दार्वङ्गेषु उपावधीत्। वसंत्ररण्यान्याः सायम्। अर्त्रुक्षदिति मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य ज्ञथ्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धीः सुर्भीम्। बहुन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥ स्याम् क्रेष्ह् युवानः शुन्थरिच्छमांने दृश्यते निपंद्यते च्लारि च॥———[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्याय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्माणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्रमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्रामि वर्रणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवं ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतिरंक्ष सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशोः। वातंपत्नीर्भि सूर्यो विच्षे। तासान्त्वा जरस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं परा्चैः। अमोचि यक्ष्मां द्वितादवंत्ये॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदत्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यंमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नसृजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेन्त्रियाञ्जांमिश्र्भात्। द्रुहो मुंश्चािम् वरुणस्य पाशात्। बृहंस्पते युविमन्द्रंश्च वस्वंः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तः रियः स्तुंवते कीरयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधमिन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हृता दीर्घमध्वांनमायन्। अनन्तमर्थमिनंवर्त्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंत्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्श्शोभंमाना कृन्येव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गंला हुविषां वर्धयन्ति। सा नंः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदांनि देवा अयमस्मीति माम्। अहर हित्वा शरीरं जरसंः पुरस्तात्। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनसि सम्भृताम्। हित्वा शरीरं जुरसंः पुरस्तात्। आ भूतिम्भूतिं व्यमंश्जवामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रंथमा व्यौच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चंरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गंमन्त्यन्तम्॥२९॥

क्रोम्यवंत्यें चिच्छुभेऽश्ववामहे च्त्वारि च॥———[६] वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोिम् स्वाहाँ।

अभिभूतिरहमार्गमम्। इन्द्रंसखा स्वायुर्धः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमार्गात्। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरसि विश्वायुंरसि। सर्वायुंरसि सर्वमायुंरसि। सर्वम्म आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नंपतिः। ब्रह्मं क्षृत्रङ् स्वाहाँ॥३१॥ प्रजापंतिः प्रणेता। बृहस्पतिः पुरएता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरप्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंन्नादोऽन्नंपतिः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। वरुणः

सम्राद्वमाद्वीतः। साम्राज्यम्स्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहा॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपतिः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पतिर्ब्रह्म ब्रह्मंपतिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्रश् राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विदंतिः। विश्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। त्वष्टां पशूनां मिथुनानाः रूपकृद्रूपपंतिः। रुपेणास्मिन् युज्ञे यजंमानाय पृशून्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥

च् स्वाहा साम्रांज्यमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहा विशंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहां चृत्वारिं च (अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रो बृहुस्पतिः सिवृता पूषा सर्रस्वती त्वष्टा

दर्श॥॥———[७]

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स ईन्द्र चित्राः अभि तृन्धि वाजान्। आ ते शुष्मो वृष्भ एतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तांत्। आ विश्वतो अभिसमेंत्वर्वाङ्। इन्द्रं चुम्नर सुर्वर्वद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीकें चिद् लोककृत्। सङ्गे समत्सुं वृत्रहा। अस्माकें बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय श्रुंनासीरम्। अस्मिन् युज्ञे हेवामहे। आ वाजै्रू पं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो हिवः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र हव्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता सजोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी हिवरिदं जुंषस्व। वयंः सुपूर्णा उपंसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नार्धमानाः। अपं ध्वान्तमूणुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयंऽव बुद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥ मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन ज्योतिरजंनयन्नृतावृधंः। देवं देवाय जागृवि। कामिहैकाः क इमे पंतङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंणुं चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वन्दस्व वर्रुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरंममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं विय ५ सत्॥ ३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नाके सुप्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुंर्ण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अप्सु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपंश्च विश्वभेषजीः। यद्प्सु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमङ्गि सरस्वति। या सरस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्टभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंककृञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥ ज्योतिषा त्वा वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियंः। यतो जातो अरोंचथाः। तं जानन्नंग्न आरोह। अथां नो वर्धया

रियम्। या ते अग्ने युज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षंय एहिं। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥ देवेभ्यो हव्यं वह नः प्रजानन्। आयुंः प्रजा रियमस्मासुं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मुघवानमुग्रम्। सुत्रा दर्धानुमप्रीतिष्कुत्र शवार्रसि। म॰हिंष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियोंऽववर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वृज्री। त्रिकंद्रुकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद् महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥ सैन र सश्चद्वेवं देवः सत्यिमिन्दु र सत्य इन्द्रेः। विदद्यती सरमां रुग्णमद्रैः। महि पार्थः पूर्व्यः सद्धियंकः। अग्रं नयत्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जानतीगात्। विदद्गव्य र सरमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजंते विट्। आ ये विश्वाः स्वपत्यानिं चकुः। कृण्वानासों अमृतत्वायं गातुम्। त्वं नृभिंनृंपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो द्भीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सुर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं र्भि गा इन्द्र तृन्धि। अग्रे बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षारंसि सेधा अस्मात्संमुद्राह्मंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतितिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वां। वसूंनि पुरुधा विशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अधामृतेन जरितारंमिङ्गा। इन्द्रंः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवृत्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिददांस् ज्येष्ठम्। संवृत्सर्थ शुनवृत्सीरंमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनां। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतितिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तां गृव्यन्तां वाज्यंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन्थ हुवेम॥४५॥

अर्चृत् ह्विर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भल्या हांसीत्त्वमुरुं देवहूंतौ नस्त्मना पद्वं॥——[८]

प्राण उदेहि पुन्रा नों भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूना स हैं पाह्यष्टौ॥८॥ प्राणो रंक्षत्यगृंभीता धाराव्रा मुरुतों दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारि श्वत्॥४५॥ प्राणः शुनः हुंवेम॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणं। अमृतांममृतेंन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेंन। सोमौंऽस्यश्विभ्यौं पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हविः॥१॥

दधन्वा यो नर्यो अप्स्वंन्तरा। सुषाव सोम्मद्रिंभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण शश्वंता तना। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सर्खां। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥ इन्द्रेस्य युज्यः सर्खां। ब्रह्मं क्षत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमंः सुत आसुंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यर्जमानाय धेहि। कुविदङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैंषां कृणुत भोजनानि। ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न जुग्मुः। उपयामगृहीतोऽस्यिभयां त्वा ज्रष्टं गृह्णामि॥३॥

सरेस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्ते जंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलांय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस् बलं मियं धेहि। नाना हि वां देवहिंत १ सर्दः कृतम्। मा स॰सृंक्षाथां परमे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि रसीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥ उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सारुस्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्ं। एष ते योनिर्मोदांय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महों ऽसि महो मियं धेहि। सहों ऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतत्रिण र् सि॰हम्। सेमं पात्व॰हंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भद्रेणं पृङ्ग। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्ग॥५॥

कुङ्गां क्रिएसो धिया। ऋतेनं स्त्यमिंन्द्रियम्। अन्नांत्परिस्रुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षुत्रम्। ऋतेनं सुत्यमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशदिन्द्रियम्। गर्भो जुरायुणा-ऽऽवृंतः। उल्बंं जहाति जन्मना। ऋतेनं सुत्यमिन्द्रियम्॥७॥ वेदेन रूपे व्यंकरोत्। स्तास्ती प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमौ व्यपिबत्। सुतासुतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। स्त्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिंन्द्रियम्। दृष्ट्वा पंरिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। विपान ५ शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्थेन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अ्द्धः क्षीरं व्यंपिवृज्जमंनुर्तेनं स्त्यमिन्द्रियः श्रृद्धाः सत्ये प्रजापंतिर्धौ चं॥——[२] सुरावन्तं बर्हिषदः सुवीरम्। यज्ञः हिन्वन्ति महिषा नमोभिः। दधानाः सोमं दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजंमानाः स्वकाः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमंस्य शुष्मः सुर्यया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजंमानं मदेन।

सरंस्वतीमृश्विनाविन्द्रंमृग्निम्। यमृश्विना नमुंचेरासुरादधि। सरंस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

इमन्तर शुक्रं मधुमन्तिमिन्दुम्। सोम्र् राजांनिम्ह भक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबुच्छचीभिः। अहन्तदंस्य मनसा शिवनं। सोम्र् राजांनिम्ह भक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षंन्यितरः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण श्वारायुंषा। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्तायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्यवै। अग्न आयूर्षिष पवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवजनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यतें प्वित्रंमुर्चिषि। उभाभ्यान्देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरो यम्राज्ये। तेषां लोकः स्वधा नमः। युज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समन्माः। जीवा जीवेषुं माम्काः। तेषा्ड् श्रीमीयें कल्पताम्। अस्मिँ होके शत र समाः। द्वे सुती अंश्रुणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यानाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेजत्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद॰ हिवः प्रजनेनं मे अस्तु। दर्शवीर सर्वगण स्वस्तयै। आत्मुसनि प्रजासनि। पृशुसन्यंभयुसनि लोकुसनि। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोषमिषमूर्जमस्मासुं दीधर्त्स्वाहाँ॥१३॥

इन्द्रियायं पितरंः शतायुंषा पुनन्तुं मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पतार स्वस्तये पश्चं

सीसेन तन्त्रं मनंसा मनीषिणंः। ऊर्णासूत्रेणं कवयों वयन्ति। अश्विनां यज्ञ संविता सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वर्रणो भिषज्यन्। तदंस्य रूपममृत शर्चीभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः सर्रराणाः। लोमांनि शष्पैर्बहुधा न तोकांभिः। त्वर्गस्य मा र समंभवन्न लाजाः। तदिश्वनां भिषजां रुद्रवंर्तनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थि मुज्ञानं मासंरैः। कारोतरेण दर्धतो गवान्त्विच। सरेस्वती मनसा पेश्वलं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वर्पुः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नुग्रहुधीर्स्तसंर्न्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतं जनित्रम्। सुरंया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मृतिं बाधंमानाः। ऊर्वध्यं वातर् सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवता जीजान। यकृत्क्रोमानं वरुणो भिष्ज्यन्। मतस्त्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्त्राणि स्थाली मधु पिन्वमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शवीभिः। आसन्दी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो विनिष्ठर्जनिता शवीभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः श्तधार् उत्संः। दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यंः।
मुख् सदंस्य शिर् इत्सदेन। जिह्वा पवित्रमिश्वना सस्
सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालंः। वस्तिर्न शेपो हरंसा
तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेन तेजो ह्विषां
श्वतेनं। पक्ष्मांणि गोधूमैः क्वंलैरुतानिं। पेशो न शुक्रमसिंतं

वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो निस वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वत्युपवाकैंर्व्यानम्। नस्यांनि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्मो बलाय। कर्णांभ्या श्रीत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूंणि न व्यांग्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सिर्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिजा तद्धिनाँ। आत्मान्मङ्गैः समंधात्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपर श्तमान्मायुंः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतन्दधांना। सरंस्वती योन्याङ्गर्भमन्तः। अधिभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपार रसेन् वर्रुणो न साम्नाँ। इन्द्रई श्रिये जनयंत्रप्स राजाँ। तेजंः पश्नार ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अधिभ्यान्दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्याम्। अमृतः सोम् इन्द्रं॥१९॥

अन्तरं आरादुन्तर्वसाते व्याघ्रलोमः राजां चृत्वारिं च॥_____[४]

मित्रोंऽसि वरुंणोऽसि। समहं विश्वैंद्वैः। क्षुत्रस्य नाभिंरसि। क्षुत्रस्य योनिंरसि। स्योनामा सींद। सुषदामा सींद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वरुंणः। पस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुऋतुंः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनोंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनोंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्याम्। सरंस्वत्ये भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्ते। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रस्येन्द्रियेणं। श्रिये यशंसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मै त्वा कार्य त्वा। सृश्लोकाँ (४) सुमंङ्गलाँ (४) सत्यंराजा (३) न्। शिरों मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ं। त्विषः केशांश्च श्मश्रूणि। राजां मे प्राणों-ऽमृतम्। सम्राद्वक्षुः। विराद्धोत्रम्। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहेः। मनो मन्यः। स्वराङ्गामेः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥ चित्तं मे सहंः। बाहू मे बलंमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्मं वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीमें राष्ट्रमुदर्म रसौ। ग्रीवाश्च श्रोण्यौ। ऊरू अर्ब्री जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि स्वंतः। नाभिमें चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥२४॥ आनुन्दनन्दावाण्डौ में। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्घाँभ्यां पद्मां धर्मोंऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रति क्षुत्रे प्रतितिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रतितिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतितिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रतितिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतितिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवतुः सवे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैंः। द्वितीयांस्तृतीयैंः। तृतीयांः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंभिः॥२६॥

यजू ६ षि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचों याज्यांभिः। याज्यां वषद्कारेः। वषद्कारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्त्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिमंमं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्सं म् उपनितः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पस्त्यांस्वा सरंस्वत्ये भेषंज्येन श्रीरङ्गानि भूसद्यज्ञे यज्ञी यज्ञीभूरूपंनितिर्द्धे चं॥——[५]
यद्देवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। अग्निर्मा
तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि
नक्तम्। एना १ सि चकृमा व्यम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः।
विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि

चकुमा वयम्॥२८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे यदरंण्ये। यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्यैं। एनंश्चकुमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमिस। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुश्च॥२९॥

अवंभृथ निचङ्कण निचेरुरंसि निचङ्कण। अवं देवैर्देवकृंतमेनों-ऽयाट्। अव मर्त्येर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। द्रुपदाद्विन्मुंमुचानः। स्वित्रः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥ पूतं प्वित्रेणेवाज्यम्। आपंः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्वयन्तमंसस्परि। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवन्दंवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वरुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वरुणस्य पाशः। प्रधाँऽस्येधिषीमिहं। समिदंसि॥३१॥ तेजोऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन समंसृक्ष्मिह। पर्यस्वा अग्र आगंमम्। तं मा स॰सृंज वर्चसा। प्रजयां च धनंन च। समावंवित पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वैश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुङ्कामं व्यंश्ववै। भूः स्वाहाँ॥३२॥

स्वप्न एनारंसि चकुमा व्यं मृंश्च मलांदिव स्मिदंसि जगुत्रीणि च॥———[६] होतां यक्षत्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मन्त्समिध्यते। ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपांतम्। ऊतिभिजेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव स्रुवर्विदम्। पृथिभिम्धंमत्तमेः। नराश स्मेन् तेजंसा॥३३॥

वेत्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्ष्विद्धांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममंत्र्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वज्रंहस्तः पुरन्द्रः। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्भन्नर्यापसम्। वसुभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बृहिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदोजो न वीर्यम्। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुषे मातरौ मही। सवातरौ न तेजंसी। वत्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा। भिषजा सर्खाया। हविषेन्द्रं भिषज्यतः। कवी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्यर्जं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयस्त्रिधातंवीपसंः। इडा सरम्वती भारती॥३६॥ म्हीन्द्रंपत्नीर्हविष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरमिन्द्रं देवम्। भिषज्रं सुयजंङ्घत्रियम्। पुरुरूप र सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार ५ श्तकंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥ मध्वां समञ्जन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति हव्यं मधुंना घृतेनं।

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विन्द्र्ड् स्वाहाऽऽज्यंस्य। स्वाह्य मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाह्य स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा अंज्यपान्। स्वाहेन्द्र रं होत्राञ्जुंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होत्र्यजं॥३८॥

तेजंसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंषाणा द्वे चं (समिधेन्द्रन्तनूनपातिमिडांभिर्बर्हिष्योजं उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वनस्पतिमिन्द्रम्॥ समिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्शता वर्ज्रबाहुः। ज्ञ्यानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशक्षः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मधुना सम्अन्। हिरंण्येश्चन्द्री यंजित प्रचेताः। ईडितो देवैरहरिवाक अभिष्टिः। आजुह्वांनो हिवषा

शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो ब्रहिर्हरिवान् इन्द्रेः। प्राचीनर् सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमानः स्योनम्। आदित्यैर्क्तं वसुंभिः स्जोषाः। इन्द्रन्दुरेः कवृष्यो धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रंयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुघे शूरिमन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुक्ते। देव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुंना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिंरह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर् ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नन्तनुं पर्यसा सरंस्वती। इडां देवी भारंती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दधिदन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्यशसे पुरूणि। वृषा यज्नन्वृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्तु देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छिमिता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्जुठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेन। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रः। वृषायमाणो वृषभस्तुंराषाट्। घृतप्रुषा मधुना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता्ड् स्वाहाँ॥४२॥

शर्धमानो महोंभेः पत्नीर्घृतेनं चत्वारि च॥————[८] आचर्षिणुप्रा विवेष यन्मां। त॰ सुध्रीचीः। सुत्यमित्तन्न

त्वावार् अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अह्नुह्रिं पिर्शयान्मर्णः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरस्तु। इन्द्रा भेर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतीनाम्। स शेवृधमिधं धाद्युम्नम्से। मिहं क्ष्रुतं जनाषाडिन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वप्त्या इषे धाः॥४३॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं युज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजा। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्।

अयाँव्यन्याघा द्वेषा १सि। आन्यावाँक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुधैं। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवाँक्षीत्। सिध्र्ः सपीतिम्न्या। नवेन पूर्वन्दयंमाने। पुराणेन नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥
देवा दैव्या होतांरा। देविमिन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंशः सावाभाँष्टां
वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवने वसुधेयंस्य
वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितृमिन्द्रंमवर्धयन्।
अस्पृक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञः सरंस्वती। इडा वसुंमती
गृहान्॥४७॥
वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशः संः।

वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराश १ संः। त्रिवरूथस्निवन्धुरः। देवमिन्द्रं मवर्धयत्। शतेनं शिति-पृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरूणेदंस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पतिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिर्रण्यवर्णो मधुंशाखः सुपिप्पुलः। देवमिन्द्रंमवर्धयत्। दिवमग्रेंणाप्रात्। आऽन्तरिक्षं पृथिवीमंद १ हीत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवं ब्रहिर्वारितीनाम्। देवमिन्द्रमवर्धयत्। स्वासुस्यमिन्द्रेणासंत्रम्। अन्या ब्रही रूप्यभ्यंभूत्। वसुवने वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्तिस्विष्टकृत्। स्विष्टमुद्य करोतु नः। वसुवर्ने वसुधेर्यस्य वेतु यर्जा॥४९॥ वियन्तु यर्ज शिक्षिते शिक्षिते वंसुवनं वसुधेयंस्य वीताँय्यर्ज गृहान् वेतु यर्जाभृथ्यद्वं (देवं बुर्हिर्देवीर्द्वारों देवी उषासानक्तां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहुंती देवा दैव्या होतांरा शिक्षितौ देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशक्सी देव इन्द्रो वनस्पतिर्देवं बुर्हिवरितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयन्त्रिरंवर्धतामेकोऽ वर्धयः श्चृतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वृत्सेन् दैवीरयावीष रहताऽस्पृक्षच्छुतेन् दिवः स्वासस्थः स्विष्टः शिक्षिते शिक्षिते शिक्षितौ॥)॥_____ होतां यक्षत्सिमधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र सर्रस्वतीम्।

होतां यक्षत्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्रर् सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंलैभेष्जम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपात्सरंस्वती। अविंमेंषो न भेष्जम्। पथा मधुंमृताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥ बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्रर्यजं। होतां यक्षन्नराशश्सं न नुग्नहुम्। पतिश् सुरांये भेष्जम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं

मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५१॥ होतां यक्षदिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋष्भेण गवैन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥ यवैः

वर्धयन्। ऋष्भेण गर्वेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धंभिः। मधुं लाजैर्न मास्रम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सृष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रद्वुरो दिशः। कृव्ष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधैं। दुहे कामान्त्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्राय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रद्देव्या होतांरा भिषजा-ऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेष्जैः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षित्तिस्रो देवीर्न भेषजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिमन्द्रं हिर्ण्ययम्॥५५॥ अश्विनेडा न भारंती। वाचा सरंस्वती। मह इन्द्रांय दध्रिरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रंमृश्विनां। भिषजुं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभसो

भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥
श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं।
वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार श्रे शतक्रंतुम्। भीमं न मन्यु राजांनळ्याँ घन्नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्दांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं॥५७॥ होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरेस्वत्ये। स्वाहंर्ष्यभिनद्रांय सिः हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामांणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥

स्वाहाऽग्नि १ होत्राञ्ज्रंषाणो अग्निर्भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यर्जा। होतां यक्षदश्विना सरस्वतीमिन्द्र र सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भेः सुताः। शष्येर्न तोकांभिः। लाजेर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्राः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चर्तः। तानुश्विना सरेस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रुहा। जुषन्ता ५ सौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्। होतुर्यजं॥५९॥ वीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यज् नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेषुजं वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजांज्यपानमृताः पश्चं च (समिधाऽग्नि॰ षट्। तनूनपांत्सप्त। नराश॰समृषिः। इडेडितो यवैरुष्टो। बुर्हिः सप्ता दुरोऽश्विना नवं। सुपेशसर्षिः। दैव्या होतारा सीसेन रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमुष्टावंष्टौ। वनस्पतिमृषिंः। अग्नित्रयोदश। अश्विना द्वादंश त्रयोदश। सुमिधाऽग्निं बदर्वेर्बदर्रेर्यवैर्थिना त्विषिम्श्विना न भेषुज॰ रूपम्श्विना भीमं भामम्॥)॥———[११]

सिमंद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मो विराद्भुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर्ं शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सृते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारंसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिवहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नग्नहुंः॥६०॥ अधातामश्विना मधुं। भेषजं भिषजां सुते। आजुह्वांना

सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिर्धिनाविषम्। समूर्ज् सर् रियन्दंधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोम श्रुक्तं परिस्रुतां। सरंस्वती तमाभंरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥ क्वष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधें। दुहे कामान्त्सरंस्वती। उषासा नक्तंमिश्वना। दिवेन्द्र सायमिन्द्रियेः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्त र्

सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं पंरिस्रुता सोमम्ँ। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजन्नः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्। रूप र रूपमधुः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शृश्मानः परिस्रुताः। कीलालमिश्विभ्यां मर्थुं। दुहे धेनुः सरंस्वती। गोभिर्न सोमंमिश्वना। मासंरेण परिष्कृतां। समेधाता र सर्रस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥ नुग्रहुः पातंवे सरस्वत्यधुः सुतैंऽष्टौ चं॥————[१२] अश्विनां हविरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जभिरे। यमुश्विना सरंस्वती। हिविषेन्द्रमवर्धयन्। स बिंभेद वुलं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चा। तिमन्द्रं पुशवः सर्चा। अश्विनोभा सरस्वती॥६४॥ दर्धाना अभ्यंनूषत। हविषां युज्ञमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियन्द्रधुः। सुविता वरुणो भगः। स सुत्रामा हिवष्पतिः। यजमानाय सश्चत। सुविता वरुणोऽद्धेत्। यजमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंमिन्द्रियम्॥६५॥ वर्रणः क्षत्रमिन्द्रियम्। भगेन सविता श्रियम्। सुत्रामा यशंसा बलम्। दर्धाना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्ं। हविषेन्द्र र सरस्वती। यजमानमवर्धयन्। ता नासत्या सुपेशेसा। हिरंण्यवर्तनी नरौ। सरंस्वती ह्विष्मंती। इन्द्रं कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुघा सरंस्वती। स वृंत्रहा शृतक्रंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

व्या सरंस्वती बलिमिन्ड्रियन्नरा पद्मा——[१३]
देवं ब्रुहिः संरस्वती। सुदेविमिन्द्रें अश्विनौ। तेजो न
चक्षुंरुक्ष्योः। ब्रुहिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेर्यस्य

वियन्तु यजं। देवीर्द्वारां अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरेस्वती। प्राणं न वीर्यन्नसि। द्वारों दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥ देवी उषासांवश्विनां। भिषजेन्द्रे सरेस्वती। बलुं न

वार्चमास्यै। उषाभ्यौन्दध्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवी जोष्ट्री अश्विनौ। सुत्रामेन्द्रे सरस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यान्दध्रिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवा देवानांं भिषजां। होतांराविन्द्रंमुश्विनां। वृषद्भारैः सरंस्वती। त्विष्टं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यान्दधुरिन्द्रियम्। वृसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सरंस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषत्र मध्ये नाभ्याम्। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिव्रूथः सरंस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पुलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वन्स्पतिनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीणमृश्विभ्याम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥ स्योनमिन्द्र ते सदः। ईशायै मृन्यु राजांनं बर्हिषां

दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्निश् सोमई स्विष्ट्कृत्। स्विष्ट् इन्द्रंः सुत्रामां सिवता वर्रणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा औज्यपाः। इष्टो अग्निरिग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्ज्मपंचितिः स्वधाम्। वसुवने वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रींभ्यान्दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यान्दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वनस्पितः पद्वं (देवं ब्रुहिर्देवीद्वारों देवी उपासांवृश्विनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहृंती देवा देवानां भिषजां वषद्वारेर्देवीस्तिस्रस्तिस्रों देवीर्देव इन्द्रों नराशश्सों देव इन्द्रों वनस्पतिंदेंवं ब्रुहिर्वारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। स्मिधाऽग्निं देवं ब्रुहिः सरंस्वत्यश्विना सर्वं वियन्तु। द्वारंस्तिस्रः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वन्दुह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्रिरिन्द्रियम्। सौत्रामण्याः स्तेतासुती। अञ्चन्त्ययं यजमानः॥)॥——[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अय स्रुंतासुती यजंमानः। पर्चन्पृक्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्। गृह्णन्ग्रहान्। बुध्नन्निभ्याञ्छागु स् सरंस्वत्या इन्द्रांय। बुधन्त्सरंस्वत्ये मेषिनन्द्रांयाश्विभ्याम्। बुधनिन्द्रांयर्षभम्श्विभ्या सरंस्वत्ये। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्याञ्छागेन सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥ सरंस्वत्ये मेषेणेन्द्रांयािश्वभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणािश्वभ्याः सरंस्वत्ये। अक्षः स्तान्मेद्स्तः प्रतिंपचताग्रंभीषः। अवीवृधन्त ग्रहैंः। अपातामिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्त्सुराम्णः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्गूषः। त्वाम् द्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अयः स्तासुती यजंमानः। बहुभ्य आ सङ्गतेभ्यः। एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इतिं। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यस्मा आ च शास्वं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥७४॥ इत्रांष् यजंमानः सुष्तः चं॥———[१५]

उशन्तंस्त्वा हवामह् आ नो अग्ने सुकेतुनां। त्वश् सोम महे भगन्त्वश् सोम् प्रचिकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरं सोम् पूर्वे त्वश् सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशश्से सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शश्चतुंष्पदे। ये अग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अर्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवरेऽमृतांसो भवन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः करम्भम्। उदीरांणा अवंरे परें च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिंः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो हविरिदं जुंपन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेंभिर्वाङ्। सत्यैः कुव्यैः पितृभिर्घर्मसद्भिः। हव्यवाहंमुजरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं हविषां सपूर्यन्। उपांसदङ्कव्यवाहं पितृणाम्। स नंः प्रजां वीरवंती ५ समृंण्वतु॥ ७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥_____[१६]

होतां यक्षदिडस्पदे। स्मिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्च्छुचिंव्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यङ्गर्भमदितिर्द्धे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। र्ड्डितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यः सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभुञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृत्सङ्गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुबर्हिषदम्ँ। पूष्णवन्त्ममंर्त्यम्। सीदंन्तं बर्हिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीञ्छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षुद्धचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिंरण्ययीः। ब्रह्माण् इन्द्रं वयोधसम्। पृङ्किञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्षत्सुपेशंसे। सुशित्पे बृंहृती उभे। नक्तोषासा न दंरशते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्ठभञ्छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥ पृष्ठवाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमृत्तमं यशंः। होतांरा देव्यां क्वी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जर्गतीञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीर्हिर्ण्ययौः। भारतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराज्ञञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि विभ्रतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्तक्रंतुम्। हिरंण्य-पर्णमुक्थिनम्। रशनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। क्कुभञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्स्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्रुणं भेषजङ्कविम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दस्ञञ्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्भङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धहतावृधं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधस्ं वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं सप्त चं (इडस्प्दें-ऽग्निङ्गांयत्रीत्र्यविम्ं। शुचिंव्रत् शुचिंमुण्णिहंन्दित्यवाहम्ं। ईडेन्य् सोमंमनुष्टुभंत्रिवृत्सम्। सुब्रृह्णिदंममृतेन्द्रं बृह्तीं पश्चांविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायणा द्वारौं ब्रह्माणः पुङ्किमिह तुर्यवाहम्ं। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रंत्रिष्टुभं पष्टवाहम्ं। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जगंतीमिहानुङ्गाहम्ं। पेशंस्वतीस्तिस्रः पतिं विराजमिह धेनुत्र। सुरेतंसन्त्वष्टांरं पुष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाणृत्र। शृतकंतुं भगमिन्द्रंङ्क्कुभंमिह व्यात्र। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमतिंच्छन्दसं बृहदंष्भङ्गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषिं वसु नवं द्येहेंन्द्रियमष्टं

नव दश् गां न वयो दर्धदिडस्पदे सर्व वेत्॥॥————[१७]
सिमद्धो अग्निः स्मिधाँ। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं
इन्द्रियम्। त्र्यविर्गीवयो दधुः। तनूनपाच्छुचित्रतः। तनूपाच्
सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोवयो दधुः।
इडांभिरुग्निरीड्यः। सोमो देवो अमर्त्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवत्सो गौर्वयो दधुः। सुबर्हिर्गिः पूंषण्वान्। स्तीर्णबंहिरमंत्र्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविगींवयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गोर्वयो दधुः॥८५॥ उषे यह्वी सुपेशंसा। विश्वं देवा अमंत्र्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयो दधुः। देव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रंण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयो दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारती मुरुतो विशः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भुतः। इन्द्राग्नी पुंष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। शुमिता नो वनस्पतिः। सुविता प्रसुवन्भगम्। क्कुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंषुभो गौर्वयो दधुः॥८७॥

अमर्त्यस्तुर्यवाङ्गौर्वयो दधुर्विशो वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुश्चत्वारि च॥———[१८] वसन्तेन्त्नां देवाः। वसंविश्ववृतां स्तुतम्। रुथन्तरेण तेर्जसा। हविरिन्द्रे वयों दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनाँ। रुद्राः पंश्चदुशे स्तुतम्। बृहता यशंसा बलम्। हविरिन्द्रे वयो दधुः। व्रषाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमं सप्तद्शे स्तुतम्॥८८॥ वैरूपेणं विशौजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। शार्देन्र्तनां देवाः। एकवि १ श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्। हविरिन्द्रे वयों दधुः। हेम्न्तेनुर्तुनां देवाः। मुरुतंस्त्रिणवे स्तुतम्। बलेन शर्करीः सहंः। हुविरिन्द्रे वयों दधुः। शैशिरेणुर्तुनां देवाः। त्रयस्त्रि ५ शें ऽमृत ई स्तुतम्। सत्येनं रेवतीः क्षुत्रम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥

स्तोमें सप्तद्शे स्तुत सहों ह्विरिन्द्रे वयों दधुश्चत्वारिं च (वस्त-तेनं ग्रीष्मेणं व्र्षाभिः शार्देनं हेम्-तेनं शैशिरेण षद॥)॥——[१९]

देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया

छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वृसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वृसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्ज॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पतिमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेर्यस्य वियन्तु यर्जा। देवो नराशश्सो देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयस्य वेतु यर्ज॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। ककुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९४॥

वियन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज पश्चं च (देवं ब्रुहिर्गायित्रिया तेर्जः। देवीद्वर्ति उण्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अंनुष्टुभा वाचम्ँ। देवी जोष्ट्रीं बृहत्या श्रोत्रम्ँ। देवी ऊर्जाहंती पृङ्क्या श्रुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टुभा त्विषिम्ँ। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पितं जगत्या बलम्ँ। देवो नराशश्यों विराजा रेतः। देवो वनस्पतिर्द्विपदा भगम्ँ। देवं ब्रुहिर्वारितीनाङ्ककुभा यर्शः। देवो अग्निः स्विष्टकुदितिच्छन्दसा क्षत्रम्। वेतु वियन्तु चृतुर्वितामेको वियन्तु चृतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयश्चात्र्रवर्धतामेकोऽवर्धयश्चात्र्यश्चर्यरवर्धयश्चात्र्यस्वर्धतामेकोऽवर्धयश्चात्र्यस्वर्धयदवर्धयश्चात्र्यस्वर्धतामेकोऽवर्धयश्चात्रस्वर्धयत्॥)॥————[२०]

स्वाद्वीन्त्वा सोमः सुरावन्तर् सीसेन मित्रोऽिस यहेवा होता यक्षत्समिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र् आचर्षिणप्रा देवं बर्हिर्होतां यक्षत्समिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरंश्विनाऽश्विनां ह्विरिंन्द्रियं देवं बर्हिः सरंस्वत्यग्निमद्योशन्तो होतां यक्षिदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः समिधां वसन्तेनुर्तुनां देवं बुर्हिरिन्द्रं वयोधसं विश्शृतिः॥२०॥

स्वाद्वीन्त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्राज्याय पूतं पवित्रेणोषासानक्ता बर्दरैरधांतां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्टवाहङ्गां देवी देवं वयोधसुं चतुर्नवितः॥९४॥

स्वाद्वीन्त्वां वेतु यजं॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृत्स्तोमों भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसम्वावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसम्वावं रुन्धे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रंथन्तुरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥ अरुणो मिंमिरस्निशुं ऋः। एतद्वे ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रंह्मवर्चसमवं रुन्धे। बृहस्पतिंरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमितिं। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिसवेनं यजेत॥२॥ पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। एकांदश दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश माध्यं दिने सर्वने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। त्रयंस्त्रि १ शत्सम्पंद्यन्ते। त्रयंस्त्रि १ शद्वे देवताः। देवतां एवावंरुन्धे। अश्वंश्चतुस्त्रि॰शः। प्राजापत्यो वा अश्वंः॥३॥ प्रजापंतिश्चतुस्त्रि शो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः।

ता एवावंरुन्धे। कृष्णाजिनंऽभिषिंश्वति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन्र् समर्धयति। आज्येनाभिषिंश्वति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवित यजेत् वा अश्वां दधाति॥——[१] यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यंस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रसवायं सावित्रः।

अथ यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणि विक्रोति। निर्वृरुणत्वायं वारुणः॥५॥

वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्त्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मारुतः। मारुतो हि वेश्यः। सप्तैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। सप्तगंणा वै मरुतः। पृश्चिः पष्टौही मांरुत्या लेभ्यते। विश्वे मरुतः। विश्वं एवैतन्मंध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यतें। ऋष्भचर्मेऽध्यभिषिश्चति। स हि प्रंजनियता। द्व्राऽभिषिश्चति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जैवेनंमन्नाद्यंन समंध्यति॥६॥

वारुणो विड्वै मुरुतोऽष्टौ चं॥———[२]

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथ् यत्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायेव सांवित्रः। अथ् यद्वारहस्पत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पतीयम्। अथ् यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथ् यत्सारस्वतः। एति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वृङ्णत्वायैव वांङ्णः। अथो य एव कश्च सन्त्सूयतें। स हि वांङ्णः। अथ् यद्यांवापृथिव्यंः। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावांपृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भांगुधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्जस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इतिं। अष्टावेतानिं ह्वी॰षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्सम्वं रुन्धे। हिरंण्येन घृतमृत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्वति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयो रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवैनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्वति। घृतेनाभिषिंश्वति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

सङ्गच्छेते भागुधेयेनान्वंमन्येताः रूपञ्चत्वारिं च॥______

[३]

न वै सोमंन सोमंस्य स्वाँऽस्ति। ह्तो ह्यंषः। अभिषुंतो ह्यंषः। न हि हृतः सूयतेँ। सौमी स्तृतवंशामा लंभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पृव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चिति। रेतोधा ह्यंषा। रेतः सोमः। रेतं पृवास्मिन्दधाति। यत्किं चे राज्यसूर्यमृते सोमम्। तत्सर्वं भवति। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामृप्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स्सुंक्षिति स्सुश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामनं मदेम सोम॥१०॥

रेतः सोमः सुष्ठ चं॥————[४]

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्ट्रां सूयतें। स मंनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरुण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वांसार सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्स्यर्चा-ऽभिषिश्चिति। मृनुष्यां वै नराश्रश्सः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यत्किं चं राज्सूयंमनुत्तरवेदीकम्। तत्सर्वं भवित। ये में पश्चाशतंन्ददुः। अश्वांनाश् स्थस्तुंतिः। द्युमदंग्रे मिह् श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

पृष गोस्वः। षृद्धिर्श उक्थ्यो बृहत्सामा। पर्वमाने कण्वरथन्तरं भवति। यो वै वाज्येयः। स सम्राद्भवः। यो राज्यसूर्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापितः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यङ्गोरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। तिद्धि स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिणाः। तिद्धि स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। तिद्धि स्वारांज्यम्। अनुद्धते वेद्ये दक्षिणत आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव रथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोरेवैनमनंन्तर्हितम्भिषिंश्चिति। पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विष्शः सर्वः। रेवज्ञातः सहंसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वाराज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह। स्वाराज्यमेवैनं गमयति॥१५॥ सिर्हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्रांह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनि द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां जुजानं। सा न आगन्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृषभस्य वाजें। वातें पर्जन्ये वर्रणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां जुजानं। सा नु आगन्वर्चसा संविदाना। रार्डसि विरार्डसि। सम्रार्डसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेर्जस्वते तेर्जस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत् ओजंस्वन्तः श्रीणामि॥१७॥ इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्त श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मतं आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्ं। तेजंस्वच्छिरां अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतंः प्रत्यङ्कः। तेजंसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्ँ। ओर्जस्वच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्गः। ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु मे मुखम्ँ। पयंस्वच्छिरों अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्गः। पयंसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्।

आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्गा आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वे देवा जरंदष्टि्र्यथाऽसंत्॥२०॥ आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वांसा॰

विभूः॥२१॥ अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तम्हम्स्मा

रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गह्मनां। सोमं

इवास्यदाभ्यः। अग्निरिव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिषा

आंमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तमहम्समा आंमुष्यायणायं। पृष्ट्रौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोर्जस्वन्तः श्रीणाम्योजोऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पर्यसा सम्पिपृग्धि माऽसंद्विभूर्यज्ञियो रसो द्वे

अभिप्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्न्हा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यंं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्काव्भित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्ं। आतिष्ठन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरति स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृह्स्पतिः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

पूजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोद्नमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतन्त। अन्नमेवेनं भूतं पश्यन्तीः प्रजा उपावंतन्ते। य एतेन् यजंते। य उ

चैनमेवं वेदे। सर्वाण्यन्नानि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयित। यद्धिरंण्यन्ददांति। तेज्नस्तेनावंरुन्धे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यन्तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥ पृष्टिन्तेनं। यत्कंमण्डलुम्। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बृध्नाति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वे हिरंण्यम्। तेजं पृवात्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्ञाति। एतदेव सर्वमव्रुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्याङ्कार्यः। यद्वाँह्मण एव रोहिणी। तस्मदिव। अथो वर्ष्मैवैन र्समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतः सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यों दर्शनीयो भवति। य एवं वेदे। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥ अवेत्योऽवभृथा ३ ना ३ इतिं। यद्दंभपुञ्जीलैः प्वयंति। तित्स्वदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। एभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथो अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भः। यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनन्तेजंसा वर्चसा-ऽभिषिञ्चति॥२९॥

भ्वन्त्यष्ट्रांमवुरुध्यं वदन्ति दुर्भा यहंभपुश्चीलैः प्वयत्येकं चा——[९]
प्रजापितिरकामयत बहोर्भूयाँन्त्स्यामिति। स एतं
पश्चशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजत। ततो
वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्त्स्यामिति।
स पश्चशार्दीयेन यजेत। बहोरेव भूयाँन्भवति। मुरुत्स्तोमो
वा पृषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयों भवति। पश्च वा ऋतवंः संवत्सरः। ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतितिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पृङ्किः। पाङ्को युज्ञः। युज्ञमेवावं रुन्थे। स्प्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्रै"॥३१॥

भूयिष्ठा यन्ति द्वे चं॥—

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एंनं वर्ज्रमुद्यत्याभ्यायन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्याँ। तस्मांदेत ऐंन्द्रामारुता उक्षाणः सवनीयां भवन्ति। त्रयः प्रथमेऽहुन्ना लंभ्यन्ते। एवं द्वितीयाँ। एवं तृतीयाँ॥३२॥ एवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लंभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्यंतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यज्ते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारांज्यं वा एष यज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्दमः

वदा स्वाराज्य वा एष युज्ञः। एतन् वा एक्या वा कान्द्रमः स्वाराज्यमगच्छत्। स्वराज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥ य उं चैनमेवं वेदं। मा्रुतो वा एष स्तोमंः। एतेन् वै म्रुतो देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयो वा एष युज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्त। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। स्प्तद्रशः प्रजापंतिः। वेदं। स्प्तद्रशः प्रजापंतिः।

प्रजापंतेरेव नैतिं॥३४॥

तृतीयें गच्छति य एतेन् यजंतेऽत्ति य एतेन् यजंते य उं चैनमेवं वेद त्रीणिं च (अगस्त्यः

स्वारांज्यं मारुतः पंश्वशार्दीयो वा एष यज्ञः संप्तद्शं प्रजापंतेरेव नैतिं॥)॥———[११]

अस्या जरांसो दमा म्रित्राः। अर्चर्धूमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनुर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यिक्षे स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्धें। अन्याऽन्यां वृत्समुपं धापयेते। हिरंग्न्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यांन्ददशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चरतो माययेतौ। शिशू कीर्डन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनंः। त्रीणिं शृता त्रीष्हस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षंन्धृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांर्त्र्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कविर्गृहपंतिर्यवां। हृव्यवाङ्कुह्वांस्यः। अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः कवित्रंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे व्यम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिर्णिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडें अग्निर्इ स्ववंस्त्रमोंभिः। इह प्रस्ताो वि चं यत्कृतन्नेः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुतार्ड् स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावाणो अध्वरम्। विश्वेषामदिंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामतिंथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमृतिं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवों दिधरे युज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वाञ्चिह्वा शुचंयश्चकिरे कवे। त्वा रातिषाचों अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरेदन्त्याहुंतम्। नि त्वां युज्ञस्य सार्धनम्। अग्ने होतांरमृत्विज्ञम्ं। वृनुष्वद्देव धीमहि प्रचेतसम्। जीरन्दूतममंर्त्यम्॥४०॥

युज्ञवाहुसासपूर्य-व्यमृद्धां भिक्षंमाणाः प्रचेतस्मेकं च॥———[१२]

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सचां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं व्यम्मंहाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजं वृत्रेषुं विज्रणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः श्तत्रंतुः। उपं नो हरिभिः सुतम्। स सूर् आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्। अया धिया तरिण्रिद्रंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्तिधी अस्रो अद्रिर्विभेद। उतत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्वन्द्र स् सुहव हिवामहे। अहहोमुच सुकृतन्दैव्यं जनम्। अग्निम्मित्रं वर्रुण सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मृहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदित्सर्खिभ्यश्चरथह समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्दीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसंङ्गातुमग्निम्। उरुं नों लोकमनुं नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभंयः स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्रं स्थविरस्य बाहू। उपस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्तस्थविरेभिः सुशिप्रा अस्मे दधृदृषंणु शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्ं। दुदुह्रे वृज्जिणे मधुं। यत्सींमुपह्रुरे विदत्। तास्ते विज्ञन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमान्ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमृत्सवे चं प्रस्वे चं सासहिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदन्ननुं॥४५॥

वृज्ञिणंमयत्स्वस्ति जोंजयुर्नः सप्त चं॥_____[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तैंऽस्मात्सृष्टाः परौं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाप्नौत्। तानुक्थ्येन् नाप्नौत्। तान्थ्योड्शिना नाप्नौत्। तान्नात्रिया नाप्नौत्। तान्त्सन्धिना नाप्नौत्। सौंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तान्ग्निस्त्रिवृता स्तोमेन् नाप्नौत्॥४६॥ स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तानिन्द्रः पश्चद्रशेन् स्तोमेन् नाप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईप्सतेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेन् नाप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव भ्रश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्याम्-त्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यङ्काम्मकांमयन्त् तमौप्रुवन्। यङ्कामंङ्कामयंते। तमेतेनौप्नोति॥४८॥

स्तोमेन नाप्नोदवारयत् नवं च॥——[१४]
व्याघ्रोऽयम्ग्रौ चंरति प्रविष्टः। ऋषीणां पुत्रो अभिशस्तिपा
अयम्। नुमुस्कारेण नर्मसा ते जुहोमि। मा देवानां

मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वृष्माणंमस्मे विर्माणंमस्मे। अथास्मभ्य सिवतः सर्वतांता। दिवेदिंव आ सुंवा भूरिं पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्शहत्। येभिर्द्याम्भ्यपि १ शत्प्रजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपा १ समव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समंङ्गि। येभिरादित्यस्तपंति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो ददृशे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समंङ्गि॥५०॥ आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कलश्चित्रभानु। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कलश्चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मित्राजांनमधि विश्रयमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधिं॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासां त्वा सर्वासाः रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥ तथां त्वा सविता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। र्थीतंम रथीनाम्। वाजांना ५ सत्पंतिं पतिम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांद्भिषिश्चन्तु गायुत्रेण् छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिणतों ऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चादभिषिश्चन्तु जागंतेन छन्दंसा। विश्वें त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चन्त्वानुष्ट्रभेन छन्दंसा। बृहस्पतिंस्त्वोपरिंष्टाद्भिषिंश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥ अ्रुणन्त्वा वृकंमुग्रङ्क्षंजङ्करम्। रोचंमानं मुरुतामग्रे अर्चिषंः। सूर्यंवन्तं मुघवानं विषास्हिम्। इन्द्रमुक्थेषुं नामुहूर्तम १ हवेम। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसं नः। आ नो गव्यंतिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतंः। बाह् उपावे हरामि॥५४॥ बुभूबाव्यंयत्तेनेममंग्र इह वर्चसा समिक्कि वैयाघ्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दंसोपावंहरामि॥ [१५] अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तंमः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमनुं स्थरंन्तौ। दूरेहेंतिरिन्द्रियावाँन्यत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभितस्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रंहस्तः। आ रश्मीन्देव युवसे स्वर्थः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परि। अनु त्वेन्द्रों मदत्वनुं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता ए सोमों अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सविता सवेनं॥५६॥ इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। रथीतंम १ रथीनाम्। वाजानाः सत्पतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। माङ्गोपंतिमभि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमतिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तत्पिता द्यौः॥५७॥ तद्गावांणः सोमसुतों मयोभुवंः। तदंश्विना शृणुत ५ सौभगा युवम्। अवं ते हेड उद्तुत्मम्। एना व्याघ्रं पंरिषस्वजानाः। सि्र्हर हिन्वन्ति महते सौभंगाय। समुद्रं न सुहवंन्तस्थिवा रसम्। मुर्मृज्यन्ते द्वीपिनंमुप्स्वंन्तः। उद्सावेतु सूर्यः। उद्दिदं मामुकं वर्यः। उदिहि देव सूर्य। सह वग्नुना ममं। अहं वाचो विवाचनम्। मयि वागंस्तु

धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षंन्तु पूर्जन्यौः। सुपिप्पुला

ओषंधयो भवन्तु। अन्नंबतामोद्नवंतामामिक्षंबताम्। एषा १ राजां भूयसाम्॥५८॥

स्वधार्यं त्वा स्वेन द्याः सूर्य स्प्त चं॥———[१६]
ये केशिनः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृतं यदिदं विरोचंते।
तेभ्यो जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा सक्ष्मंजाथ। नर्ते ब्रह्मण्स्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वपंनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्टं विषंहस्व शत्रूनं। अवासाग्दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा॥५९॥
देहि दक्षिणां प्रतिरस्वायुः। अथांमुच्यस्व वर्रणस्य पाशांत्।

येनावंपत्सिवता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रुणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। र्य्या वर्चंसा स॰ सृंजाथ। मा ते केशानन् गाद्वचं पृतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृह्स्पतिः। स्विता वर्च आदंधात्॥६०॥ तभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः

सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यंकृते निधायं। पौ इस्येनेमं वर्चसा स र सृजाथ। बलेन्ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौङ्स्येंनेमं वर्चसा सन्दर्भजाथ। यत्सीमन्तङ्कङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वाँ क्षुरः पंरिववर्ज् वपङ्स्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौङ्स्येंनेमन् सन्दर्भजाथो वीर्येण॥६१॥

अवाँसार्ग्धा वृश्चिम् ह्यंग्राऽदंशहुवर्ज् वपई स्ते हे चं॥———[१७] इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहरत्। तेनांयजत। तेनैवासान्तर सई स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिह्वंघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥ यर राजांनं विशो नापचायंयुः। यो वाँ ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवेनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य हे द्वांदशे स्तोत्रे भवंतः। हे चंतुर्विर्शे। औद्विंद्यमेव तत्। एतद्वै क्षुत्रस्यौद्विंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बुलिर हरन्ति॥६३॥

हरंन्त्यस्मै विशों बुलिम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षुत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रंः क्षुत्राण्यादेत्त। न वा इमानिं क्षुत्राण्यंभूविन्नितिं। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियन्दंत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिक्तिणौ कप्लंकावुपावंहितौ स्याताँम्। पृवमेतौ युग्मन्तौ स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनोऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यः। पृवञ्छन्दा हिस। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीरभ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां पृशुभिंरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं वै क्षत्रं विशा। विशेवैनं क्षत्रेण व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै ग्रांमणीः संजातैः। स्जातैरेवैनं व्यतिषज्जित। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूढः पाप्मभिरेकं च॥-----[१८]

त्रिवृद्यदाँग्नेयाँऽग्निम्ंखा ह्यद्धिर्यदाँग्नेय आँग्नेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंने्ष गोंस्वः सिर्हेऽिभ प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंदनं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांसस्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्चन्व्याघ्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुंरिस बहुर्भविति तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यों निधान् षट्थ्यंष्टिः॥६६॥ त्रिवृत्पाप्मनी नुदते॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना १ रियवृधः सुमेधाः। श्वेतः सिंपक्ति नियुतामिभिश्रीः। ते वायवे समनसो वितंस्थुः। विश्वेन्नरंः स्वपत्यानिं चकुः। रायेऽनु यञ्जज्ञतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अर्धा वायुं नियुत्तंः सश्चत स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृहती मंनीषा॥१॥ बृहद्रंयिं विश्ववारा रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः शतिनींभिरध्वरम्। सहस्रिणींभिरुपं याहि यज्ञम्। वायों अस्मिन् हविषिं मादयस्व। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नों अस्तु॥२॥

वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजसातौ। प्रजापंतिं प्रथम्जामृतस्यं। यजांम देवमधि नो ब्रवीतु। प्रजापते त्वन्निधिपाः पुराणः। देवानां पिता जनिता प्रजानाम्। पतिर्विश्वस्य जगंतः

पर्स्पाः। हृविर्नो देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतो निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृजीवधंन्य इदं नो देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापितिं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नो ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापितः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

सहस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचं ऋ रथमविश्वमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमां नम्। ति अन्वथो वृषणा पर्श्वरिष्टमम्। दिव्यं न्यः सदं नश्च ऋ उचा। पृथिव्याम् न्यो अध्यन्तरिक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिम्समे॥ ५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वः। र्यिः सोमो रियपतिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वा। बृहद्वंदेम विदर्थे सुवीराः। विश्वान्यन्यो भुवंना ज्जानं। विश्वंमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतन्धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उदुंत्तमं वंरुणास्तंभाद्याम्। यत्किश्चेदङ्किंत्वासंः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दंक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। युज्ञो देवानाः शुचिरपः॥६॥

यज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिर्देवयानैः॥७॥

अस्मे कामन्दाशुषे सन्नमन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कभायत् निर्ऋति सेधतामंतिम्। प्र रिश्मिभिर्यतमाना अमृध्राः। आदित्याः काम् प्रयंतां वषंद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काममवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्ं। स्तीणं ब्रहिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीणं बर्हिः सींदता यज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्सता आदित्याः कामं हिविषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्ञंहराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवं भरध्वम्। ह्व्यं मृतिश्चाग्नये सुपूंतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुंषा जनूर्षं। अन्तर्विश्वांनि विद्यना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यंन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर्र सुप्रतींक्र्रं स्वश्रम्। हृव्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्यंयोध्यमीवाः। अनिग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनंर्स्मभ्यर्रं सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिर्जरेंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्रे त्वं पारया नव्यो अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उर्वी। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मनुना वृच्यमानाः। देवद्रीचींन्नयथ देवयन्तः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विर्भरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रत्ररो युजे रथम्। ज्गृभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥ वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषण र रियन्दाः। तवेदं विश्वमिनितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमिस गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिनन्द्र णो मनंसा नेषि गोभिः। सर सूरिभिर्मघवन्त्स स्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवाना च्यात्या यज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत तेनं। असमे धेहि यवंमद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियं जिर्त्रे वाजंरलाम्। आवेधस्य स हि श्रुचिंः। बृह्स्पितिः प्रथमञ्जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। स्प्तास्यंस्तुविजातो रवेण। विस्तरंश्मिरधमृत्तमा चि॥१३॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूंनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांसन्त्सुव्रप्रतित्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नो दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नो नेषि। इय॰ शुष्मेंभिर्बिस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिंरूर्मिभिंः। पारावद्घीमवंसे सुवृक्तिभिंः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

देवयानैदेवाः स्पृतं यजत्र हस्तमस्ति तमाईस्यूर्मिभिद्धे चं॥———[२] सोमो धेनु स्सोमो अर्वन्तमा्शुम्। सोमो वीरं केर्म्णयं ददातु। सादन्यं विद्थ्य स्मेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मे। अर्षाढं युत्सु त्व सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यजन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम्

ते धामांनि ह्विषा यर्जन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम् विश्वाः। त्वमुपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तरिक्षम्। त्वञ्योतिंषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृंथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वप्सु।
तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहंडन्। राजैन्त्सोम् प्रतिं ह्व्या
गृंभाय। विष्णोर्नुकन्तदंस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रंया
तनुवां वृधान। न ते महित्वमन्वंश्ज्वन्ति। उभे ते विद्य
रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं वित्से॥१६॥
विचंत्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि
गोत्राणि। आभिः स्पृधों मिथतीरिरंषण्यन्। अमित्रंस्य

व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय शृण्वे अध जयंत्रुत प्रन्। अयमुत प्र कृणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृणुते मृन्युमिन्द्रेः॥१७॥

विश्वंन्द्रढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्त्नापों अस्य। अवंधत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनंसा तिमंन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वावृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाह्मवंसे नूतंनाय। उग्र सहोदामिह त हंवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवर्धित्रन्द्रं म्रुतिश्चिदत्रे।
माता यद्वीरन्द्धन्द्धनिष्ठा। क्रंस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्।
यन्मामेक समर्धत्ताहिहत्ये। अह इ ह्यंग्रस्तिविषस्तुविष्मान्।
विश्वंस्य शत्रोरनंमं वध्सैः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः।
विश्वं देवा अंजहुर्ये सखायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यन्ते
अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधौं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं।

स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोंकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्वृत्रूतयें॥२०॥ अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशों अमदन्त पूर्वीः। अयर राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उं वीर्यावान्। स एंकराजो जगंतः परस्पाः। यदा वृत्रमत्रेच्छूर् इन्द्रेः। अथाभवद्दमिताभिक्रंतूनाम्। इन्द्रो युज्ञं वर्धयन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता १ हविर्नः। वृत्रन्तीर्त्वा दांनुवं वर्ज्ञबाहुः॥२१॥ दिशोऽह ५ हद्दू ५ हिता ह ५ हेणेन। इमं युज्ञं वर्धयन्विश्ववेदाः। पुरोडाशं प्रति गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमतंरुच्छूर इन्द्रेः। अथैकराजो अंभवुज्ञनानाम्। इन्द्रों देवाञ्छंम्बरहत्यं

दिशोऽहरहहृरहिता हरहेणेन। इमं युज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशं प्रति गृभ्णात्विन्द्रेः। युदा वृत्रमतंरुच्छूर इन्द्रेः। अथैकराजो अभवज्ञनानाम्। इन्द्रो देवाञ्छंम्बरहत्यं आवत्। इन्द्रो देवानामभवत्पुरोगाः। इन्द्रो युज्ञे हृविषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभयर् शर्म यरसत्। यः सप्त सिन्धूर रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोहिशंश्च। इन्द्रो ह्विष्मान्त्सगंणो म्रुद्धिः। वृत्रतूर्नो युज्ञिमहोपं यासत्॥२२॥

वृवुर्थ वित्स इन्द्रंस्तुरायाँस्तु वृत्रतूर्ये वर्ज्ञबाहुः पृथिव्यात्रीणिं च॥———[3] इन्द्रस्तरंस्वानभिमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय सुंमतौ यज्ञियंस्य। अपि भुद्रे सौंमनुसे स्यांम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि य ५ सत्। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रई स्तुहि वुज्रिणुड् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हविर्नः॥२३॥ हत्वाभिमातीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतो नः। स्तुहि शूरं विज्ञिणमप्रतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छुतपंतिर्जनेषु। तस्मा इन्द्रांय हिवरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमिधपाः पुरोहितः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिवषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण १ रियन्दांत्॥ २४॥ य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाद ५ हदभिमातिहेन्द्रेः। स नों हिवः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निंधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तै। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहन्नहिम्। इन्द्रो यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्रबाहुः। सेदु राजाँ क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृषभेणा

पुरोभेत्। सं वर्जेणासृजद्वृत्रमिन्द्रः। प्र स्वां मृतिमंतिर्च्छाशंदानः विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधेना। प्रजावंद्समे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमीवा अप बार्धमानौ। इमं यज्ञं जुषमाणावुपेतम्। विष्णूंवरुणा युवमध्वरायं नः। विशे जनाय मिह् शर्म यच्छतम्। दीर्घप्रयञ्ज्यू ह्विषां वृधाना। ज्योतिषा- ऽरांतीर्दहतुन्तमा स्सि। ययोरोजंसा स्किभृता रजा स्सि।

विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥ विष्णूंवरुणावभिशस्तिपावाम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं।

वीर्येभिवीरतमा शविष्ठा। याऽपत्ये ते अप्रतीत्ता सहोभिः।

अपामीवा स्पेधत स्थानं यजेमानाय शं योः। अस्होमुचां वृष्भा सुप्रतूर्ती। देवानां देवतमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदन्नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भंवता र शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥ यत्सीं विरेष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्योक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृणुध्वर् सदेने ऋतस्यं। आ नौं द्यावापृथिवी देव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वर्रूथम्। स इत्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावांपृथिवी ज्जानं। उवीं गंभीरे रजंसी सुमेकें। अवर्शे धीरः शच्या समैरत्॥२९॥ भूरिन्द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्वन्तङ्गर्भम्पदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृतर रोदसी सत्यवाचम्ं। इदं

भूरिन्द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्वन्तुङ्गर्भमृपदीद्धाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृतः रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यावापृथिवी सत्यमस्तु। पितुर्मातुर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृजनं जीरदांनुम्। उवीं पृथ्वी बहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमसा यज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगं सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात। या जाता ओषंध्योऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमराज्ञीरश्वावतीः सोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

ह्विर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुकैरैरदस्मिन्पश्चं च॥

[8]

आ वृंत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनंयं च जिन्व। विश्वन्तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः। स ई र सत्येभिः सर्खिभिः शुचिद्धेः। गोधायसं विधंनुसैरंतर्दत्। ब्रह्मंणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैं:॥३१॥ घर्मस्वेदेभिर्द्रविणं व्यनिट्। ब्रह्मणस्पतेरभवद्यथावृशम्। सत्यो मन्युर्मिह कर्मा करिष्युतः। यो गा उदाजुत्स दिवे वि चांभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सरत्पृथंक्। इन्धांनो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रह्मा शूशुवद्रातहं व्य इत्। जातेनं जातमतिसृत्प्र सृर्सते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमंस्य विश्वहाँ॥३२॥ रायः स्याम रथ्यो विवस्वतः। वीरेषुं वीरा १ उपपृक्षि नुस्त्वम्।

शुचिन्नु स्तोम् इञथंद्वृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्री प्र चंर्षणिभ्यः।

रायः स्याम रथ्या विवस्वतः। वारषु वारा १ उपपृद्धि नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषि मे हवम्। स इज्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरमा विवासति। श्रृद्धामना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रन्ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे पृथामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पितम्घवां दस्मवंर्चाः। तं देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतन्तवस् स् स्वश्रम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षाणो भुवना देव ईयते। शुची वो ह्व्या मेरुतः शुचीनाम्। शुचिरं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्र चित्रमकं गृणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहारंसि सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षः सुरुका उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्म शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषं यच्छताधि। अस्मभ्यन्तानिं मरुतो वियन्त। रुयिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतों रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नंमन्ति। इमे श॰संवनुष्यतो नि पाँन्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेंव। प्रप्रं जायन्ते अर्कवा महोंभिः। पृश्ञेः प्रुत्रा उंपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मत्या मरुतः सं मिंमिक्षुः। अनुं ते दायि मह इंन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमन् वृत्रहत्यैं। अनु क्षत्रमन् सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरन्ं ते नृषह्यै। य इन्द्र शुष्मों मघवन्ते अस्तिं॥३७॥ शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहृत नृभ्यंः। त्व १ हि दढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न रार्धः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्राध् उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। व्नवन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रंः। अषांढमुग्ररं सहंमानमाभिः॥३८॥ गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृहतो य ईशैं। तमुं ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीषु। प्र र्धृष्णुया नंयित् वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मों वृषभ एंतु पश्चात्।

ओत्तरादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न स्ववंद्वेह्यस्मे॥३९॥

व्राहैं विश्वहां ऽजिनष्ट पूषोद्वरीं वृजत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥————[५]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्तो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभानः। कृष्णा रजार् सि तिविधीन्दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ साविषद्वसुंपतिवर्सूनि॥४०॥

विश्रयमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमध्रंरासतेन। विजनां ञ्छावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथ् हरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सिवृतुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गृभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकत। कृतमान्द्या रशिमरस्या तंतान॥४१॥

भगन्धियं वाजयंन्तः पुरेन्धिम्। नराशश्सो ग्नास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वर्रुणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। कर्रंन्त्सुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश् सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मभिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितुः सत्यसंवस्य विश्वें। मित्रस्यं व्रते वर्रुणस्य देवाः। ते सौर्भगं वीरवद्गोमदप्रः। दर्धातन द्रविणश्चित्रम्स्मे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवा ५ अच्छा ब्रह्मकृतां गणेनं। सरस्वतीं मरुतों अश्विनापः। यक्षि देवान्नं लधेयांय विश्वान्॥४३॥ द्यौः पिंतुः पृथिवि मात्रध्रुंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते सुजोषाः। अस्मभ्यु शर्म बहुलं वि यंन्ता विश्वें देवाः शृणुतेम हवंं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्ना उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषिं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा ह्व्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाववृत्याम्॥४४॥ अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुंपारा। युवं वस्नांणि पीवसा वंसाथे। युवोरच्छिंद्रा मन्तंवो ह सर्गाः। अवांतिरतमनृतानि विश्वां। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तत्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ईर्मा तस्थुषीरहंभिर्दुदुह्ने। विश्वाः पिन्वथ स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥

यद्व १ हिष्ठन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततो नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जी(जि?)गिवा १ सेः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रति वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसे नः। आ नो गर्व्यूतिमुक्षतं घृतेनं॥ ४६॥

आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्नैं। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। तिग्मायुंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। शृत १ हिमां अशीय भेषजेभिः। व्यंस्मद्वेषां वित्रं व्यश्हीः। व्यमीवाङ्श्वातयस्वा विष्चीः॥४७॥ अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ तें पितर्मरुता र सुम्नमेंतु। मा नः सूर्यस्य सन्दशों युयोथाः। अभि नो वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमहि रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न हर्सो। हावनुश्रूनों रुद्रेह बोधि। बृहद्वंदेम विदर्थं सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्टमार्हंन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजांनम्॥४८॥

वसूंनि ततानास्तु विश्वान् ववृत्यां ववर्ति घृतेन् विषूचीः श्रुतन्द्वे चं॥———[६]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भद्रायं भद्रम्। भद्रा अश्वां हरितः सूर्यंस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थः। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः। तत्सूर्यस्य देवत्वन्तन्मंहित्वम्। मुध्या कर्तोविंतंतु

-सञ्जभार॥४९॥

यदेदयुंक्त हिरतः स्थस्थात्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मैं। तिन्मित्रस्य वर्रणस्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थें। अनुन्तमन्यद्रुशंदस्य पाजः। कृष्णमन्यद्धरितः सं भेरिन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुः पृथिवी उत

द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उंरुचक्षा उदेति। दूरे अंर्थस्त्रणिर्भाजंमानः। नूनञ्जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसे। शं नो भव चक्षंसा शं नो अह्नाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेनं। यथा शम्स्मै शमसंदुरोणे। तत्सूर्य द्रविणन्धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तिरक्षिम्। सूर्यं आत्मा जगंतस्त्स्थुषंश्च। त्वष्टा दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दश्मन्त्वष्टंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभंर्त्रम्। तिग्मानींक्र्ं स्वयंशस्अनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यों वर्धते चार्रुरास्। जिह्यानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थे॥५२॥
उभे त्वष्टंर्विभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि॰हं प्रतिजोषयेते।

मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यः सुशेवः। राजां सुक्षत्रो अंजिनष्ट वेधाः। तस्यं वय स्मृमतौ यिज्ञयंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्यांम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मितज्मंवो विरिम्न्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतम्पृक्ष्यन्तः॥५३॥ वयं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदथें अप्स्वजीजनन्। अरंजयता र्रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रति प्रियं यंजतञ्जनुषामवंः। महा अंदित्यो नमंसोप्सद्यः। यात्यज्ञंनो गृण्ते सुशेवंः। तस्मां पृतत्पन्यंतमाय जुष्टम्। अग्नौ मित्रायं हिवरा जुंहोत। आ

वा रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंर्तिनः प्विभीरुचानः। इषाबौंढा नृपतिंर्वाजिनींवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मनसायांतु युक्तः। विशो येन गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्यामंमिश्वना दधांना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मधुंमन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तां दिवो बांधते वर्तिनिभ्यांम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दुहिता परितिकायायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिष्रु सवां मनांवां वयोगाम्। यो हस्यवा रे रिथरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियाति वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्यंष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्धर समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरणंसो अस्निधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दूर्सनाभिरिश्वेना पारयन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाम्। इदं वर्चः सप्यिति। तस्मै धत्तर सुवीर्यम्। गवां पोषुर् स्विश्वेयम्। यो अग्नीषोमां ह्विषां सप्यति। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतर रक्षतं पातमरहंसः॥५७॥ विशे जनाय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहंतिम्। यो वान्दाशाँद्धविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्दीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स् मेऽग्नीषोमा हुविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभार द्यौरुग्नेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तों बद्धधानो वृध्वां यादंमानः समुद्रेऽ४हंसुः प्रस्थितस्य॥—[७]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यों अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नंमदन्तंमित्रा। पूर्वमग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यत्तौ हांसाते अहमृत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृश्वंः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचंरन्ति पाकाः। जहाँम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वश्मिचंरामि॥५९॥ समानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। परांके

स्मानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यो दयेत। परांके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वैद्वैः पितृभिंगृंप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्पंरोप्यतें। शृत्तमी सा तनूर्मे बभूव। महान्तौं चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवंं च पृश्चिं पृथिवीं चं

साकम्। तत्सम्पर्बन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नमपानमांहुः। अन्नं मृत्युं तम् जीवातुंमाहुः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नमाहुः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इत्स तस्य। नार्यमणं पुर्ष्यित् नो सर्खायम्। केवलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वर्षन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंद्रयन्यान्॥६१॥

अह॰ सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वाचंमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादिध निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भोजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा्॰ षद्वंदां च। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं विश्वा भवंनान्यपिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागुक्षरं प्रथमजा ऋतस्यं। वेदांनां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागात। अवन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मत्रुकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमंण। तान्देवीं वाचर् ह्विषां यजामहे। सा नों दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिमिता पदानि॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिंता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रद्धयां विन्दते ह्विः। श्रद्धां भगंस्य मूर्धनिं। वचसा वेदयामसि। प्रियक् श्रद्धे ददंतः। प्रियक् श्रद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृषि। यथां देवा असुरेषु। श्रृद्धामुग्रेषुं चिक्रिरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृषि। श्रृद्धां देवा यजमानाः। वायुगोपा उपासते। श्रृद्धाः हृद्य्यंयाऽऽकूत्या। श्रृद्धयां हूयते हृविः। श्रृद्धां प्रातर्ह्वामहे॥६५॥

श्रद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रद्धा देवानिधं वस्ते। श्रद्धा विश्वंमिदं जगंत्। श्रद्धां कामस्य मातरम्। ह्विषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचों वेन आंवः। स बुिश्रयां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥ सतश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृषभो रंयीणाम्।

अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तम्कैर्भ्यर्चन्ति वृत्सम्। ब्रह्म सन्तुं ब्रह्मणा वर्धयन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदं जगत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मना। अन्तरसमित्रिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्। तेन कोऽर्हित् स्पर्धितुम्। ब्रह्मेन्देवास्त्रयंस्त्रि॰शत्। ब्रह्मेन्निन्द्रप्रजापृती। ब्रह्मेन् ह् विश्वां भूतानि। नावीवान्तः समाहिता। चतस्त्र आशाः प्रचेरन्त्वग्रयः। इमं नो यज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्रजर्॰ सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्भंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मत्रुत भ्द्रमंत्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देव्युम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रेः। इच्छामीखृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशश्चित्। अश्चीलश्चित्कृणुथा सुप्रतींकम्। भृद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभासुं। प्रजावंतीः सूयवंस १ रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघश सः। परि वो हेती रुद्रस्यं वृञ्च्यात्। उपेदमुंपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

च्रामि कनीयोऽन्यानिष्तं प्वानि यज्वंस हवामहे विष्ठा लोकाः सुवीर्मर्वा पिवंन्तोः षद्वं॥[८] ता सूर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोर्द्वतं न ममे जातुं देवयोः। उभावन्तौ परिं यात् अर्म्यां। दिवो न र्श्मी इस्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुवन्ती भुवना क्विक्रंत्। सूर्या न चन्द्रा चरतो ह्तामंती। पतीं द्युमिद्वंश्विवदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोंऽवतं मित्मन्ता मिहंव्रता। विश्ववपरी प्रतरेणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदंर्शता। मनस्विनोभानुंचर्तोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवों नुद्याः सप्त बिंश्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी देर्शृतं वर्पुः। अस्मे सूर्याचन्द्रमसांऽभि्चक्षें। श्रुद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वापुरं चेरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परि यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासा् राजां। यासां देवाः शिवंनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भुद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्त्दानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा पुरो यत्। किमावंरीवः कुह् कस्य शर्मन्॥७३॥

अम्भः किर्मासीद्गहेनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनीदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माद्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रें प्रकेतम्। स्लिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंस्स्तन्महिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्त्तताधि॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिर्श्वीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विंदासी(३)दुपरि स्विदासी(३)त्।

रेतोधा आंसन्मिह्मानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तांत्। को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्। कुत आजांता कुतं इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥ अथा को वेद यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदि वा दधे यदि वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेद यदि वा न वेदं। किङ्स्विद्धनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेद्वत्। यद्ध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयनं। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥ यतो द्यावांपथिवी निष्टतक्षः। मनीषिणो मनसा वर्ष्मविद्याना वर्ष्मविद्यान वर्ष्मविद्यान वर्ष्मविद्यान वर्ष्मविद्याना वर्ष्मविद्यान वर्ष्मविद्यान वर्ष्मविद्यान वर्ष्मविद्यान वर्ष्यान वर्ष्मविद्यान वर्यान वर्यान वर्ष्मविद्यान वर्ष्मविद्यान वर्ष्मविद्यान वर्यान वर्यान वर्या

यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा विब्नंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरिश्वनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोममुत रुद्र ह्वेम। प्रातर्जितं भगमुग्र ह्वेम। व्यं पुत्रमदितेयों विधर्ता। आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चित्॥७७॥ राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग प्रणेतुर्भग सत्यंराधः। भगेमां

राजा चिद्य भग भृक्षात्याहै। भग प्रणतुभग सत्यराधः। भगमा धियमुदेव ददेन्नः। भग प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग प्र नृभिर्नृवन्तेः स्याम। उतेदानीं भगवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अहाँम्। उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य। वयं देवानारं सुमतो स्याम। भगं एव भगंवार अस्तु देवाः॥७८॥ तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भग् सर्व इञ्जोहवीमि। सन्तं भग पुर एता भंवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। द्धिक्रावेव शुचंये पदायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भद्राः। घृतं दुहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विच्क्षणा विचर्तुर॰ शर्मन्निधं विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चेदेवाः प्रपीना एकं च॥—[९] पीवौन्नान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यो देवीमृहर्मस्मि ता सूर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीवौँत्रामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः शुचित्रु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽत्रं प्राणमत्रुन्ता सूँर्याचन्द्रमसा

नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवौन्नाय्यूँयं पांत स्वस्तिभुः सदां नः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देवमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणम्। हविरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं रश्मयो यस्य केतवंः। यस्येमा विश्वा भुवंनानि सर्वां। स कृत्तिंकाभिरभि संवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृहती चित्रभांनुः॥१॥ सा नो यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेंम शरदः सवींराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणिं प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ हविषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धाम। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजमाने दधातु॥२॥ यत्ते नक्षत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय॰ राजन्प्रियतमं प्रियाणाम्। तस्मैं ते सोम हविषां विधेम। शन्नं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे। आर्द्रयां रुद्रः प्रथमान एति। श्रेष्ठों देवानां पतिंरघ्रियानांम्।

नक्षंत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नंः प्रजार रीरिष्नोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परिंणो वृणक्तु। आद्रां नक्षंत्रं जुषतार हविर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश रसन्नुदतामरांतिम्। पुनर्नो देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियंन्तु सर्वै। पुनंः पुनर्वो ह्विषां यजामः। पुवा न देव्यदितिरनर्वा। विश्वस्य भर्त्री जगतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू हिवषां वर्धयंन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥ बृहस्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भिसम्बंभूव। श्रेष्ठां देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतान्द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्रंयः स्याम। इद १ सर्पेभ्यों हविरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥ ये अन्तरिक्षं पृथिवीङ्कियन्ति। ते नेः सर्पासो हवमागंमिष्ठाः। ये रोंचने सूर्यस्यापिं सर्पाः। ये दिवंं देवीमनुं सश्चरंन्ति। येषांमाश्रेषा अंनुयन्ति कामम्। तेभ्यंः सर्पेभ्यो मधुंमज्जुहोमि। उपंहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते

नो नक्षेत्रे हवमागंमिष्ठाः। स्वधाभिर्यज्ञं प्रयंतं ज्ञषन्ताम्॥६॥ ये अग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति। याङ्श्चं विद्य याः उ च न प्रविद्या मघास् यज्ञः सुकृतं ज्ञषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामसि त्वम्। तदंर्यमन्वरुण मित्र चारुं। तन्त्वां वयः संनितारः सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सञ्जिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥ अर्थमा राजाऽजरस्तविष्मान। फल्गंनीनामषभो रोरवीति।

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्मो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनी्स्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षुत्रमुजर्रं सुवींर्यम्। गोमृदर्श्वंवदुप् सन्नुदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनी्रा विवेश। भगस्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥ आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययेन सुवृता रथेन। वहन्

आयात् देवः सवितोपयात्। हिर्ण्ययेन सुवृता रथेन। वहुन् हस्त र्र्स सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन प्रतिगृभ्णीम एनत्। दातारंमुद्य संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवाति युज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रम्भ्यंति चित्राम्। सुभ संसं युव्ति रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ५ श्व। रूपाणि पि १ शन्भुवंनानि विश्वां। तत्रस्त्वष्टा तदं चित्रा विचेष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती १ सनोत्। गोभिनीं अश्वेः समनत्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रमभ्येति निष्ट्यांम्। तिग्मश्रंङ्गो वृष्भो रोरुंवाणः। समीरयन्भुवंना मात्रिश्वां। अप द्वेषा १ सि नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तद् निष्टमां शृणोत्। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरम्स्मच्छन्नेवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतान्तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुमदन्तु यृज्ञम्। पश्चात्पुरस्तादभंयन्नो अस्तु। नक्षंत्राणामिधंपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधंन्नुदतामरांतिम्। पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तांत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवतिः सजोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुन्दुहां यजंमानाय यज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजंमाने दधातु हुविर्नुः पाथुश्चेतों जुषन्ताञ्चेतों मदेम् रोचंमानामरांतीर्गोपौ यज्ञम्॥[१]

ऋखारमं हव्यैर्नमंसोपुसद्यं। मित्रं देवं मित्रधेयं नो अस्तु। अनूराधान् हुविषां वर्धयंन्तः। शृतञ्जीवेम श्ररदः सवीराः। चित्रं नक्षंत्रमुदंगात्पुरस्तांत्। अनूराधास इति यद्वदंन्ति। तिन्त्र एंति पृथिभिंदेवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तिरंक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामनु नक्षंत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्ये तृतार्ग॥१३॥ तस्मिन्वयममृतन्दुहानाः। क्षुधंन्तरेम दुरितिन्दुरिष्टिम्। पुरुन्द्रायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढायु सहंमानाय मीढुषें। इन्द्रांय ज्येष्ठा मधुंमृद्दुहांना। उरुं कृंणोतु यजमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षेत्रं पशुभिः समक्तम्। अहंभूयाद्यजमानाय मह्यम्॥१४॥

अहंनों अद्य सुंविते दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिनुदामि। शिवं प्रजायै शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्वन्तीरुत प्रांस्चीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यृज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कृन्यां युव्तयः सुपेशंसः। कृर्मकृतः सुकृतों वीर्यांवतीः। विश्वां देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु यृज्ञम्॥१६॥

यस्मिन्ब्रह्माऽभ्यजंयत्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च् सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियंन्दधात्वहंणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मंणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतेनाः सञ्जयेम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्ति श्रोणाममृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंश्रणोमि वाचम्॥१७॥ महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचीमेना हिवषां यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। महीं दिवं पृथिवीम्न्तरिक्षम्। तच्छ्रोणैति श्रवं इच्छमाना। पुण्यु श्लोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवृत्सरीणंम्मृत इंस्विस्ति॥१८॥

यज्ञं नः पान्तु वसंवः पुरस्तात्। दक्षिणतोऽभियंन्तु श्रविष्ठाः।

पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा नो अरांतिर्घश्र्याऽगर्न्। क्षत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणा १ श्वतिभेष्यविसंष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणुतो दीर्घमायुः। श्वत १ सहस्रां भेषुजानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वं अभि संयन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभंषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वां भूतानि प्रतिमोदंमानः। तस्यं देवाः प्रंस्वं यंन्ति सर्वें। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्। त स्पूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुयन्ति सर्वे॥२०॥

अहिंब्धियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्रौह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासो अभि रेक्षन्ति सर्वे। चत्वार एकंमभिकर्म देवाः। प्रोष्ठपदास इति यान् वदंन्ति। ते बुध्नियं परिषद्य ई स्तुवन्तंः। अहि ई रक्षन्ति नमंसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थांम्। पृष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥ इमानि हव्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां युज्ञम्। क्षुद्रान्पशूत्रंक्षतु रेवतीं नः। गावीं नो अश्वार अन्वेतु पूषा। अन्नु रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर् सनुतां यजंमानाय यज्ञम्। तदिश्वनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभङ्गिमंष्ठौ सुयमें भिरश्वैः। स्वं नक्षंत्र १ हविषा यजन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजो हव्यवाहौ। विश्वस्य दूताव्मृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणमो-ऽश्वयुग्भ्याम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगन्नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिञ्चन्त देवाः। तदंस्य चित्र हिवषां यजाम। अपं पाप्मानं भरणीर्भरन्तु। निवेशनी यत्ते देवा अदंधुः॥२३॥
ततारु मह्यं प्रास्चीर्या याँन्तु युज्ञं वाच १ स्वस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वाजंबस्त्यौ समंक्तौ

ततार महा प्रास्चाया यान्तु युज्ञ वाच इस्वास्त द्वा अनुयान्त् सव वाजवस्त्या समका

नवीनवो भवति जायंमानो यमांदित्या अर्शुमांप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानन्तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतो हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागमेतम्। व्यं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिन्दधांनाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अति पाप्मान्मिति मुक्त्या गमेम। प्रत्युंवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरीं। उदुस्त्रियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु हवामहे। सर्नः सिवृता सुवत्सिनिम्। पुष्टिदां वीरवत्तमम्। उदुत्यश्चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाहु इस्वेष्टम्॥२६॥

ह्व्यवाह् इं स्विष्टम्॥२६॥
आयुत्यंगम्तिबंष्टम्॥———[३]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतमग्नये

कृत्तिकाभ्यः पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौं-ऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वै देवानांमन्नादः। यथां ह वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव ह वा एष मंनुष्यांणां भवति। य पुतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिकाभ्यः स्वाहाँ। अम्बायै स्वाहां दुलायै स्वाहाँ। नितृत्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां वर्षयंन्त्यै स्वाहाँ। चुपुणीकांयै स्वाहेतिं॥२७॥ प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। तासार् रोहिणीमुभ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेनया गच्छेयेति। स एतं प्रजापंतये रोहिण्यै चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावर्तत। समेनयागच्छत। उपं ह वा एनं प्रियमावर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं हविषा

यजेते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां

रोहिण्यै स्वाहाँ। रोचंमानायै स्वाहाँ प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र राज्यम्भिजंयेयुमितिं। स एतर सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वे स ओषंधीना र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र ह वे राज्यम्भिजंयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्तस्यामिति। स एत र रुद्रायाद्रीयै प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वै भंवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेद। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽद्रीयै स्वाहां। पिन्वंमानायै स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेति॥३०॥

ऋक्षा वा इयमेलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्रजांयेयेतिं। सैतमदिंत्यै पुनंवंसुभ्यां चरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते ह् वै प्रजयां पृशुभिः। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्ये स्वाहा प्रजांत्ये स्वाहेति॥३१॥ बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतं बृह्स्पतिये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्च्स्यंभवत्। ब्रह्मवर्च्सी हु वै भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेति॥३२॥

देवासुराः संयंता आसन्। ते देवाः सूर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं करम्भन्निरंवपन्। तानेताभिरेवदेवतांभिरुपानयन्। एताभिर्ह् वै देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपनयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्पेभ्यः स्वाहाँऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहाँ। दुन्दुशूकैभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋष्नुयामेति। त एतं पितृभ्यो म्घाभ्यः पुरोडाश् पद्वीपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आधुवन्। पितृलोके ह् वा ऋष्नोति। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां म्घाभ्यः। स्वाहांऽन्घाभ्यः स्वाहांग्दाभ्यः। स्वाहां-ऽरुभ्यतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्त्स्यामिति। स एतमंर्यम्णे फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्।

पृशुमान् ह् वै भंवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्याः स्वाहाः। पशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना इस्यामितिं। स एतं भगोय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इस्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहितिं॥३६॥ सविता वा अंकामयत। श्रन्मं देवा दर्धीरन। सविता

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स एत र संवित्रे हस्ताय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रींहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहां हस्तांय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेति॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेति। स एतन्त्वष्ट्रे चित्रायै पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र १ ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्राये स्वाहां। चैत्राय स्वाहां प्रजाये स्वाहेतिं॥३८॥ वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्टांये गृष्ट्री दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचारं ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्टांये स्वाहां। कामचारांय स्वाहाऽभिजित्ये स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठमं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रेष्ठमं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठमं हु वे संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याङ् स्वाह्य विशांखाभ्याङ् स्वाहां। श्रेष्ठमांय स्वाह्यऽभिजित्ये स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी।

काम् आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्ये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेति॥४१॥

अग्निः पश्चंदश प्रजापंतिः षोडंश् सोम् एकांदश रुद्रो दश्क्षेकांदश् बृह्स्पतिर्दशं देवासुरा नवं पितर् एकांदशार्यमा भगो दशं दश सिवता चतुर्दश् त्वष्टां वायुरिंन्द्राग्नी दशं दशाथैतत्पौर्णमास्या

अष्टौ पश्चंदश॥₌

[٤]

मित्रो वा अंकामयत। मित्र्धयंमेषु लोकेष्वभिजंययमिति।
स एतं मित्रायांनूराधेभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स
मित्र्धयंमेषुलोकेष्वभ्यंजयत्। मित्र्रधयर्थ ह् वा एषु
लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं
वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां।
मित्र्रधेयांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेति॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्येष्ठमं देवानांम्भिजंयेय्मिति। स एतिमन्द्रांय ज्येष्ठायें पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रीहीणाम्। ततो वै स ज्येष्ठमं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्येष्ठमं ह वै संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्येष्ठमांय स्वाहाभिजित्ये स्वाहेतिं॥४३॥ प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलांय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूलं हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजाये स्वाहेतिं॥४४॥ आपो वा अंकामयन्त। समुद्रङ्कामंम्भिजंयेमेतिं। वा प्रवाहर्वे प्राचार्यो हिल्लास्य विकास समुद्रङ्कामंम्भिजंयेमेतिं।

ता पृतम्द्र्योऽषाढाभ्यंश्चरं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रङ्कामंम्भ्यंजयन्। समुद्र ह वै कामंम्भिजंयति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्भः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजित्ये स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्य्यं जंयेमेतिं। त पुतं विश्वेभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै तंऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्यः हु वै जंयति। य पुतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेयमिति। तदेतं ब्रह्मणे-

ऽभिजितें चरुं निरंवपत्। ततो वै तद्भंह्मलोकमभ्यंजयत्। ब्रह्मलोक १ ह वा अभिजंयति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहाँ। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४७॥ विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्यः श्लोकः शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं। स एतं विष्णंवे श्रोणायैं पुरोडाशंत्रिकपालित्ररंवपत्। ततो वै स पुण्यु इ श्लोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य ५ ह वै श्लोक र शृण्ते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णवे स्वाहाँ श्रोणायै स्वाहाँ। श्लोकाय स्वाहाँ श्रुताय स्वाहेतिं॥४८॥ वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतानां परीयामेति। त एतं

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेतिं। त एतं वसुभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं ह वै संमानानां पर्येति। य एतेनं ह्विषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहां। अग्रांय स्वाहा परींत्यै

ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥५१॥

स्वाहेतिं॥४९॥

पुतं वर्रणाय श्वाभिषजे भेष्जेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निरंवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वे स दृढोऽशिथिलो-ऽभवत्। दृढो हृ वा अशिथिलो भवति। य पुतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रणाय स्वाहां श्वाभिषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥ अजो वा एकंपादकामयत। तेजस्वी ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। स पुतमृजायैकंपदे प्रोष्ठपुदेभ्यंश्चरं निरंवपत्। ततो वे स तेजस्वी ब्रह्मवर्च्स्यंभवत्। तेजस्वी हृ वे ब्रह्मवर्च्सी भवति। य पुतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। तेजंसे स्वाहां

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिथिलः स्यामिति। स

अहिर्वे बुधियोंऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुधियांय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ ह वै प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुधियांय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्त्स्यामितिं। स एतं पूष्णे रेवत्यै च्कं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्ये स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥ अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशंन्द्विकपालन्निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी हु वा अबंधिरो भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याः स्वाहांऽश्वयुग्भ्याः स्वाहां। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेतिं॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं यमायांपभरंणीभ्यश्चरं निरंपवत्। ततो वै स पिंतृणाः राज्यमभ्यंजयत्। समानानाः हु वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽपभरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥५५॥ अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम आज्यम्। कामेंनैव कामु समंध्यति। क्षिप्रमेंनु स सकाम उपनमति। येन कामेन यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांयै स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्यै स्वाहेतिं॥५६॥

मित्र इन्द्रंः प्रजापंतिर्दशं दुशाप् एकांदश् विश्वे ब्रह्म दशंदश् विष्णुस्रयोदश् वसंव इन्द्रोऽजोऽिहुर्वे बुप्नियंः पूषाऽश्विनौ युमो दशं दुशाथैतदंमावास्यांया अष्टौ पश्चंदश॥—————[५]

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासानमासानृतून्त्सं-वत्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्रुयामितिं। स एतश्रुन्द्रमंसे प्रतीदृश्यायै पुरोडाशुं पश्चदशकपालुं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्त्संवत्सर-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्यः सलोकतांमाप्रोत्। अहोरात्रान् ह वा अर्धमासान्मासानृतून्त्संवत्स्रमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य र सलोकतांमाप्रोति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदश्यांयै स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँ ऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेँभ्यः स्वाहृर्तुभ्यः स्वाहाँ। सुंवृत्स्राय स्वाहेति॥५७॥ अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येवहि। न

नांवहोरात्रे आंप्रुयातामिति। ते एतमंहोरात्राभ्यां चरुं निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्कानां च कृष्णानां च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो व ते अत्यंहोरात्रे अमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह् वा अंहोरात्रे मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां। अतिमुक्तये स्वाहेतिं॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसें चुरुं निरंवपत्। ततो वे सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वे संमानाना र सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रो स्वाहां। व्यूष्ट्रो स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्यंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय च्रुनिवंपित। यथा त्वं देवानामिसं। एवमहं मंनुष्याणां भूयासमिति। यथां हु वा एतद्देवानांम्। एव॰ हु वा एष मंनुष्याणां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्युते स्वाहाँ। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहाँ। हरसे स्वाहा भरसे स्वाहाँ। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहाँ। तपंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामितिं। स एत स्याय नक्षंत्रभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा-ऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥६१॥

अथैतमिदंत्यै च्रुं निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६३॥

चुन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांद्रशाथैतस्मै नक्षंत्राय त्रयोदश् सूर्यो दशाथैतमदिंत्यै पश्चाथैतं विष्णंवे षद्भप्त (सविताऽऽशूनां ब्रींहीणामिन्द्रों महाब्रींहीणामिन्द्रेः कृष्णानां ब्रीहीणामंहोरात्रे द्वयानां ब्रीहीणाम्। पितरः षद्भंपालर सविता द्वादंशकपालमिन्द्राग्नी एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालमिन्द्रो दशंकपालुं विष्णुंस्निकपालमहिर्भूमिंकपालमृश्विनौं द्विकपालश्चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमृग्निस्त्वष्टा वसंवोऽष्टाकंपालमृन्यत्रं चुरुम्। रुद्रौंऽर्यमा पूषा पंशुमान्त्स्या्र्ं सोमों रुद्रो बृहुस्पतिः पर्यसि वायुः
पयः सोमों वायुरिंन्द्राग्नी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं यमोंऽभिजित्ये त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजाये
पौर्णमास्या अमावास्यांया अगंत्ये विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्यैं। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं
वायुः स एतदाप्स्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त् मेति त एतन्निरंवपन्। आपोऽकामयन्त्
मेति ता एतन्निरंवपन्। इन्द्राग्नी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा
अंकामयेतामिति ते एतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयतेति स एतन्निरंवपत्। इन्द्राग्नी श्रेष्ठामिन्द्रो
ज्येष्ठामिन्द्रों दृढः। अहिः सूर्योऽदित्ये विष्णंव प्रतिष्ठायैं। सोमों युमः संमानानाम्। अग्निर्नो
रीरिषद्न्यत्रं रीरिषः॥)॥———[६]

अग्निर्न ऋध्यास्म नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षट्॥६॥

अग्निर्नस्तन्नों वायुरिहेर्बुभियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौर्णमास्या अजो वा एकंपात्सूर्यस्त्रिषंष्टिः॥६३॥

अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तङ्गांयत्र्या-ऽहंरत्। तस्यं पर्णमंच्छिद्यत। तत्पर्णोऽभवत्। तत्पर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पर्णः। यत्पंर्णशाखयां वत्सानंपाकरोतिं। ब्रह्मणैवैनानपाकरोति। गायत्रो वै पर्णः। गायत्राः पुशवंः॥१॥ तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्राप्यंति। स्वयैवैनां देवतंया प्राप्यति। यङ्कामयेतापुशुः स्यादिति। अपूर्णान्तस्मै शुष्काँग्रामाहंरेत्। अपुशुरेव भंवति। यङ्कामयंत पशुमान्त्स्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥ यत्प्राचीमा हरेंत्। देवलोकमभि जंयेत्। यदुदीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हरिति। उभयौर्लोकयोरिभ-जिंत्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्यांह। इषंमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्येक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पृशवः॥३॥ वायवं एवैनान्परिं ददाति। प्र वा एंनानेतदा करोति। यदाहं।

वायवः स्थेत्युंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पृश्नुपं ह्वयते। देवो वंः सिवता प्रापंयत्वित्यांहु प्रसूत्ये। श्रेष्ठंतमाय कर्मण् इत्यांह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतमङ्कर्म। तस्मांदेवमांह। आप्यायध्वमिष्ठया देवभागिमत्यांह॥४॥ वत्सेभ्यंश्च वा पृताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं पृवैना

वृत्सम्यश्च वा पृताः पुरा मनुष्यम्यश्चाप्यायन्ता द्वम्य पृवना इन्द्रायाप्याययित। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् १ हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयक्ष्मा इत्यांह प्रजात्यै। मा वंः स्तेन ईशत माऽघश १ स इत्यांह गृप्त्यै। रुद्रस्यं हेतिः परि वो वृणक्तित्यांह। रुद्रादेवैनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा प्वास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥ यजमानस्य पृशून्पाहीत्यांह। पृशूनाङ्गोपीथायं। तन्मांत्सायं पशव उपसमावर्तन्ते। अनेधः सादयित। गर्भाणां धत्या

प्शव उपंसमार्वर्तन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्माः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रि॥६॥

प्रश्वः कराति प्रश्वा दवमागामत्याह कराति नव चाा———[१] देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यंश्वपुर्शुमादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान एव र्यिन्दंधाति। प्रत्युंष्ट्रं रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां बर्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैंति। मनुंना कृता स्वधया वित्रष्टेत्यांह। मानुवी हि पर्शुंः स्वधाकृता॥८॥

त आवंहन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कुतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भवति। देवेभ्यो जुष्टमिह बर्हिरासद इत्यांह। बर्हिषः समृद्धौ। कर्मणो- ऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं केरिष्यामीति। एवमेव तदेध्वर्युर्देवेभ्यः

प्रतिप्रोच्यं ब्रहिर्दाति। आत्मनोऽहि ५ सायै। यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छि श्ष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एक ईं स्तम्बं परिंदिशेत्। त॰ सर्वन्दायात्॥१०॥ यज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धमुसीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्याह। देवेभ्यं एवैनंत्करोति। मा त्वा-ऽन्बङ्गा तिर्यगित्याहाहि ५ सायै। पर्व ते राध्यासमित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिषमित्यांह। नास्यात्मनों मीयते। य एवं वेदं॥११॥ देवंबर्हिः शुतवंल्शुं विरोहेत्यांह। प्रजा वै बुर्हिः। प्रजानों प्रजनेनाय। सहस्रवल्शा वि वयः रुहेमेत्याह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्यै। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीहुँनोति। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनृत्सम्भंरति॥१२॥ अदित्यै रास्नाऽसीत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या पुवैनुद्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्रें देवतांना समंनह्यत। साऽऽभ्रांत्। ऋख्ये सन्नंह्यति। प्रजा वै बुर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्मात्स्रावंसन्तताः

प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंशात्वित्यांह। पृष्टिंमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रंसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भा हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मणैवेनंद्धरित। उर्वन्तिरक्षमिन्वहीत्यांह गत्यैं। देवङ्गमम्सी-त्यांह। देवानेवेनंद्रमयित। अनंधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्य लोकस्य सम्ष्रो॥१५॥

स्योनित्वायं स्वधाकृताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरित जायन्ते बृह्स्पितः सम्प्रेण——[२]
पूर्वेद्युरिध्माब्रुहिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसित।
प्रजापंतिर्युज्ञमंसृजत। तस्योखे अस्त्रश्सेताम्। यज्ञो
वै प्रजापंतिः। यत्सांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे
उपंदधात्यप्रंस्रश्साय। शुन्धंध्वन्दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया

इत्याह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिरश्वंनो घुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांतरिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृथिव्याश्च सम्भृता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिर्वे विश्वधायाः। वृष्टिमेवावंरुन्थे। दश्हंस्व मा ह्यारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रंम्सीत्याह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भागधेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। श्तथार सहस्रंधार्मित्याह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्यंलाशशाखायाँन्दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वे प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजमाने दधाति॥१८॥ सौम्यः पर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रंन्दर्भाः।

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्प्वित्रंन्द्रभीः। प्राख्सायमिष्टिनि दंधाति। तत्प्रांणापानयों रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यक् ह्यंतदहंः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥ तस्मांद्यक् सूर्वतः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रप्स

इत्यांह प्रतिष्ठित्यै। हिवषोऽस्कंन्दाय। न हि हुत इ

स्वाहांकृत इस्कन्दिति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्यं विप्रुषों भागधेयम्। अग्नयें बृहते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैनत्प्रतिंष्ठापयति॥२०॥ पवित्रंवत्यानंयति। अपाश्चेवौषंधीनां च रस स स स्मृंजिति। अथो ओषंधीष्वेव पशून्प्रतिष्ठापयति। अन्वारभ्य वार्चं यच्छति। यज्ञस्य भृत्यैं। धारयंत्रास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्ति। कामंधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान्यर्जमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भद्रमेवासाङ्कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वकर्मेत्यांह। इयं वै विश्वायुंः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकर्मा। इमानेवैताभिलींकान् यथापूर्वन्दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्तें। एवमेवैनां एतदुपंस्तीति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥ बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों हविरिति वाचं विसृजते।

यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। न दारुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दारुपात्रम्। यद्दारुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयांम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्बांहः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी १ षि। नेत इंतः पुरोडाश १ ह्विषो यामो ऽस्तीति। काममेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥ २४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तिद्ध नोत्पुनित्ति। यदा खलु वै पिवित्रंमृत्येति। अथ तद्धविरिति। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपाश्चेवौषंधीनां च रस् स् सं सृंजिति। तस्मांद्पाश्चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनंस्य सातय इत्याह। पृष्टिंमेव यजंमाने दधाति। सोमेन त्वातंन्च्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥ सोमंमेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षियत्वा। संवृत्स्र सोमं न पिबंति। पुन्भक्ष्यौंऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै सांन्नाय्यम्। य एवं विद्वान्त्सांन्नाय्यं पिबंति।

अपुनर्भक्ष्यौऽस्य सामपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्।

यन्मृन्मयोनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य ई स्यात्॥२६॥

अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपि दधाति। तिष्क सर्देवम्। उद्न्वद्भवित। आपो वै रक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्यै। अदंस्तमिस् विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञायैवैनददंस्तं करोति। विष्णां हृव्य र रक्षस्वेत्यांह गृत्यै। अनंधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ये॥२७॥

असीत्यांह् धृत्ये यजंमाने दधात्यजांमित्वाय स्थापयित दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्यात्सादयित पश्चं च॥———[3]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यौ। यज्ञस्य वै सन्तंतिमनुं प्रजाः पृशवो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छिंतिमनुं प्रजाः पृशवो यजंमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरिस यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्ये स्तृणामि सन्तंत्ये त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयात्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजायें पशूनाः सन्तंत्ये। अपः प्रणंयति। श्रुद्धा वा आपः। श्रुद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचरित। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥ यज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। वज्रो वा आपः। वज्रंमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्यै। अपः प्रणंयति। आपो वै देवानां प्रियन्थामं। देवानांमेव प्रियन्थामं प्रणीय प्रचंरति॥२९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां प्रवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषांय त्वेत्यांह। वेषांय ह्यंनदादत्ते। प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजंमानं च प्रदंहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजंमानस्य चाप्रंदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वाम् इत्यांह। द्वौ वाव पुरुषो। यश्चैव धूर्वति। यश्चैनन्धूर्वति। तावुभौ शुचाऽपंयति। त्वं देवानांमिस् सिस्नंतम् पप्रिंतम् जुष्टतम् विह्नंतमन्देवहूर्तम्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥ अहुंतमिस हिव्धान्मित्याहानौत्यै। दश्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेर्मा संविक्था मा त्वां हिश्सिषमित्याहाहि ईसायै। यद्वै किं च वातो नाभि वाति। तत्सर्वं वरुणदेवृत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवारुणमेवेनंत्करोति। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इत्यांह प्रसूत्ये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवेनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपरिमितमेवावंरुन्थे। स एवमेवानंपूर्वर ह्वीरिष निर्वपति॥३३॥

इदं देवानांमिदम् नः सहत्यांह् व्यावृंत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह् गुप्त्यें। तमंसीव वा एषों उन्तश्चंरति। यः पंरीणिहं। सुवंरिम वि ख्यंषं वैश्वान्रश्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यित वैश्वान्रश्योतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषिं गृहीत उदंवेपेताम्। दृश्हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यैं। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पृवैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रं रेक्षस्वेत्यांह् गृह्यै॥३४॥ यक्को वा आणे धामं पृणीय प्रवंत्यतीयादेतद्वाहुन्यामित्यांह ह्वीशिष् निवंपित् गत्ये च्लारि इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञयु सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यहर्भेरप उत्पुनाति। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः।

यद्भर्प उत्पुनात। या पुव मध्या याज्ञयाः सदवा आपः। ताभिरेवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामुत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिव्तोत्पंनात्वित्यांह। सिव्तृप्रमूत एवेना उत्पंनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आंदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्। तेनैवेना उत्पंनाति। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रुष्मर्यः॥३६॥

प्राणेरेव प्राणान्त्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सिवृत्प्रंसूतं मे कर्मासदिति। सिवृत्प्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयित्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्॥३७॥
युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयिमन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य्

संज्ञामेवासामेतत्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह। तेनापः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षाम्यग्नीषोमाभ्यामित्याह। यथादेवतमेवैनान्प्रोक्षिति। त्रिः प्रोक्षिति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥ अथो रक्षसामपहत्ये। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्याह। देवयुज्यायां पुवैनानि शुन्धित। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अवंधृत रक्षोऽवंधृता

आर्गतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगसीत्यांह।

इत्यांह। वृत्र १ ह हिनष्यन्निन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेरे।

इयं वा अदिंतिः॥३९॥

अस्या पृवैनृत्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवहन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमसि वानस्पृत्यमित्यांह। अधिषवंणमेवैनंत्करोति। प्रति त्वाऽदिंत्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्तुनूरसी- त्यांह। अग्नेर्वा एषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जनिमित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्तिं। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैनृत्समंध्यति। अद्रिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावांणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पृशिमं शिम्ष्वेत्यांह् शान्त्यैं। हिवेष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना ह हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिर्ह्वयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इष्मावदोर्ज्मावदेत्यांह॥४२॥

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत वय संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। मनोः श्रद्धादंवस्य यजंमानस्या-सुर्घ्री वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुर्ग यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदंतामुपाश्चेण्वन्। ते परांभवन्। तस्मात्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानां-मुद्वदंतामुपश्चण्वन्ति। ते परां भवन्ति। उच्चेः समाहंन्त वा आंह् विजित्ये॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृंद्धमसि प्रतिं त्वा वर्षवृंद्धं वेत्त्वित्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृद्धा ड्षीकाः समृद्धे। युज्ञ रक्षा रूस्यनु प्राविशन्। तान्यस्ना पृश्भ्यो निरवादयन्त। तुषैरोषधीभ्यः। परापूत्र रक्षः परापूता अरातय इत्याह। रक्षंसामपहत्ये॥४४॥ रक्षंसां भागोऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षा रेसि निरवंदयते। अप उपंस्पृशित मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविनक्तित्यांह। पृवित्रं वे वायुः। पुनात्येवेनान्। अन्तिरक्षादिव वा एते प्रस्कन्दन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्कन्दाय। त्रिष्फ्रितीवत्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्कन्दाय। त्रिष्फ्रितीवत्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्कन्दाय। त्रिष्फ्रितीवत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अथो मेध्यत्वायं॥४५॥

द्धाभ्यामुत्पुंनाति रुश्मयों नयुन्त्यग्रें युज्ञपंतिं युज्ञोऽदिंतिरस्कंन्दाय गृह्णामीत्यांह वदेत्यांह् विजित्या

अवंधृत् अस्कंन्या अणि च॥————[५]
अवंधृत् रक्षोऽवंधृता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै।
अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्त्वचं
करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह प्रतिंष्ठित्यै।
पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मध्यत्वायं।
तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा
मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने हविरंधिपिनष्टिं। युज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। हिवषोऽस्केन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्ताम्। ते शंम्यामात्रमेकमहर्वेता ५ शम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कंम्भुनिरसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्वित्याह। द्यावांपृथिव्योवींत्यैं। धिषणां ऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कंम्भुनिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्विधृंत्यै॥४७॥ धिषणां ऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यां ह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसुव इत्यांह प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह यत्त्यै। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनानिधं वपति। धान्यंमिस धिनुहि देवानित्यांह। एतस्य यर्जुषो वीर्येण॥४८॥ यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्ति। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोति। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्कन्दिनत। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वत्यांह प्रतिष्ठित्यै। हविषोऽस्कंन्दाय। असंवपन्ती

पिश्षाणूनिं कुरुतादित्यांह मेध्यत्वायं॥४९॥

धृष्टिंरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह्

निलांयत् विर्धृत्यै वीर्येण स्कन्दन्ति चुत्वारिं च॥————[६]

निष्कृत्याद रेस्था देवयर्जं वहेत्यांह। य प्रवामात्कृत्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्रौ कृपालुमुपंदधाति। निर्दंग्धर् रक्षो निर्दंग्धा अरातय इत्यांह। रक्षा र्स्येव निर्दंहित। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिर्धत्ते। अङ्गार्मिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुिष्मं ह्रोके ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दृश्हित। ध्र्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दृश्हित। ध्रुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हित॥५१॥ ध्रमंसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवेतेनं दृश्हित॥५१॥

धुरुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हित॥५१॥ धर्मासि दिशों दृश्हेत्यांह। दिशं पृवैतेनं दृश्हित। इमानेवैतैर्लोकान्द्रश्हिति। दृश्हेन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्मिः। य पृवं वेदं। त्रीण्यग्ने कृपालान्यपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। पृषां लोकानामाध्यै। एक्मग्ने कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्रे कपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ् द्वे। अथ् त्रीणिं। अथं चृत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मादृष्टाकपालुं पुरुषस्य शिरः। यदेवं कृपालाँन्युपद्धाति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिक् सङ्स्करोति। आत्मानमेव तत्सङ्स्करोति। त॰ सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिं श्लोकेऽनु परैति। यद्ष्टावृंप्दधांति। गायत्रिया तत्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्यो कार्नन्पूर्वं दिशो विधृत्ये द ह हित। अथायुंः प्राणान्यजां पृशून् यजमाने दधाति। स्जातानंस्मा अभितो बहुलान्कंरोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूणामङ्गिरसान्तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपित। तानि ततः स स्थिते। यानि घर्मे कपालांन्युपचिन्वन्ति वेधस् इति चतुंष्पदय्चां वि मुंश्रति। चतुंष्पादः पृश्वंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रति तिष्ठति॥५५॥

वर्त्यति दिवंमेवैतेनं द १ हित सम्भवंति त १ स इस्कृतमात्मानं द्वादंश स इस्थिते त्रीणि

च॥

त्यांह। अश्विनौ हि देवानीमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥ तस्मादेवमांह। सर रेवतीर्जगंतीभिर्मध्रंमतीर्मध्रंमतीभिः सृज्यध्वमित्याह। आपो वै रेवर्तीः। पशवो जगंतीः। ओषंधयो मधुंमतीः। आप ओषंधीः पशून्। तानेवास्मां एकधा स॰सृज्यं। मधुंमतः करोति। अद्धः परि प्रजांताः स्थ समद्भिः पृंच्यध्वमितिं पर्याप्नांवयति। यथा सुवृष्ट इमामंनुविसृत्यं॥५७॥ आप ओषंधीर्महयंन्ति। तादृगेव तत्। जनंयत्यै त्वा संयोमीत्याह। प्रजा एवैतेनं दाधार। अग्नयें त्वा ऽग्नीषोमाँभ्यामित्यांह व्यावृत्त्यै। मखस्य शिरो-ऽसीत्यांह। यज्ञो वै मखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुरोडाशंः। तस्मदिवमाह॥५८॥ घर्मोऽसि विश्वायुरित्याह। विश्वमेवायुर्यजमाने दधाति।

देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इत्याह प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामि-

उरु प्रथस्बोरु तें युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्विः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन् १ सर्तनुं करोति। अथाप आनीय परिमार्ष्टि। मा १ स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मौत्त्वचा मा १ सं छुन्नम्। घुर्मो वा पृषोऽशौन्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईश्वरो यजंमान श्रुचा प्रदहंः। पर्यग्नि करोति। पृशुमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्ये। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्यांह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा इस्य-जिघा स्मा दिवि नाको नामाग्री रक्षोहा। स एवास्मा द्रक्षा इस्यपांहन्। देवस्त्वां सिवता श्रेपयत्वित्यांह। स्वितृप्रसूत एवैन इश्रपयित। वर्षिष्ठे अधि नाक् इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्निस्तें त्नुवं माऽतिंधागित्याहा-ऽनंतिदाहाय। अग्नें ह्व्य इर्क्षस्वेत्यांह् गुप्त्यैं॥६१॥ अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी १ ष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यैं

करोति। मस्तिष्को वै पुरोडाशंः। तं यन्नाभं वासयेत।

आविर्मस्तिष्कंः स्यात्। अभिवासयति। तस्माद्गुहां

मस्तिष्कंः। भरमंनाऽभिवांसयति। तस्मांन्मा १ सेनास्थिं

छुन्नम्॥६२॥ वेदेनाभिवांसयति। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलितभावुको भवति। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडाशंः। स नायजुष्कंमिभवास्यंः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजंमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्यस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः पशवंः। प्राणैरेव पशून्त्सम्पृणिक्ति। न प्रमायुंका

भवन्ति। यजमानो वै पुरोडाशः। प्रजा पुशवः पुरीषम्।

यदेवमंभिघारयंति। यजंमानमेव प्रजयां पशुभिः समर्धयति।

देवा वै हविर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह इतिं।

सौंऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनूः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जनियध्यामि। यस्मिन्मुक्ष्यध्व इतिं। ते देवा अग्नौ तुनूः सन्न्यंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वा देवता इतिं। सोऽङ्गारेणापः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंम्भ्यंपातयत्॥६५ ततौं द्वितोऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततंस्त्रितों-ऽजायत। यद्द्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः सूर्यांभिनिम्रुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिम्रुक्तः कुन्खिनिं। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणिं। वीर्हा ब्रंह्महणिं। तद्वंह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि निनंयत्यवंरुद्धौ। उल्मुंकेनाभि गृंह्णाति शृतत्वायं। शृतकांमा इव हि देवाः॥६७॥

अन्या जिन्वन्त्यन् विमृत्यैवमाहाशान्त आह् गुर्स्ये छुन्नं ब्रह्मांब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयृत्सूर्यांभिनिम्रुक्ते

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इति स्प्यमादत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह् यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः श्ततेंजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। वायुरंसि तिग्मतेंजा इत्यांह। तेजो वै वायुः॥६८॥ तेजं प्वास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोऽबिभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभविष्यन्तीति। स पृंथिवीमभ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्ं। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभवत्। पृथिवि देवयज्नीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्से वै ब्रजो गोस्थानंः। छन्दार्श्स्येवास्में ब्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टि्वे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। ब्धान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥ द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभौ बंध्नाति

द्वी वाव पुरुषो। य चेव द्वीष्टे। यश्चन् द्वीष्टे। तावुभी बध्नाति पर्मस्यां परावति शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिम्नुत्त्वे। अररुवै नामांसुर आंसीत्। स पृंथिव्यामुपंम्लुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतोऽररुः

पृथिव्या इति पृथिव्या अपाँघ्रन्। भ्रातृंव्यो वा अर्रुः। अपहतोऽरुः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥ भ्रातृंव्यमेव पृथिव्या अपहन्ति। तेऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पंतिष्यतीति। तम्रुरुंस्ते दिवं माऽस्कानिति दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृंव्यो वा अर्रुः। अरुरुंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयुजुरहंरित।

यदाहं। भ्रातृं व्यमेव दिवः परिबाधते। स्तम्बयुजुर्हरित।
पृथिव्या एव भ्रातृं व्यमपहिन्ति। द्वितीय हरित ॥ ७२॥
अन्तरिक्षादेवैनमपहिन्ति। तृतीय हरित। दिव
एवैनमपहिन्ति। तृष्णीं चंतुर्थ हरित। अपरिमितादेवैनमपहिन्ति।

असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावदेवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नो-ऽस्यामपीति॥७३॥ क्यंत्रो दास्यथेति। यावत्स्वयं पंरिगृह्णीथेति। ते

वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पृश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंऽग्निना प्राञ्चोऽजयन्। वसुंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यश्चेः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्तिं॥७४॥ भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंत्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथित्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंकामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देव्यर्जनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्य सावुन्नयिति। आह्वनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथो मिथुन्त्वायं। उद्धन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धंन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥

मूलं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलं छिनत्ति। मूलं वा अतितिष्ठद्रक्षार्स्यनृत्पिपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्प्येनं छिनत्ति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षार्स्यपहिन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिंदेवेभ्यो निर्णायत। तां चेतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्मांचतुरङ्गुलं खेयां। चृतुरङ्गुलं खंनित। चृतुर्ङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायें खनित। यजमानमेव प्रंतिष्ठां गमयित। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयजनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै पशवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं

पशुभिः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। पुतावंती वै पृथिवी। यावंती वेदिः। तस्यां एतावतं एव भ्रातृंव्यं नि्र्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिंगृह्णाति। ऋतमंस्यृतसदंनमस्यृतश्रीरसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥ क्रूरमिंव वा एतत्करोति। यद्वेदिं करोतिं। धा असि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्याह। उर्वीमेवैनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विसृपों विरप्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदानुर्यामैरयश्चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्याह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयर्जनीं कृत्वा॥८०॥ यददश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तदस्यामेरंयति। तां धीरांसो

अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय।

इध्माबर्हिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्वि। पत्नी ५

सन्नंह्य। आज्येंनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणी्रा सांदयति। आपो वै रक्षोघ्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्यै। स्प्यस्य वर्त्मंन्त्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। उवाच हासितो दैवलः। पुतावंतीवां अमुष्मिं ह्लोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्माद्धह्वीरासाद्याः। स्प्यमुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमपंयति॥८२॥

वै वायुरांह परावतीत्याहाहं द्वितीयर् हर्तीतिं परिगृह्वन्तिं देवयर्जनीं करोति भवन्ति

खनत्यकरेतत्कृत्वा रंक्षोप्नीरंर्पयति॥_____

वज्रो वै स्प्यः। यद्नवर्श्वं धारयेत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयित। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणेव यज्ञस्यं दक्षिण्तो रक्षार्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्प्येनोदींचश्चाध्रराचंश्च। स्प्येन वा एष वज्रेणास्यै पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्क्रेऽिध प्रवृंश्चिति॥८३॥

म्रातृव्यमप्हत्या उत्क्रिश्घ प्रवृश्चात॥८३॥ यथोप्धायं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्प्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माबुर्हिरुपंसादयित युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुन्त्वायं। अथो पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तंरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥
यत्पुरस्तांत्प्रत्यगुपसादयंत्। अन्यत्रांहृतिपृथादिध्मं
प्रतिपादयेत्। प्रजा वे ब्र्हिः। अपंराध्रयाद्वर्हिषां
प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपृथेनेध्मं
प्रतिपादयित। सम्प्रत्येव ब्र्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्पैति।
दक्षिणिम्ध्मम्। उत्तरं ब्र्हिः। आत्मा वा इध्मः।
प्रजा ब्र्हिः। प्रजा ह्यांत्मन् उत्तरंतरा तीर्थे। ततो
मध्मपुनीयं। यथादेवतम्वेन्त्प्रतिष्ठापयित। प्रतितिष्ठति
प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः॥८५॥

वृश्चित् साद्येदिध्मः पश्चं च॥———[१०]
तृतीयंस्यां देवस्यांश्वपुर्शुं यो वै पूर्वेद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहन्त्सोंऽपोऽवंधूतं

धृष्टिर्देवस्येत्यांहु सं वंपामि देवस्य स्प्यमा दंदे वज्रो वै स्प्यो दशं॥१०॥
तृतीयंस्यां यज्ञस्यानंतिरेकाय प्वित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामन्तर्हित्यै
द्वौ वाव पुरुषौ यददश्चन्द्रमंसि मेध्यं पश्चाशींतिः॥८५॥

तृतीयस्यां यजमानः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युंष्ट्रं रक्षः प्रत्युंष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्मौष्टिं। स्रुवमग्रैं। पुमारंसमेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं।

अर्थ जुहूम्। अर्थोप्भृतम्। अर्थ ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥ अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः सुर्चः। वृष्टिः

सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ श्लोकानं नुपूर्वं केल्पयति। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्विः। य एवं वेदं। यदिं कामयेत वर्षुकः पर्जन्यः स्यादिति।

अ्ग्रतः सम्मृज्यात्॥२॥

वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावंर्षकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिष्टात्सम्मृंज्यात्। मूलतोंऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥

प्राचींमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमेव ह्यन्नम् ह्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तांत्प्रतीचींम्। दण्डम्ंत्तम्तः। मूलंन् मूलं प्रतिष्ठित्ये। तस्मांदर्बौ प्राञ्चुपरिष्टाल्लोमानि। प्रत्यञ्चधस्तांत्॥४॥

सुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृत्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्नर्रं सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तनुवर्रं शुभयति। तस्मात्स्रुवमेवाग्रे सम्माष्टिं। मुख्तो हि प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नंमाविश्वति। तौ प्राणापानौ। अव्यर्ध्कः

प्राणापानाभ्यां भवति। य एवं वेदं॥५॥

जुहूर्म्ज्याद्भव्यति प्रत्यश्र्यपस्तांमाष्ट्रं पश्च च॥———[१]
दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुकुभि श्रितम्।
तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्नं नाशयामसि
स्वाहेति स्रुख्सम्मार्जनान्यग्रौ प्र हंरति। आपो वै
दर्भाः। रूपमेवेषांमेतन्महिमानं व्याचेष्टे। अनुष्टुभूर्चा।
आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रः
स्रुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो

ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनेनाय। प्रजायते प्रजयां पशुभियंजीमानः। तान्येके वृथैवापाँस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य यज्ञियस्य कर्मणः सर्विदोहः॥७॥ यद्येनानि पशवोंऽभि तिष्ठेयुः। न तत्पशुभ्यः कम्। अद्भिर्मोर्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यज्ञियंस्य कर्मणो-उन्यत्राहृतीभ्यः सन्तिष्ठते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता ५ हि तस्मै प्रतिष्ठां देवाः समर्भरन्। यदद्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनानि तद्गंमयति॥८॥ प्रतितिष्ठति प्रजयां पुशुभियंजंमानः। अथौं स्तुम्बस्य वा एतद्रूपम्। यत्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्बशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो ह वै जंरत्कुक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां

भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नुवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पशवीं रमन्ते॥९॥ न्वदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्रियो हु वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरेन्ति।

तस्मदितान्युग्नावेव प्रहंरेत्। युत्रस्मिन्त्सम्मृज्यात्। पशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पुशून्स्माकुं मा हि ५ सीः। पुतदंस्तु हुतं तवु स्वाहेत्यंग्निस्म्मार्जन्युग्नौ प्रहंरति। एषा वा एतेषां योनिः। एषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रतितिष्ठति प्रजया पशुभिर्यजंमानः॥१०॥

वेदस्याग्र ई सुख्सम्मार्जनानि विदोहो गमयित पुशर्वो रमन्ते हि॰सीः षट् चं॥———[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽपत्नीकंः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्यन्वास्ते। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठन्ती सन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति र रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसींना ह्यंषा वीर्यं करोतिं॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदेन्दधीत। देवानां पिनेया समदेन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनौ गोपीथार्य। आशासांना सौमनसमित्यांह। मेध्यांमेवैनाङ्केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयति। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नंहो मुकृताय कमित्यांह। एतद्वै पित्रंये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवेनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चेवं वेद यश्च न।

योक्रमेव युंते। यम्नवास्तैं। तस्यामुष्मिँ होके भंवतीति योक्रेण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्तैं। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य क्रृष्ट्यै। युक्तिङ्कियाता आशीः कामें युज्याता इति। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिं ग्रंशाति। आशिषं एवास्यां परि गृह्णाति। पुमान् वे ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनेनाय। प्र जांयते प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥१४॥

अथों अर्थो वा एष आत्मनंः। यत्पर्लीं। यज्ञस्य धृत्या अशिथिलम्भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वय स्पुपत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तन्मिथुनीकंरोति। ऊनेऽतिरिक्तन्धीयाता इति प्रजात्ये। मृहीनां पयोऽस्योषंधीना रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मिहिमानं व्याचंष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आशिषंमेवेतामा शास्ते॥१५॥

क्रोति व्रतोपनयनं क्षेमो यजंमानः शास्ते॥———[३] घृतं च वै मधुं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मधुंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मधुंषा न प्रचरित्त। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचरित्त। युज्ञो वा आज्यम्। युज्ञेनेव युज्ञं प्रचर्न्त्ययातयामत्वाय। पत्यवेक्षते॥१६॥

मिथुनत्वाय प्रजांत्यै। यद्वै पत्नीं यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्यै। अमेध्यं वा एतत्करोति। यत्पत्यवेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आह्वनीयंम्भ्युद्दंवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोंऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्थयित। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्सायै। स्प्यस्य वर्त्मन्त्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽिसं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यज्ञंषेयज्ञषे भ्वेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते॥१८॥ तदा अतः पवित्रांभ्यामेवोत्यंनाित। यज्ञंमानो वा आज्यम्।

यजुंषेयजुषे भ्वेत्यांह। आशिषंभेवैतामा शाँस्ते॥१८॥
तद्वा अतः प्वित्राँभ्यामेवोत्पुंनाति। यजंमानो वा आज्यम्ँ।
प्राणापानौ प्वित्रें। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति।
पुन्राहारम्ँ। एविमेंव हि प्राणापानौ स्श्चरंतः। शुक्रमंसि
ज्योतिरसि तेजोऽसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे।
त्रिर्यजुंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

एषां लोकानामार्सै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं।

अथाज्यंवतीभ्यामुपः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि

वा उताहुं। यथां ह वै योषां सुवर्ण १ हिरेण्यं पेशलं

बिभ्रंती रूपाण्यास्तें। पुवमेता पुतर्हीतिं। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥
पुषा हि विश्वेषां देवानां तृनः। यदाज्यम्। तत्रोभयोंमीमा स्सा। जामि स्यात्। यद्यज्ञुषाऽऽज्यं यजुंषाऽप उत्पुनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पुनात्यजांमित्वाय। अथो मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। स्वितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। स्वितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पुच्छो गांयत्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः

सं नंयति। ओषंधीभिः पुशून्। पुशुभिर्यजंमानम्। शुक्रं

त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यचिंस्त्वाऽर्चिषीत्याह

सर्वत्वायं। पर्याप्त्या अनंन्तरायाय॥२१॥

ईक्षत आहु शास्ते लोका देवतां भवति षद चं॥———[४]
देवासुराः संयंत्ता आसन्। स पृतिमन्द्र आज्यंस्यावकाशमंपश्यत्
तेनावैक्षत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुराः। य
पृवं विद्वानाज्यंम्वेक्षते। भवत्यात्मनां। परांऽस्य

भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्येंनान्यानिं ह्वी १ ष्यंभिघारयंति॥ २२॥

अथ् केनाज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषों उन्धो भवितोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावेंक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यंङ्वारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दारेस् वा आज्यम्। छन्दार्रस्येव प्रीणाति। चृतुर्जुह्णां गृह्णाति। चतुंष्पादः प्रावंः। प्रशूनेवावं रुन्धे। अष्टावृंप्भृति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव प्राणं दधाति। चतुर्धुवायाम्॥२४॥ चत्रेष्पादः प्रश्वंः। प्रशुष्वेवोपिरेष्टात्प्रति तिष्ठति।

चतुंष्पादः प्रावंः। प्राष्ट्रेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यज्ञमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भयो गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे सुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपभृतिं। तस्मांद्ष्टाशंफा। चृतुर्ध्रुवायांम्। तस्माचतुः स्तना। गामेव तत्सङ्स्कंरोति। सास्मै सङ्स्कृतेषुमूर्जन्दुहे।

बर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

यज्ञुह्वां गृह्वातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्त सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। युद्धुवायामाज्यम्॥२६॥

अभिघारयंति गृह्णाति ध्रुवायाञ्चतुंष्पदी प्रयाजानूयाजेभ्यस्तद्वे चं॥—————[५]

आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहिमानं

व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञन्नयताग्रे यज्ञपंतिमित्याह। अग्रं एव

यज्ञन्नंयन्ति। अग्रे यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये

यूयिमन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्यं इत्याह। वृत्र १ हिन्ष्यित्रिन्द्र आपो वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेश संज्ञामेवासामेतत्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह॥२७॥ तेनापः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविंशत्। कृष्णौऽस्याखरेष्ठौऽग्नयै त्वा

स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। अथों अग्नेरेव

मेधुमवं रुन्धे। वेदिरसि ब्रहिषे त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै

प्रजा एवं पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। ब्र्हिरंसि स्रुग्न्यस्त्वा स्वाहेत्याह। प्रजा वै ब्र्हिः। यजमानः स्रुचः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेति बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनं छोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युंक्षति। प्रजा वै बर्हिः। यथा सूत्यें काल आपः पुरस्ताद्यन्तिं॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भव बर्हिषद्ध इति दक्षिणाये श्रोणेरोत्तंरस्ये निनंयित सन्तंत्ये। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयंन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धे। अनंतिस्कन्दन् ह पर्जन्यों वर्षित। यत्रैतदेवङ्कियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छ्तेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मौत्पृथिव्या ऊर्जा भुंअते। ग्रन्थिं वि स्र स्यति। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गूढं प्रत्यश्चमा यंच्छति। तस्मौत्प्राचीन् रेतों धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्याह। युज्ञो वै विष्णुः॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृंह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पुतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमितस्यावंरुख्यै। तस्मिंन्पवित्रे

अपिं सृजति। यजंमानो वै प्रंस्तरः। प्राणापानौ पवित्रैं।

यजंमान एव प्रांणापानौ दंधाति। ऊर्णाम्रदसन्त्वा

स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्वासस्थं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्स्वासस्थं करोति॥३३॥ बर्हः स्तृंणाति। प्रजा वै बर्हः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्यः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृश्भिरनंतिदृश्यं करोति। धारयंन्प्रस्तरं परिधीन्परि दधाति। यजमानो वै प्रस्तरः। यजमान एव तत्स्वयं परिधीन्परि

दधाति। गृन्ध्वांऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥ विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुंणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुंणौ।

प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्तवा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पाति॥३५॥

वीतिहों त्रन्त्वा कव् इत्याह। अग्निमेव होत्रेण समर्धयति।

प्रस्तर सांदयति। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥ असौ वै जुहूः। अन्तरिक्षमुपुभृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासांमेतदेव प्रियन्नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्त्सुकृतस्यं लोक इत्याह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सांदयति। ता विष्णो पाहीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञस्य धृत्यैं। पाहि युज्ञं पाहि युज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्याह। युज्ञाय यजंमानायात्मनें। तेभ्यं एवाशिषमाशास्तेऽनांत्ये॥३७॥ स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीर्णुर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयित अग्निना वै होत्रां। देवा असुरानभ्यंभवन्। अग्नयं समिध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह भ्रातृंव्याभिभूत्यै। एकंवि श्रातिमिध्म भवन्ति। एकवि २ शो वै पुर्रुषः। पुर्रुषस्यास्यै। पश्चंदशेध्मदारूण्य

दंधाति। पश्चंदश वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमासुशः

द्युमन्तु समिधीमुहीत्यांह समिद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर

इत्याह वृद्धौं। विशो युत्रे स्थ इत्याह। विशां

यत्यैं। उदीचीनांग्रे नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूना ५

रुद्राणांमादित्याना ५ सदंसि सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदंने

संवत्सर आप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परि दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अनूयाजेभ्यः स्मिध्मितं शिनष्टि। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयंः। यजमान एव प्राणन्दंधाति॥३९॥ त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वे प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति।

वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजाप्त्यमाघारमा घारयति। यज्ञो वे प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापंतिः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीत्रिस्तिः सं मृङ्घीत्यांह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्ये। परिधीन्त्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्तिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अथो एते व देवाश्वाः। देवाश्वानेव तत्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य

तिष्ठंत्रन्यम्। यथाऽनों वा रथंं वा युआत्। एवमेव तदेष्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढौ। वहंन्त्येनं ग्राम्याः पशवंः। य एवं वेदं। भुवनमसि वि प्रथस्वेत्यांह।

समेष्ट्री। आसींनोऽन्यमांघारमा घांरयति॥४१॥

युज्ञो वै भुवनम्। युज्ञ एव यर्जमानं प्रजयां पृशुभिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदन्नम् इत्याह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्नेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युंपभृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्यज्ञः पश्चात्॥४३॥ ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या क्रांमित। विजिंहाथां मा

मा सन्तांष्ठिमित्याहाहि ईसायै। लोकं में लोककृतो कृणुत्मित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानंम्सीत्यांह। युज्ञो वे विष्णुः। एतत्खलु वे देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥ इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। समारभ्योर्ध्वो अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौं। आधारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमीति। अथो समृद्धेनेव युज्ञेन यजंमानः

सुवर्गं लोकमेति। अह्रुंतो युज्ञो युज्ञपंतेरित्याहानांत्र्यै। इन्द्रांवान्त्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवुर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवुर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रौ। यज्ञमानुदेवत्यां वै जुह्ः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यत्स ईस्पर्शर्यंत्। भ्रातृंब्येऽस्य प्राणन्दंध्यात्। असईस्पर्शयन्नत्या ऋामिति। यजमान एव प्राणन्दंधाति। पाहि माँ उग्ने दुर्श्वरितादा मा सुचेरिते भजेत्यांह ॥ ४६॥ अग्निर्वाव पवित्रम्। वृज्ञिनमनृंतुन्दुश्चंरितम्। ऋजुकुर्म ५ सत्य र सुचंरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृताद्दश्चंरितात्पाति। ऋजुकर्मे सत्ये सुचरिते भजति। तस्मदिवमा शांस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्यं ध्रुवा समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोंऽसि सञ्चोतिंषा ज्योतिंरङ्कामित्यांह। ज्योतिंरेवास्मां उपरिष्टाद्वधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिंदधाति प्राणन्दंधाति हि युज्ञो घांरयति नम् इत्यांह पृश्चाद्वीर्याणीत्यांहु भा इत्यांह भुजेत्यांह

धुवैवास्मिन्दधाति श्रीणि च॥——[७] धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्भुह्मा। यद्धोताँ। यदंध्वुर्युः। यदग्नीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य

प्राणान्त्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमपृगृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक शिर्षिति। नास्यं प्राणान्त्सक्कंर्षिति। न प्रमायंको भवति। पुरस्तांत् प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। पृशवो वा इडां। पृशवः पुरुषः। पृशुष्वेव पृशून्प्रतिष्ठापयित। इडांये वा एषा प्रजांतिः॥५०॥ तां प्रजांतिं यजंमानोऽनु प्र जांयते। द्विरङ्गुलांवनिक्त पर्वणोः। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्ये। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। स्कृद्भि घारयित। चृतः सम्पंद्यते। चृत्वारि वे पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पृशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥ मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पृशूनुपं ह्वयते। पशवो मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पृशूनुपं ह्वयते। पशवो

वा इडाँ। तस्मात्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यर्जमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येंनौ ह्वयंते होतां। इडांयै देवतानामुपहुवे। उपहूतः पशुमान्भवति। य एवं वेदं॥५२॥ यां वै हस्त्यामिडामादधाति। वाचः सा भागधियम्। यामुंपह्वयंते। प्राणानार सा। वार्च चैव प्राणारुश्चार्व रुन्धे। अथ वा पुतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहिंषदों मीमा १ सा। यजमानं देवा अंब्रुवन्। हिवर्गे निर्वपति। नाहमंभागो निर्वप्स्यामीत्यंब्रवीत्॥५३॥ न मयांऽभागयाऽनुंवक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा प्रोन्वाक्यां भविष्यामीति पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षंद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं

दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। ब्र्हिषदं करोति॥५४॥
यजमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा ब्र्हिः। यजमानमेव
प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्माद्स्थ्राऽन्याः प्रजाः
प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिंणा

करोतिं। तानेव तद्भागिनः करोति। चतुर्धा करोति। चतुर्स्रो

वा एता हंविर्यज्ञस्यान्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुंरोडाशं

बर्हिषदं करोतीतिं। चृतुर्धा करोति। चृत्वारो ह्यंते

हंविर्य्ज्ञस्यत्विजंः॥५५॥
ब्रह्मा होतां ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इदः
होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्यें ऽध्वरे।
आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताहगेव तत्। अग्नीधें
प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निमुंखा ह्यद्धिः। अग्निमुंखामेवर्धिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घांरयति। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणें ब्रह्मभागं परिहरति। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥ स्विता यज्ञस्य प्रसूत्ये। अथ् कामंमन्येनं। ततो होत्रें।

मध्यं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्धोतां। मध्यत पृव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवे। प्रतिष्ठा वा पृषा यज्ञस्यं। यदेध्वर्युः। तस्माद्धविर्यज्ञस्यैतामेवावृत्मन्॥५८॥ अन्या दक्षिणा नीयन्ते। यज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीत्सकृत्संकृ मृङ्ढीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्हिं युज्ञः। इषिता दैव्या होतांर् इत्यांह। इषित १ हि कर्म क्रियतें। भृद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वृगा दैव्या होतृंभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तत्स्वृगा करोति। स्वस्तिर्मानुषभ्य इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। शुं योर्बूहीत्यांह। शुंयुमेव बार्हस्पत्यं भाग्धेयेन समर्धयति॥५९॥

चर्त्यध्वर्यः प्रजातिर्ह्वयते वेदांब्रवीद्वर्हिषदं करोत्यृत्विजो दधाति ब्रह्माऽनुंकरोति चत्वारि

अथ् स्रुचांवनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहित। प्रतिष्ठा वा अनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूहिति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्व्यमाणानेव प्रतिनुदते। सिवर्षूच एवापोह्यं सपत्नान् यजंमानः। अस्मिँ श्लोके प्रतितिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रंस्त्रमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥ एभ्य एवैनं लोकेभ्योऽनक्ति। अभिपूर्वमंनक्ति। अभिपूर्वमेव यजंमानन्तेजंसाऽनक्ति। अक्त रहाणा इत्यांह। तेजो वा आज्यम्। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। वियन्तु वय इत्यांह। वयं एवैनं कृत्वा। सुवृर्गं लोकं र्गमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्याह। प्रजायै गोपीथाय। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्याह। आपं एवौषंधीरा प्याययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्याह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दिवं गच्छु ततो नो वृष्टिमेर्येत्याह। वृष्टिवें द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरित। तावंदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुंरेवात्मन्धंते। यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरित। तावंदस्य चक्षुंमीयते। चक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंमें पाहीत्यांह। चक्षुंरेवात्मन्धंते। ध्रुवाऽसीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। यं परिषिं प्रयधंत्था इत्यांह॥६४॥ यथायजुरेवेतत्। अग्ने देव पणिभिर्वीयमाण इत्यांह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। स्जातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्यै। यज्ञस्य पाथ उप सिमंतिमित्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्प्र हंरति। यज्ञस्य सिम्ध्रे॥६५॥ स्रुचौ सं प्रस्नांवयति। यदेव तत्रं ऋूरम्। तत्तेनं शमयति। जुह्वामुंपभृतम्। यज्ञमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यज्ञमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। स् स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सर्द्रस्रावभागाः। तेषान्तद्भाग्धेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्मंवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदिस सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदेने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव पृशूनात्मन्धंत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेंऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्यै पाहि दुरिष्ट्ये पाहि दुंरद्यन्ये पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनि इ

स्वाहेतींध्मसंवृश्चेनान्यन्वाहार्यपचेनेऽभ्याधार्यं फलीकरणहोमं

र्जुहोति। अतिरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चंनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त एवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्तमास्व रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन् वेदिं विविदः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जायते विश्वदानिरितिं पुरस्तांत्स्तम्बयजुषों वेदेन वेदि सम्मार्ध्यनुंवित्त्ये॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै।

प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रूणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ

आस्यंति। मिथुनमेव करोति। विन्दते प्रजाम्। वेद॰ होता-

ऽऽहंवनीयांत्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तत्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्धमासात

तः सन्तंतमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥ तङ्कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतों यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीतिं। वाताद्वा अध्वर्युर्यज्ञं प्रयुंङ्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्याह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठतीमे लोका गंमयति द्यौर्वृष्टिमेवावंरुन्थे पुर्यर्थत्था इत्यांहु समिष्टि भागुधेयंन्धत्तमित्यांहु वा

यो वा अयंथादेवतं युज्ञमुंपूचरंति। आ देवताँभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वे पार्शः। इमं विष्यांमि वरुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवेनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवतांभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्याह। अग्निर्वे धाता। पुण्यङ्कर्मं सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यजमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आशिषंमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततोऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पत्नियै पूर्णपात्रे भंवति। अस्मिँह्योके

कुंरा उपवेषोपं विड्डि नः॥७६॥

प्रतितिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्ठुक्। वाङ्किथुनम्। आपो रेतः प्रजनंनम्। एतस्माद्वै मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥ प्रजाः प्रजनयन्। यद्वै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यते॥ ब्रह्मणा वै तस्य

विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्ह् योक्रं ब्रह्मणा। आदायेन्त्पत्नीं सहाप उपंगृह्णीते शान्त्ये। अञ्चलो पूर्णपात्रमा नयति। रेतं एवास्यां प्रजान्दंधाति। प्रजया हि मनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥ स्वित्प्रंम्लो यथादेवतं प्रजयेत्यांह स्थिन्ष्टं एकं चा [१०] परिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यद्पवेषः। य एवं वेदं। विन्दते परिवेष्टारम्। तमृत्करे। यं देवा मनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यमिहा

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो नृश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्वितिं पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गृहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थृविमृत उपंगूहति। अप्रंतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टिर्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मंणा संशीतः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म

इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरित। निर्मुन्नुंद ओकंसः। सपत्नो यः पृत्नयितं। निर्बाध्येन हिवषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतंः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽति रोचनायावत्। सूर्यो असंदिव। प्रमान्त्वां परावतम्॥७८॥ इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। श्चैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोऽसाववंधिष्मामुमित्यांह स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तभ्यांयेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतिमन्द्र आपों देवीरग्निना धिष्णिया अथ स्तुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥

प्रत्युष्टमयंज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजांतिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवंसप्ततिः॥७९॥

प्रत्युष्टमर्पयति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राज्जन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायायोगूम्। कामाय पुश्र्श्वलूम्। अतिकृष्टाय माग्धम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नृर्मायं रेभम्। नरिष्ठाये भीमृलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीष्खम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधायें रथकारम्। धेर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमांय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

सन्धर्ये जारम्। गेहायोपपतिम्। निर्ऋंत्यै परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्यै दिधिषूपतिम्। पवित्रांय भिषजम्। प्रज्ञानांय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्यै पेशस्कारीम्। बलायोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्व्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गृन्धुर्वाप्सराभ्यो व्रात्यम्। सूर्पदेवजनभ्योऽप्रंतिपदम्। अवैभ्यः कित्वम्। इर्यतांया अकितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलका्रम्। यातुधानैभ्यः कण्टकका्रम्॥५॥

उत्सादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। द्वाभ्यः स्नामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमाय बिधरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्चिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्चिनम्। मूर्यादाये प्रश्चिववाकम्॥६॥

ऋत्यै स्तेनहंदयम्। वैरंहत्याय पिशुंनम्। विवित्त्ये क्षतारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पत्पूलीम्। प्रकामायं रजियत्रीम्॥७॥

भायें दार्वाहारम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नाकंस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्। ब्रुध्नस्यं विष्टपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्ं। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्ं। सुवर्गायं लोकायं भागदुघम्। वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। जुवार्याश्वपम्। पुष्टौ गोपालम्।

तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरायै कीनाशम्। कीलालाय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तृधम्। अध्यक्षायानुक्षृत्तारम्॥९॥
मन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधाय निस्रम्। शोकायाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यांत्रिस्थिनम्। योगाय योक्तारम्। क्षेमाय विमोक्तारम्। वपुषे मानस्कृतम्। शीलायाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्ये कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥
यम्ये यमसूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवत्सरायं

पर्यारिणींम्। परिवृत्सरायाविजाताम्। इदावृत्सरायापस्कद्वेरीम् इद्वत्सरायातीत्वेवरीम्। वृत्सराय विजेर्जराम्। सुर्वृन्त्सराय पिलेक्नीम्। वनाय वनपम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥ सरोभ्यो धैवरम्। वेशन्ताभ्यो दाशम्। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्। नृङ्वलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनैभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरातम्। सानुभयो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्काया ऋतुलम्। घोषाय भूषम्। अन्ताय बहुवादिनम्। अनन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणवध्मम्। आक्रन्दार्य दुन्दुभ्याघातम्। अवुरुस्पुरार्य शङ्खध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्मम्णम्॥१३॥ बीभुत्सायै पौल्कुसम्। भूत्यै जागरुणम्। अभूत्यै स्वपनम्। तुलायें वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृंस्या अपगुल्भम्। सुरुशरायं प्रच्छिदम्॥१४॥ हसाय पु श श्रुलूमा लंभते। वीणावादक्रणंकक्रीतायं। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूणुव्धमं ग्रांमुण्यं

तल्वम्॥१५॥ अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवदुर्शम्। द्वापुरायं बहिः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्।

पाणिसङ्घातन्नृतायं। मोदायानुकोशंकम्। आनुन्दायं

भिक्षंमाण उपतिष्ठंते॥१६॥

सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षंत्रेभ्यः किलासम्। अहं शुक्रं पिंङ्गलम्। रात्रिये कृष्णं पिंङ्गक्षम्॥१७॥ वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानळ्याँ नमुंदान र संमानन्तान् वायवें। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥ अथैतानरूपेभ्य आलंभते। अतिहस्वमितदिधिम्।

अतिकृंशमत्य ५ंसलम्। अतिंशुक्लमतिंकृष्णम्। अतिंश्रक्ष्ण-

मितंलोमशम्। अतिंकिरिटमितंदन्तुरम्। अतिंमिर्मिरमितंमेमिष

ब्रह्मणे गीताय श्रमांय सुन्धये नुदीभ्यं उत्सादेभ्य ऋत्यै भाया अर्मेभ्यो मुन्यवे युम्यै

दशंदश् सरोंभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्कांयै बीभृत्सायै दशंदश् हसांय सप्ताक्षंराजाय त्रयोंदश्

आशायें जामिम्। प्रतीक्षायें कुमारीम्॥१९॥

दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यः

सैलगम्। पिपासायै गोव्यच्छम्। निर्ऋत्यै गोघातम्। क्षुधे

गोविकर्तम्। क्षुतृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मा १ सं

भूम्यै पीठसर्पिणमा लंभते। अग्नयेऽ५ंसलम्। वायवे

चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वश्शनर्तिनम्। दिवे खंलतिम्।

भूम्यै दर्श वाचे षडथु नवैकान्नवि १शितः॥१९॥

ब्रह्मणे यम्यै नवंदश॥१९॥

ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां त्नुवमनातां प्रपेद्ये। इदम्हं पेश्चद्येन वज्रेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योंऽस्मान्द्वेष्टि। यं चं व्यं द्विष्मः। भूभ्वः स्वंः। हिम्॥१॥

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सम्रयुः। अग्र आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सित्स ब्र्हिषिं। तन्त्वां समिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स नः पृथुः श्र्वाय्यम्॥२॥ अच्छां देव विवासिस। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नम्स्यंस्तिरः। तमा रेसि दर्श्वतः। सम्ग्निरिध्यते वृषां। वृषां अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहंनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणन्त्वा व्यं वृषन्। वृषांणः सिमधीमहि॥३॥ अग्ने दीद्यंतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववंदसम्।

अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक

श्रवाय्यंमिधीमृह्यसिं सुप्त चं॥=

देवानामिन्द्रमा वंह षट् चं॥=

----[२]

-[३]

ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हंव्यवाडिसं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यध्वरे। वृणीध्व॰ हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥

अग्ने महा असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठुतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंस शितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। र्थीरेध्वराणाम्। अतूर्तो होता। तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानाम्॥५॥ चमसो देवपानः। अरा इंवाग्ने नेमिर्देवा इस्त्वं पंरिभूरेसि। आ वह देवान् यजमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोममावंह। अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवा अग्नैज्यपा श् आवंह। अग्नि होत्रायावंह। स्वं महिमानमा वह। आ चाँग्ने

देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

अग्निरहोता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो स्रुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा ईडेन्यान्। नमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

स्मिधों अग्र आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्र आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्र आज्यंस्य वियन्तु। ब्र्हिरंग्र आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौ। स्वाहैंन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्॥

स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवा॰ आँज्यपान्। स्वाहाऽग्नि॰ होत्राञ्जंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विपन्ययाः। सिमिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्वश् सोमासि सत्पंतिः। त्वश् राजोत वृत्रहा। त्वं भृद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हविषो वेतु। अग्निः प्रह्नेन

जन्मना। शुम्भानस्तनुव स्वाम्। कविर्विप्रेण वावृधे।

जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्ठां वयम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हविषों वेतु॥९॥

स्वार पर चं॥———[६] अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पतिः पृथिव्या अयम्। अपार

रेता रेसि जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सर्चसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानंन्दिधेषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। स वेद पुत्रः पितर् समातरम्। स सूनुर्भुवत्स भुवत्पुनर्मघः। स द्यामौर्णोद्नतिरिक्ष् स सुवंः। स विश्वा भुवो अभवत्स आभवत्। अग्नीषोमा सवेदसा। सहूंती वनत्ङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्कत् अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रं रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् श्वतं गृभीतान्। इन्द्रौग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वौश्चेति प्रवीर्यम्। श्वर्थद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रा यो अग्नी सहुंरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैंः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सान्सि रियम्॥१२॥ स्जित्वांन सदासहम्ं। वर्षिष्ठमूत्रयं भर। प्रसंसाहिषे प्रहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। प्रजन्यां वृष्टिमा इंव। स्तोमैंर्वत्सस्यं वावृधे। महा इन्द्रों नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोंभिः। अस्मिद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृतः कर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवा उश्वतो यविष्ठ। विद्वा ऋतू र् र्ऋतूपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्सतेभिरग्ने। त्व होतृंणामस्यायंजिष्ठः। अग्नि स् स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्वोमंस्य प्रिया धामांनि॥१४॥

अयांडुग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांडुग्नीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंदग्नेरहोतुंः प्रिया धार्मानि। यक्ष्तस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

अस्त्वधृतः र्यं चंर्षण्पाः सोमंस्य प्रिया धामानीषः षद्वं॥—————[७] उपहूतः रथन्त्रः सह पृथिव्या। उपं मा रथन्त्रः सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपहूतं वामदेव्यः सहान्तरिक्षेण। उपं मा वामदेव्यः सहान्तरिक्षेण ह्वयताम्। उपहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्वंयताम्। उपहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपहूताः धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मार इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥१७॥ दैव्यां अध्वर्यव उपंहताः। उपंहता मनष्याः। य इमं

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपंहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुत्रे। उपहूतोऽयं यजमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपहूतः। भूयंसि हविष्करण उपहूतः।

दिव्ये धाम्नुपंहूतः। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मिनुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहृतस्योपंहृतः॥१८॥

सहर्षभा ह्वयत्मपुर्वहृत हिव्षक्तरण उपंहृतश्चलारि च॥————[८] देवं ब्रहिः। वृसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशर्सः। वृसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सृत्यमन्मायजी होता। होतुरहोतुरायंजीयान्। अग्ने यान् देवानयाँट्। यार् अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमत्सत। तार् संसनुषीर् होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेर्ययमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वृसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥१९॥

अपिँप्रेः पर्श्वं च॥———[९]

इदं द्यांवापृथिवी भ्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नमोवाकम्। ऋध्यासमं सूक्तोच्यंमग्ने। त्वश् सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्तांम्। शुङ्गये जीरदांन्। अत्रंस्रू अप्रवेदे। उरुगंट्यूती अभयं कृतौं॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भुवौं मयोभुवौँ। ऊर्जस्वती च् पर्यस्वती च। सूप्चरणा चं स्वधिचरणा चं। तयोराविदि। अग्निरिदश ह्विरंजुषता अवीवृधत महो ज्यायोऽकृत। सोमं इदशह्विरंजुषता अवीवृधत महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिदश ह्विरंजुषत॥२१॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। प्रजापंतिरिदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्नीषोमांविदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्रं इदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। महेन्द्र इदः ह्विरंजुषत॥२२॥

अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवींवृधन्त महो ज्यायोंऽऋत। अग्निरहोत्रेणेद॰ ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृधृद्धोत्रांयान्देवङ्गमायाँम्। आशांस्तेऽयं यर्जमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शाँस्ते। सजातवनस्यामा शाँस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयज्यामा शाँस्ते। भूयों हविष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यन्धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हविषा-ऽऽशांस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मे देवा रांसन्ताम्। तदग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। वयमग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिंवांमस्येदं र्च। नमों देवेभ्यः॥२४॥

अभ्यं कृतांवकृताग्निरिद॰ ह्विरंजुषत महेन्द्र इद॰ ह्विरंजुषत सजातवनस्यामा शांस्ते वीतं

तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वक्षिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदैं। शश्चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छं योर्ष्टौ॥ -[88]

आप्यांयस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियन्तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुशतीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वार्जसातये। याः पार्थिवासो या अपामिपं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंत्रीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी शृंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निरहोतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यानाम्। यिजेष्टः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंम समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

उपंहूत १ रथन्त्र १ सह पृथिव्या। उपं मा रथन्त्र १ सह

पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य स्महान्तिरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य स्महान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षभा। उपं मा धेनुः सहर्षभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपों अस्मार इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतुमुपंहृतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुत्रे। उपंहूतेयं यजंमाना। इन्द्राणीवां-ऽविध्वा। अदिंतिरिव सुपुत्रा। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हिवष्करंण उपंहूता। दिव्ये धामन्नुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्ज्ञंषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥

स्हर्षंभा ह्वयतामुपंहूत सपुत्रा षट्वं॥———[१३]

स्तयं प्रवोऽग्नें महानुग्निर्होतां स्मिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपहूतं देवं बर्हिरिदं द्यांवापृथिवी

तच्छुं योरा प्यांयुस्वोपंहूतुत्रयोदश॥१३॥

स्तयं व्य स्याम वृष्टिद्यांवा त्रि रशत्॥३०॥

स्त्यमुपंहूता॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामध्वरे देवयन्तः। वनस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्भविणेह धंतात्। यद्वा क्षयों मातुरस्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर ५ सुवीरम्॥१॥ आरे अस्मदमंतिं बाधंमानः। उच्छ्रंयस्व महते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वार्जस्य सनिता यदिश्विभिः। वाघद्विविह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नेः पाह्य १ हंसो नि केतुना। विश्व सम्त्रिणन्दह। कृधी न ऊर्ध्वां च रथाय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवं:॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्नाँम्। सम्पर्य आ विद्ये वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसो मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्। युवां सुवासाः परिवीत् आगात्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तन्धीरांसः क्वय् उन्नंयन्ति। स्वाधियो मनंसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्णिख्स्वाहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाट्। त॰ स्बाधों यतः स्रुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचंकुर्ग्निमृतयें। त्वं वर्रुण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वस्रुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीर्न्दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥— होतां यक्षद्ग्रि स्मिधां सुष्मिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्गथे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाज्यंस्य होत्यर्ज। होतां यक्ष्तनूनपात्मिदितेर्गर्भं भुवनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानांन्पथो अनक्तु वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्रराश रसं नृशस्त्रं नृरः प्रणेत्रम्। गोभिर्वपावान्त्स्याद्वीरेः शक्तीवान्नथैः प्रथमया वा हिरंण्यैश्चन्द्री वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निमिड ईंडितो देवो देवा अविक्षदूतो हं व्यवाडमूरः। उपेमं युज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथता ५ स्वासस्थं देवेभ्यः। एमेनदद्य वसंवो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्याज्यंस्य होत्र्यज्॥४॥

होतां यक्षद्द्रं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् युज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यंस्य होत्यर्ज। होतां यक्षदुषासानक्तां बृहती सुपेशंसा नृ शः पतिंभ्यो योनिं कृण्वाने। सङ्स्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं बर्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करिद्वा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सतंवसेमं युज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्पसांमुपस्तंमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मचिष्टुमपांक र रेतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपमकामकर्शन १ सुपोषः पोषैः स्यात्सुवीरों वीरैर्वेत्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावसक्षिद्धयो जोष्टार १ शुशमुन्नरः। स्वदात्स्विधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो हव्यावाङ्घेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदेसः स्वाहां स्तोकानाः स्वाहा स्वाहांकृतीनाः स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवार आंज्युपान्त्स्वाहाऽग्निर

होत्राञ्ज्षंषाणा अग्र आज्यंस्य वियन्तु होतुर्यजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरों वी्रैर्वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं चृत्वारिं च (अग्निन्तनूनपांतृत्रराशश्संमृग्निमृड ईिंडुतो ब्रहिर्दुरं उषासानक्ता दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वनस्पितिमृग्निम्। पश्च वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्र्यंजं॥)॥ 2

सिमद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिस जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वन्दूतः कविरंसि प्रचेताः। तनूंनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्वां समुञ्जन्तस्वंदया सुजिह्न। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरन्नः। नराशश्संस्य मिहुमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्ततस्यं यज्ञैः॥६॥

ते सुक्रतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होतां। स एंनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अह्रांम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदिंतये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिंभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यों भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्ते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृह्ती सुंरुक्ते। अधि श्रियर् शुऋपिशन्दधांने। दैव्या होतांरा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना यज्ञं मनुषो यज्ञंध्ये॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूर्यमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतर्यन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हिरेद इस्योनम्। सरम्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावांपृथिवी जिनंत्री। रूपैरिप ५ शद्भुवंनानि विश्वां। तम्द्य होतरिषितो यजीयान्। देवन्त्वष्टांरिमह यक्षि विद्वान्॥९॥ उपावंसृज्तमन्यां समुअन्। देवानां पार्थं ऋतुथा हवी १ षिं। वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु हव्यं मधुना घृतेनं। सद्यो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुंः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृत हिवरंदन्तु देवाः॥१०॥ युज्ञैः स्योनं यर्जध्यै विद्वानृष्टौ चं॥—

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियंः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी रथीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः क्विः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्।

दधद्रलांनि दाशुषे॥११॥

अर्जेद्गिः। असंनुद्वाज्ञि। देवो देवेभ्यों ह्व्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेनांभिः कर्ल्पमानः। यज्ञस्यायुः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हव्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत बर्हिः। अन्वेनं माता मंन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँध्यः। उदीचीना अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यश्रक्षंगंमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छातात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामृत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाहू॥१४॥ श्रुला दोषणीं। कृश्यपेवाश्सां। अच्छिंद्रे श्रोणीं।

धत्ताद्वाह् मा रांविष्ट तथांतथा॥=

क्वषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षड्विरंशितरस्य वङ्कंयः। ता अनुष्ठ्योच्यांवयतात्। गात्रंङ्गात्रमस्यानूनं कृणुतात्। ऊव्ध्यगोहं पार्थिवङ्कनतात्। अस्रा रक्षः सर्मृजतात्। वनिष्ठमंस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उरूकं मन्यमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवेच्छमितारः। अधिगो शमीष्वम्। सुशमि शमीष्वम्। शुमीष्वमंधिगो। अधिगुश्चापांपश्च। उभौ देवानार् शमितारौँ। ताविमं पृशु ॥ श्रंपयतां प्रविद्वा १ सौँ। यथांयथा ऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥ १ ६॥

जुषस्वं सप्रथंस्तमम्। वचों देवप्संरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जातवेदो

जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंर्मं देववीतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्ं। तुभ्य ई स्तोका घृंतश्चतंः। अग्ने विप्रांय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिमध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य ई श्लोतन्त्यिष्ठगो शचीवः। स्तोकासों अग्ने मेदंसो घृतस्यं। कृविशस्तो बृंह्ता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृतम्। प्र तें व्यन्दंदामहे। श्लोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्दंवशोविंहि॥१८॥

वेववीतय उद्घंतत्रीणि च॥———[७] आवृंत्रहणा वृत्रहिभः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्। युव १ राधोभिरकंविभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमेभिः। होतां

यक्षदिन्द्राग्नी। छार्गस्य वपाया मेदंसः। जुषेता १ हिविः। होत्यंजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रांग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वान्धियं वाज्यन्तींमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवेः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरन्दूत्याय। हिविष्मन्तः सदिमन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो ब्रहिरंग्ने। अहान्यस्मे सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवेः। होत्र्यजं॥२०॥

गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्।

इन्द्रौग्नी वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देणौः। माच्छौदा रुश्मी १रिति नार्धमानाः। पितृणा १ शक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्याङ्कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्री धिषणांया उपस्थै। अग्नि संदीति स् सुदर्शं गृणन्तः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वान्दूतमंर्ति हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

जात्वेवो हे चं — [१]
त्व इ ह्यंग्ने प्रथमो मनोताँ। अस्या धियो अभवो दस्महोताँ।
त्व इ सीं "वृषन्नकृणोर्दृष्टरीत्। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्ये।
अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः
सन्। तन्त्वा नरंः प्रथमन्देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो
अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिवंस्व्यैः। त्वे र्यिञ्जांगृवा इसो
अनुंग्मन्॥२२॥
रुशंन्तमग्निं दंरशतम्बहन्तमं। वपावंन्तं विश्वहां दीदिवा इसमं।

रुशन्तमृग्निं देर्शतम्बृहन्तम्। वृपावन्तं विश्वहां दीदिवा स्मम्। पदं देवस्य नर्मसा वियन्तः। श्रवस्यवः श्रवं आपन्नमृंक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे युज्ञियानि। भुद्रायान्ते रणयन्त सन्दृष्टौ। त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्याम्। त्वश्र रायं उभयांसो जनानाम्। त्वन्नाता तरणे चेत्योभूः। पिता माता

सदमिन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तन्त्वां वयन्दम् आ दीदिवा सम्मै। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तन्त्वां वय स्पियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तः। त्वं विशों अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्भं चंर्षणीनाम्॥२४॥

ान्ताशन वृष्म चर्षणानाम्॥२४॥ प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्तर रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शशमे च मर्तः। यस्त आनंद्वमिधां हृव्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोभिः। विश्वेत्सवामा दंधते त्वोतंः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोभिरग्ने सुमिधोत हृव्यैः। वेदीसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भृद्रायार् सुमृतौ यंतम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुंत्रः। बृहद्भिवांजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वितृरं वि भाहि। नृवद्वंसो सद्मिद्धेंह्यस्मे। भूरिंतोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषो बृह्तीरारे अंघाः। अस्मे भुद्रा सौंश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूंनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार् सन्तिं। अग्ने वसुं विधते राजनित्वे॥२६॥

जागृवारसो अनुग्मुन्मानुषाणाश्चर्षणीनां यंतेमाश्यान्द्वे चं॥————[१०]

आभंरत शक्षतं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत् श्र्मांभाः। इमे नु ते रृश्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य हृविष् आत्तांमुद्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषोंभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तांन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्ञाणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः श्वातरुद्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शिंतामृत उंत्साद्तः। अङ्गांदङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेताः हृविः। होत्र्यजी देवेभ्यो वनस्पते ह्वीः षिं। हिरण्यपणं प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां निययं। ऋतस्यं विश्व पृथिभी रिजंष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पितंमिभिहि। पिष्टतंमया रिभंष्ठया रश्नयाधित। यत्रेन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथा स्सि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यत्राग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता र हिवः। होत्रर्यजं। पिप्रीहि देवा र उश्तो यंविष्ठ। विद्वा र ऋतू र र ऋतु पते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व र होतॄणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्गि स्विष्टकृतम्। अयांड्गिरिन्द्राग्नियोष्छागंस्य हिवषः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतः प्रिया पाथा रसि। अयाङ्ग्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता र हिवः।

होतुर्यजं॥३०॥

न्नमर्थं कृत्वी पाथारंसि सम चं॥———[११]
उपो ह् यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्मिविप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः।
अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते।
वनंस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्।
वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः।
अग्नि स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरिन्द्राग्नियोशछगंस्य ह्विषंः

प्रिया धार्मानि॥३१॥

धार्मानि भूरेकं च॥=

अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथारेसि। अयाङ्गेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्षत्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषतारे ह्विः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्ट्वर हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

देवं ब्र्हिः सुंदेवं देवैः स्यात्सुवीरं वीरैर्वस्तौंवृज्येताक्ताः प्रिभ्रेयेतात्यन्यात्राया ब्र्हिष्मंतो मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विङ्वीर्यामंञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वत्स ईमेनास्तरुंण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मेना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन्यज्ञे प्रयत्यंह्वतामिपं नूनन्दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाः सुप्रीते सुधिते वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्टी वसुंधिती ययोर्न्याऽघाद्वेषाः सूप्रीते य्यवदान्यावंक्षद्वसु

वार्याणि यजमानाय वसुवने वसुधेयस्य वीतां यजी देवी ऊर्जाहुंती इषुमूर्जम्न्यावंक्षुत्सिण्ड् सपीतिमन्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतारा नेष्टांरा पोतारा हताघंश सावाभ्रद्वंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सर्रस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरसपृक्षत्सरस्वतीम । रुद्रैर्य्ज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधुमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्संस्त्रिशीर्षा षंडुक्षः श्तिमिदेन १शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रमीं प्रवहिन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतो बृह्स्पितिः स्तोत्रमृश्विनाऽऽध्वंर्यवं वसुवनंवसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो वनस्पतिव्रषप्रांवा घृतनिर्णिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्यंनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ हिस्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेषांऽसि प्रच्युंतीनामप्रं-च्युतन्निकाम्धरेणं पुरुस्पार्हं यशस्वदेना बुर्हिषाऽन्या ब्रही श्ष्यमि ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्ज। देवो

अग्निः स्विष्टकृत्सुद्रविणा मृन्द्रः क्विः स्त्यमंन्माऽऽयजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानग्ने यान्देवानयाड्याः अपिप्रेयें ते होत्रे अमंत्सत् ताः संस्नुषीः होत्रान्देवङ्गमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमः स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूवंसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यजं॥३३॥

वेवं ब्रहिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवनं वसुधेयंस्य

वसुधयस्य वियन्तु। द्वा उषासानक्ता। वसुवन वसुधयस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवने वसुधेर्यस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवने वसुधेयस्यं वीताम्॥३४॥

ऊजाहुता। वृसुवन वसुधयस्य वाताम्॥ ३४॥ देवा दैव्या होतारा। वृसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वृसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशश्सेः। वृसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवो वन्स्पितेः। वृसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवं ब्रहिर्वारितीनाम्। वृसुवने वसुधेयंस्य वेतु॥ ३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सत्यमन्मायजी होतां। होतुरहोतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंत्सत। ता श्रमंसुनुषी होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषु यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्रे होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥३६॥

भूति वेलभूरेकं वाश्रि]
अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्यक्तीः
पर्चन्युरोडाशं बृध्रन्निन्द्राग्निभ्याञ्छागर् सूपस्था अद्य
देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छागेनाघंस्तान्तं मेंद्स्तः
प्रतिपच्ताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशंन त्वामृद्यर्षं आर्षेय
ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गतेभ्य
पृष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा
देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं
होत्रसि भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूका
ब्रीह॥३७॥

अ्ग्रिम्द्यैकम्॥——[१५]

अञ्जन्ति होतां यक्षत्सिमंद्धो अद्याग्निरजैद्दैच्यां जुषस्वा वृत्रहणा गीर्भिस्त्वः ह्याभंरतमुपोह् यद्देवं बुर्हिः सुंदेवं देवं बुर्हिरग्निमद्य पर्श्वदश॥१५॥

अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गीर्मिरुपों हु यद्विदर्थं वाजिनंः सप्तित्रिरंशत्॥३७॥

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषाँ उग्नौ कामान्त्रवेशयति। योँ उग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। सयदिनिं द्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एन्ङ्कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यन्ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षितयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इतिं। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एन्ङ्कामा अनु प्रयाँन्ति। तेज्ञस्वी वीर्यांवान्भवित। सन्तित्वा एषा यज्ञस्यं। योँऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चंमुद्धृत्यं। मन्सोपितष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥ मनंसैव यज्ञ स् सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याहिताग्नेरिग्नरेपक्षायंति। याव्च्छम्यंया प्रविध्येत। यदि तावंदपक्षायेत्। तस् सम्भरेत्। इदन्त एकं प्र उत् एकम्॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि। प्रिये

देवानां पर्मे ज्ञिन्त्र इतिं। ब्रह्मंणैवैन् सम्भिरितः। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदिं परस्तरामंपृक्षायेत्। अनुप्र्यायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तः। ओषंधीर्वा एतस्यं पृशून्पयः प्रविंशितः। यस्यं हिवषं वत्सा अपाकृता धयन्ति॥४॥ तान् यदुद्यात्। यातयांमा हिवषां यजेत। यन्न दुद्यात्। यज्ञपुरुर्न्तरियात्। वायव्यां यवागून्निवंपेत्। वायुर्वे पर्यसः प्रदापयिता। स एवास्मे पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसेवास्मे पयोऽवंरुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृत्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयिति। ये यजंमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायन्दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छति। इन्द्रांय व्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं एवारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुंर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयो-ऽवंरुन्थे। अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृत्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांग्धेयेन् व्यर्धयति। ये यजमानस्य सायं च प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् हविरार्तिमार्च्छति॥७॥

पेन्द्रं पश्चेशरावमोदनित्रर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निम्ंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पर्यसैवास्मै पयोऽवंरुन्थे। अथोत्तरंस्मै ह्विषं वत्सानपाकुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंप्रुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायिति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तः॥९॥

द्धाति यज्ञ उत् एक्-धर्यन्ति रुन्धे कुर्यादार्च्छत्यपार्क्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदिं परस्तुरामोषंधीरन्यतुरानुभयांनुर्धो वै॥)॥———[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेंत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्ययूर्चा वंल्मीकवपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वै वल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्याह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यय्याऽन्तः परिधि निनंयेत्। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिंष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदवंवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्यात्मञ्जायेत। किलासों वास्यादंर्श्वसो वां। यत्प्रत्येयात्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। स जुंहुयात्। मित्रो जनांन्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरनिंमिषाऽभि चंष्टे। सत्यायं हृव्यं घृतवंज्जहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वस्यामाहुंत्या ह्तायामुत्तराऽऽहुंतिः स्कन्देंत्। द्विपाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥ चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गृह्या नामानि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पत्ययुर्चा स्मिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनंजुंहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यार्ताश्चानांर्ताश्चाहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्धा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गांरः स्कन्देंत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक इस्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पत्निये च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदुद ईः। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तः प्रिह्रियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदंध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमों रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्सीरमुं मा हिर्सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंश्वङ्गो वृष्भो जातवेदाः। स्तोमपृष्ठो घृतवान्त्सुप्रतीकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहाम। गोपोषं नो वीरपोषं चं युच्छेति। ब्रह्मणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयति प्रजानन्नभि जुंहुयात्स्याँद्धियेत् जहांम् त्रीणिं च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापृत्यया यत्कीटा मेध्यमेन यदवंबृष्टेन यत्पूर्वस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गांरो यद्वेक्षिणा

यत्प्रत्यग्यदुदर्ङ्॥)॥———[२]

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याहिताग्नेर्ग्निर्म्थ्यमानी न जायते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायाः होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यदजस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं भंवति॥१८॥

अंपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तम्भांगुधेयेन् व्यंर्धयेत्। तस्माँद्वाह्मणो वंसत्यै नापरुध्यंः। यदि ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भुस्तुम्बे होत्व्यम्। अग्निवान््वै दर्भस्तुम्बः। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भाङ्स्तु नाध्यांसीत॥१९॥ यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्मौद्दर्भा नाध्यांसितव्याः। यदि दर्भान्न विन्देत्। अप्सु होतव्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतास्वेवास्याग्निहोत्र ध हुतं भंवति। आपुस्तु न परिचक्षीत। यदापंः परिचक्षीत॥२०॥ यामेवाप्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न पंरिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तुनुवौ स॰ सृंज्येते। यस्याहिताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः सर्मुज्यन्तै। अग्नये विविचये

ब्राह्मणन्तु वंसत्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्रौह्मणं वंसत्या

पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निर्वपेत्। मेध्यांश्चैवास्यांमेध्यां चं तृनुवौ व्यावंतियति। अग्नयें व्रतपंतये पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव व्रतपंति स्वेनं भाग्धेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥ गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा पृतद्वाजिन्माहिताग्नेः। यदिग्निहोत्रम्। तद्यत्स्रवैत्। रेतौऽस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंक्रित्यांह। रेते एवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं पुव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैवास्मैं प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामव चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽग्रावेवास्यांग्रिहोत्र हुतं भंवति भवत्यासीत परिचक्षीत लम्भयति दधाति देवानां बृह्स्पतिः पश्चं च (वि वे यद्यन्यमृजायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बेंऽप्सु होत्व्यम्॥)॥—[3] याः पुरस्तांत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टात्सर्वतंश्च याः। ताभी रिश्मपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनस्स्पतिना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्रयुज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायुत्रिया सोम् आभृतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नयितुम्। वर्कलमन्तरमा दंदे। आपो देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्रांणि शुन्धत। उपातङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुंन्धत। पयों गृहेषु पयों अघ्नियासुं। पयों वृत्सेषु पय इन्द्रांय हिवषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्केनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥ अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मयोभूः। य उद्यन्तमारोहिति सूर्यमहैं। आदित्यअयोतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो युज्ञायं रमतां देवतांभ्यः। वसूनुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इमामूर्जं पश्चदशीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परि गृह्णामि पूर्वः॥२६॥ अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास १ हविरिदमें षां मियं। आमावास्य १ हिवरिदमेषां मियं। अन्तराऽग्नी प्शवंः। देवस १ सदमा गंमन्। तान्पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिमभि संवसानाः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयां। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पितृणामृग्निः। अवाँह्वव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं केरत्। अजस्त्रन्त्वाः संभापालाः॥२८॥

विज्यभाग्रे सिन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्ये श्रदः श्तम्। अन्नमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्रदः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिर्बुप्नियो नि यंच्छत्। इदम्हम्भिज्येष्ठभ्यः। वस्भयो युज्ञं प्रब्रंवीमि। इदम्हमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यो यज्ञं प्र ब्रंबीमि। इदमहं वर्रणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यो यज्ञं प्र ब्रंबीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स स्रंज। अग्ने व्रतपते वृतं चरिष्यामि। तच्छंकेयन्तन्मे राध्यताम्। वायो व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

व्रतानां व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि। तच्छंकेयन्तन्मं राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमिभ सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशृष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णो रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामंकविश्शित्धा।

सम्भंरामि सुसम्भृतां॥३१॥

प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रीन्पंरिधी १ स्तिम्रः स्मिधंः। यज्ञायुंरन्सश्चरान्। उपवेषं मेक्षंणं धृष्टिम्ँ। सं भंरामि सुस्म्भृताँ। या जाता ओषधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्ं। अपां मेध्यं यज्ञियम्ँ। सदेव १ शिवमंस्तु मे॥३२॥ आच्छेता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्रतम्। अपंरिमितानां परिमिताः। सन्नह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कृतमच्चनाहम्। पुनंकृत्थायं बहुला भवन्तु। स्कृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मन्त्सींदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोतृंतमम्। पयों हृव्यं कंरोतु मे। इमौ प्रांणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सश्चंरताम्। प्वित्रं हव्यशोधंने। प्वित्रं स्थो वैष्णवी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥ अयं प्राणश्चांपानश्चं। यज्ञंमानमि गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूतां पोतांरौ। प्वित्रं हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविदः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तेनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूनाम्। प्वित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय र र ज्ञुंरिभ्धानीं। अग्नियामुपं सेवताम्। अप्रस्न स्साय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हृविः कृण्वन्तः। शिवः श्रग्मो भंवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्यायुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पवित्रमितंनीताः। आपो धारय मातिंगुः। देवेनं सिवत्रोत्पूंताः। वसोः सूर्यंस्य रिष्मिभिः। गान्दोहपिवत्रे रज्जुम्ं। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चंरन्ति मधुंमृद्दुहांनाः। प्रजावंतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥ बह्वीर्भवंन्तीरुपजायंमानाः। इह व इन्द्रो रमयतु गावः।

पूषा स्थं। अयक्ष्मा वंः प्रजया सः सृंजामि। रायस्पोषेण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यज्ञं पृंथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायुः। यजमानाय द्रविंणन्दधातु॥३८॥

उत्सन्दुहन्ति कुलश्श्रतुंर्बिलम्। इडाँ देवीम्मधुंमतीश् सुवर्विदम्। तिदेन्द्राग्नी जिन्वतश् सूनृतांवत्। तद्यजंमानममृत्त्वे देधातु। कामधुक्षः प्र णौ ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्याँ देवानाम्। मनुष्यांणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हृव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृत्सेभ्यों मनुष्येंभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः पंरिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छतु॥४०॥

पूर्णवल्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चे दुर्भं च। देवाना हिव्यशोधनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णो ह्व्य हि रक्षंसि। उभावृग्नी उपस्तृण्ते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यङ्गोपतये पृशून्॥४१॥

आर्भृत इमं गृह्णामि पूर्वस्ताः पूर्वः परिगृह्णामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आर्दित्य व्रतपते सुसम्भृतां मे सह पुंनातु गहि नो विश्वरूपा दधातु पुनर्गच्छतु पृशून् (याः पुरस्तांदिमामूर्जमिह प्रजा इह प्रश्वे प्रयोगिष्णाम् शिः।)॥———[४] देवां देवेषु परांक्रमध्वम्। प्रथमा द्वितीयंषु। द्वितीयास्तृतीयंषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद शकेयं यदिदं करोमिं।

आत्मा करोत्वातमनैं। इदं करिष्ये भेषजम्। इदम्में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमृहर सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥

मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भाहि। मह्त इंन्द्रियायं। आ प्यांयतां घृतयोनिः। अग्निर्हृव्याऽनुं मन्यताम्। खमंङ्क्ष् त्वचंमङ्क्षा सुरूपन्त्वां वसुविदम्। पृशूनान्तेजंसा। अग्नये जुष्टंमभि घारयामि। स्योनन्ते सदंनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्त्सीदामृते प्रतितिष्ठ। ब्रीहीणाम्मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उत्स्रांति जिन्ता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वित्रस्थे। आत्मन्वान्त्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवान्गच्छु सुवर्विन्द् यजमानाय मह्यम्। इरा भूतिः पृथिव्यै रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥ देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे।

यस्याँस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्टइं स्वन्द्त्तम्। स्वं पूर्तइं स्वइं श्रान्तम्। स्वहं हृतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्योः पिता॥४५॥ पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेमां संविक्था मा त्वां हिह्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भर्तमुद्धेरेमनुं षिञ्च। अवदानांनि ते प्रत्यवंदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिह्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनंः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यायतां पुनः। अज्यायो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्धः स्विष्टमिदः ह्विः। मनुना दृष्टाङ्गृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दृक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्ये-कृतोमुंखाम्॥४७॥

इडे भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भिक्षवाणः स्याम। सर्वात्मानः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रुप्तिंरसि। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पन्ताम्मे दिशः॥४८॥ दैवींश्च मानुंषीश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। सुंवृत्सुरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पतां मे। आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः॥४९॥ विधेमं हविषां वयम्। भर्जतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्त। निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद १ हविः॥५०॥ सोम्याना र सोमपीथिनांम्। निर्भक्तो ब्राँह्मणः। नेहा ब्राँह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बर्हिर्हविषां घृतेनं। समांदित्यैर्वसुंभिः सम्मरुद्धिः। समिन्द्रेण विश्वेभिर्देवेभिरङ्काम्। दिव्यं नभौ गच्छतु यत्स्वाहाँ। इन्द्राणीवां ऽविधवा भूयासम्। अदिंतिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥ उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। संजानानौ विजंहतामरातीः। दिवि ज्योतिर्जर्मा रंभेताम्। दश्ते तनुवो यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजमानो घृतेनं। नारिष्ठयौः प्रशिष्मीडमानः।

देवानां दैव्येऽपि यर्जमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जो भाग श्रांतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हहा। अहं देवाना श्रे सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिम् छं न मिथुंर्भवाति। अहन्नांरिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदांभ्यामिन्द्रो अदंधाद्भाग्धेयंम्। अदांरसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नों विदद्भिभामो अशंस्तिः॥ ५३॥

मा नो विदद्वृजना द्वेष्या या। ऋष्भं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता स्युवीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहां। अभि स्तृणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिम्मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः

सुवर्णाः। निष्का इमे यजमानस्य ब्रुध्ने॥५४॥

अभीत्वंर्ये करोमि क्रमीत्पिताऽऽत्मनं एकतो मुंखां मे दिशोऽध्यंक्षेभ्यो हुविर्गार्हपत्या

कल्पयुन्नशंस्तिः सा नों दोहताः सुवीर्यः सप्त चं॥————[५]

तपस्वी॥५७॥

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजीमानं भुनक्तः। अपा रस् ओषंधीना रस्वर्णः। निष्का इमे यजीमानस्य सन्तु कामदुधाः। अमुत्रामुष्मिं ह्योके। भूपते भुवनपते। महुतो भूतस्य पते। ब्रह्माणन्त्वा वृणीमहे। अहं भूपतिरहं भुवनपतिः। अहं महुतो भूतस्य पतिः॥५५॥ देवेनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यङ्करिष्यामि। देवं सिवतरेतन्त्वां

द्वन सिव्ता प्रसूत् आत्विज्यङ्कारिष्यामि। देव सिवतर्तन्त्वा वृणते। बृह्स्पित्ं दैव्यं ब्रह्माणम्ं। तद्हं मनंसे प्र ब्रंवीमि। मनो गायत्रिये। गायत्री त्रिष्टुभें। त्रिष्टुङ्गगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभें। अनुष्टुक्पङ्क्षी। पङ्किः प्रजापंतये॥५६॥ प्रजापंतिर्विश्वंभ्यो देवेभ्यः। विश्वं देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पितिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भवः सुवंः। बृह्स्पितिर्द्वानां ब्रह्मा। अहं मनुष्यांणाम्। बृहंस्पते यज्ञङ्गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा

अन्तर्दूतश्चरित् मानुंषीषु। चतुंः शिखण्डा युव्तिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यें। मुर्मृज्यमांना मह्ते सौभंगाय। मह्यंन्धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा महिमानं पुपोष।

487

ततों देवी वर्धयते पया रसि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वरीश्च। यो मां हृदा मनसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदयेनेष्णता चं। तस्यैन्द्र वर्त्रेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृद् प्रथंमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदनाय बर्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पर्मे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका वयुनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥

सा में धृक्ष्व यजंमानाय कामान्। शिवा चं मे श्ग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्ष्रुत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पृष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यंम्मे पिन्वस्व। प्रजां पृश्नमें पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु मैं। अविक्षोभाय परिधीन्दंधामि। धर्ता धुरुणो धरीयान्। अग्निर्हेषा रेसि निरितो नुंदातै। विच्छिनद्मि विधृंतीभ्या स्पन्नान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो युत्राभ्यां विधंमाम्येनान्। अहङ् स्वानामुत्तमोऽसानि देवाः। विशो युत्रे नुदमाने अरातिम्। विश्वं पाप्मानममंतिं दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी संकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मयि धारयतम्। प्रजाम्मयि धारयतम्। पश्नमयि धारयतम्। अयं प्रस्तर उभयंस्य धृती। धृती प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स दांधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्त्सुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमांणाः। दोहें यज्ञ सुद्धांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मत्सपत्नाः। यो मा वाचा मनसा दुर्मरायुः। हृदाऽरातीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरन्ध्रुवायाः। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मत्सपत्नाः। ऋष्भोऽसि शाक्तरः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदिस सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथीय प्रजयां पृशुभिः सुवर्गे लोके। दिवि सींद पृथिव्याम्नतिरक्षे। अहमुत्तरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मत्सपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शतधार उत्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। युज्ञोऽसि सुर्वतः श्रितः। सुर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रयताम्। शतम्भे सन्त्वाशिषः। सहस्रम्मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापितरिस सर्वतः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरांवतीः पशुमतीः। इदिमिन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकित्सन्। तेनं देवा अवतोप् माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओर्जः सनेयम्। शृतं मिये श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्चद्वलिमिन्द्रे प्रजापितिः। इदन्तच्छुकं मध् वाजिनीवत्। येनोपिरिष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध मान्धिनोतु। अयं वेदः पृथिवीमन्वविन्दत्। गुहां स्तीङ्गहेने गह्वरेषु। स विन्दतु यर्जमानाय लोकम्। अच्छिदं युज्ञं भूरिकर्मा करोतु। अयं युज्ञः समंसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्ना यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्त्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह कामयाते। अस्मिन् युज्ञे यजंमानाय मह्म् अप तिमेन्द्राग्नी भुवनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिर्म। अग्निमंत्रादमृत्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मान्द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामाज्यम्ं। विच्छिन्नं यज्ञश् सिम्मन्दंधातु। बृह्स्पतिंस्तन्तािम्मन्नंः। विश्वे देवा इह मांदयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्चािमे। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृश्चत॥७०॥ अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यंः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मान्द्वेष्टिं जातवेदः। यश्चाहन्द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। या॰ श्चाहन्द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा ससृवा॰सम्॥७१॥

वार्जं जिगिवाश्सम्। वाजिनं वाजितम्। वाजितियायै सम्मार्जिम। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। वेदिर्ब्रहः शृतश् ह्विः। इध्मः परिधयः सुचंः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्यांश्च वषद्वाराः। सम्मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मस्त्रहंने हुते॥७२॥ दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तश् शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोचत्। ओषंधे मो अहश् श्रुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्रिमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नमः। त्रिष्फुलीक्रियमाणानाम्। यो न्यङ्गो अवशिष्यंते। रक्षंसां भाग्धेयम्। आपुस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥ उलूखंले मुसंले यच शूर्पें। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालैं। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजािम। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्वीः। अग्रौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोिम। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नौन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिह। निम्रोचन्नधंरान्कृिध॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नो भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्न्नुत्तंरां दिवम्। हुद्रोगम्ममं सूर्य। हुरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथो हारिद्रवेषुं मे। हिर्माणं नि दंध्मिस। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहंसा सह। द्विषन्तं ममं रन्धयन्। मो अहन्द्विषतो रंधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात। उषाश्च तस्मैं निम्नुक्रं। सर्वं पाप समूहताम्॥७७॥

यो नंः स्पत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायतः। मा तस्योच्छेंषि किश्चन। अवंसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषाङ्कश्चनोच्छिंषः॥७८॥ पितः प्रजापंतये तप्स्वी वाचा सौभंगाय पृश्नमें पिन्वस्व दुर्मरा्युं देवयानांनग्नेऽन्तिरिक्षेऽहम्त्तरो भूयासं प्रजापंतिरिस स्वर्तः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाज्जितं पृथिवी ह्वंयतामग्निराग्नींप्रादृश्चत सस्वा॰स॰ हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दथ्मस्यूहतामृष्टौ चं॥————[६]

सक्षेदं पंश्य। विधंतिर्दं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पनिष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो वरिष्ठो अक्षिभिर्विभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षत्रस्य योनिः। क्षत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रृद्धां मनंसा। दीक्षान्तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजंमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्नांयतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाकर गायत्रीं प्र पंद्ये। तान्तें युनिज्म। इन्द्रं शाकर त्रिष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्तें युनिज्म। इन्द्रं शाकर् जर्गतीं प्र पंद्ये। तान्तें युनिज्म। इन्द्रं शाकरानुष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्तें युनिज्म। इन्द्रं शाकर पृक्किं प्रपंद्ये॥८१॥ तान्तें युनिज्म। आऽहन्दीक्षामंरुहमृतस्य प्रतीम्ं। गायत्रेण

छन्दंसा ब्रह्मंणा च। ऋत सत्यें ऽधायि। सत्यमृतें ऽधायि।

ऋतं चं मे स्त्यश्चांभूताम्। ज्योतिंरभूव् स्वंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकस्य पृष्ठम्। ब्रध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षन्दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वरुंणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वरुंणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षन्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। द्यौस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

अपृश्लोषंधयश्च। ऊर्क्न सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितेह सींद। देवाना र सुम्नो महते रणांय। स्वास्थ्यस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यम्मं आत्मा। श्रृद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। सत्यमंस्मि। अहन्त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककृञ्जातवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्त्स्घस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥ विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। च्रत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्ता सप्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सर्वायः सप्तपंदा अभूम। स्ख्यन्तं गमेयम्॥८९॥

स्ख्यात्ते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते पृथिवी पादः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तिरिक्षं पादः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते द्यौः पादः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते द्यौः पादः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते दिशः पादः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इष्मूर्जन्धुक्ष्व। तेर्जं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानान्धेनु स्पुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबतु। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुमती स् रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजमानो न रिष्येत। देवस्यं सिवतः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः।

घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यैं। तस्यारं सुपूर्णाविध यो निविष्टौ। तयौर्देवानामधि भागधेयम्। अप जन्यंम्भयन्नुंद। अपं चुक्राणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्प्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु॥९२॥

यद्स्य पारे रजंसः। शुक्रञ्चोतिरजांयत। तन्नः पर्षदित द्विषः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वांभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषें। उद्ग्नं तिष्ठ प्रतितिष्ठ मारिषः। मेमं युज्ञं यर्जमानं च रीरिषः। सुवर्गे लोके यर्जमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः सुमज्ञौस्थाः। ततों नो अभेयं कृषि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मी्ढुषे॥९४॥
य इदमकः। तस्मै नमः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उवेतन्ध्रियसे।
आशांनान्त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं।
इन्द्रांग्री चेतनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं
च। हुतस्य चाहंतस्य च। अहंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री
अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथाँम्। मा यजंमान्न्तमो
विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबाँत्।
स॰सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

कृष् मी्डुषेऽहंतस्य च सुह चं॥
[८]

अनागसंस्त्वा व्यम्। इन्द्रेण् प्रेषिता उपं। वायुष्टें अस्त्वश्याभूः। मित्रस्ते अस्त्वश्याभूः। वर्रणस्ते अस्त्वश्याभूः। अपांक्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानाङ्क्षभः प्रयुतों नपातारः। व्युनेन्द्रई ह्वयत। घोषेणामींवाश श्चातयत॥९६॥ युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्मात्स्धस्थात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्च्सम्म

आसुंषवुः। सम्रे रक्षाः स्यवधिषुः। अपहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रे त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ञरा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा तुनूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽसि शृतं कृंतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यम्मित्रमाहुर्यम्ं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय् त्यदिन्द्रियम्महृत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भातु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवंनानि विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥ प्र ते महे विद्ये शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्र ते वन्वे। वनुषों हर्यतम्मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिश्चारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरंः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिम्माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्मनुष्येषु कुरु॥१०१॥ इन्द्रंश्च सम्माङ्वरंणश्च राजां। तौ ते भृक्षं चंऋतुरग्रं एतम्। तयोरन् भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमस्य तृप्यतु। प्रजापतिर्विश्वकंर्मा। तस्य मनो देवं यज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जहितः। अवसानंपतेऽवसानंम्मे विन्द। नमो

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोंपायित् तः हुंवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बिलिना चरामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिन्। तृतीयें लोके

रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयंने विद्रवंणे॥१०२॥

सर्वांन्यथो अंनुणा आक्षीयेम। इदमूनु श्रेयोऽवसान्मा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम्द्धनंवदर्श्वंवदूर्जस्वत्।

अनृणाः स्योम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सुवीरां वीरैरनु सश्चरेम। अर्कः पवित्र रजंसो विमानः। पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुंहाते अमृतं प्रपीने। प्वित्रंमकों रजंसो विमानः। पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। सुवर्ज्योतिर्यशों महत्। अशीमहिं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

चात्यत् श्रीणीता् सत्यमाहुरंशीमहि गुणे कुंरु विद्रवंणे पितृयाणां अर्को रजंसो विमानुस्नीणिं

उदंस्ताम्प्सीत्सविता मित्रो अंर्यमा। सर्वानमित्रांनवधीद्युगेनं। बृहन्तम्मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तिरक्षे। बृह्ति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृह्ता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्ठया यूयन्दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रप्सो यस्तं उदर्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वम्भुवंनमाविवेशं। स नंः पाह्यरिष्ठ्ये स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियश्छन्दार्श्स निविदो यजूर्श्ष। अस्यै पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तनिमनुं वर्तस्व। अनुवीरैरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वैरनु सर्वैरु पुष्टेः। अनुं प्रजया-ऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नों युज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिक्षित्रे प्रतितिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतितिष्ठामि गोषुं। प्रति प्रजायां प्रतितिष्ठामि भव्यै। विश्वंमन्याऽभि वावृधे। तद्न्यस्यामधिश्रितम्। दिवे चं विश्वकंर्मणे। पृथिव्यै चांकर्न्नमंः। अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कांनृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो युज्ञः प्र जंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमिह। ये देवा येषांमिदम्भांग्धेयंम्बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वरुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥ अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप् स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप् स्निधंः। शम्भिर्ग्निभिस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरपाः॥१०९॥

अप स्रिधंः। तदित्पदं न विचिंकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं

जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथ्वृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मवे। अपश्चाद्दघ्वने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रो-ऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मध्मतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि॥११०॥

उदर्ष इंन्द्रियेण गा मृतिरंर्पा अंगात्रीणिं च॥————[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं यज्ञाना ई हविषामाज्यंस्य। अतिरिक्तङ्कर्मणो यर्च हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितमृत्याश्रांवितम्। वर्षद्भतमृत्यनूँक्तं च यज्ञे। अतिरिक्तङ्कर्मणो यर्च हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुतिरेतु देवान्॥१११॥ यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतन्देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा । अभिदुंच्छुनायते। अन्यत्रास्मन्मरुतस्तन्निधेतन। ततम्म आपस्तदुं तायते पुनंः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथांय शस्यते। अय संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समुंतृण्णुतर्भुवः। उद्वयन्तमंस्स्परिं। उदुत्यश्चित्रम्॥११२॥

इमम्में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजांपते। इमञ्जीवेभ्यः परिधिन्दंधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शृतञ्जीवन्तु श्ररदः पुरूचीः। तिरो मृत्युन्दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषुडिनिष्टेभ्यः स्वाहाँ। भेषजन्दुरिष्टे स्वाहा निष्कृत्ये स्वाहाँ। दौराँध्ये स्वाहा दैवीँभ्यस्तनूभ्यः स्वाहाँ॥११३॥

ऋखौ स्वाहा समृंखौ स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृधि। मधंवञ्छ्गि तव तन्नं ऊतयैं। वि द्विषो वि मृधों जिहे। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनांज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतां ऋतुविद्विंजानन्। यजिंष्ठो देवा १ ऋतुशो यंजाति॥११५॥

देवा १ श्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुर्रुषसम्मितोऽग्ने तर्दस्य कल्पय पश्चं च॥————[११]

यद्वेवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्रत। ऋतस्यर्तेन मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचा-ऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानि चकुम। करोतु मामनेनसम्॥११६॥ ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्व संरस्वति। ऋतान्मां म् अता १ हंसः। यदन्यकृतमारिम। सजातुश् १ सादुत वां जामिशरसात्। ज्यायंसः शरसांदुत वा कनीयसः। अनौज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमधीवद्भांम्॥११७॥

शिश्वैर्यदनृतश्चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्तौभ्याश्वकर किल्बिंषाणि। अक्षाणां वग्नुमुंपजिघ्नंमानः। दूरेपृश्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानिं। अदीव्यन्नृणं यदहश्चकारं। यद्वादौस्यन्त्सञ्जगारा जनेभ्यः।

अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयिं माता गर्भे सति॥११८॥

एनश्चकार् यत्पिता। अग्निर्मा तस्मादेनसः। यदां पिपेषं मातरं

पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्सितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भवामि। यदन्तिरक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहिस्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूतंनं यत्पुंराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। अतिं क्रामामि दुरितं यदेनंः। जहांमि रिप्रं पंरमे स्थस्थैं। यत्र यन्तिं सुकृतो नापि दुष्कृतंः। तमा रोहामि सुकृतान्नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनंः। त्रित एतन्मंनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानुशे। अग्निर्मा तस्मादेनंसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्र मृंश्रत्। दुरिता यानि चकुम। करोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अप्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अग्निजा आपंः। ता नंः शुन्धन्तु शुन्धनीः। यदापो नक्तंन्दुरितश्चरांम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमम्मे वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवन्द्यारं स्ति पंराशसांऽऽन्शेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यहेवा देवां ऋतेनं सजातशुर्साद्यद्वाचा यद्धस्तांभ्यामदींव्यं यन्मयिं माता यदां पिपेष यदन्तरिक्षं यदाशसाऽतिं क्रामामि त्रिते देवा दिवि जाता अप्सु जाता यदापं इमम्में वरुण तत्त्वां यामि त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे त्वमंग्रे अयासिं।)॥———[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गानि स्वधिता परूर्षे। तत्सन्धृत्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमत्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यायतान्तत्ते। निष्ट्यायतान्देव सोम। यत्ते त्वचंम्बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मना॥१२२॥

त्वया तत्सीम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्यौन्यो भवति वर्णो अस्य। तिस्मन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज सदिसे विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीदिरं आवृणानः। अनांगास्तनुवो वावृधानः। आ नो रूपं वंहतु जार्यमानः॥१२३॥

उपं क्षरिन्त जुह्वां घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्त्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सङ् श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त् आस्थित् शमु तत्ते अस्तु। जानीतान्नेः सङ्गमेने पथीनाम्। पृतञ्जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमस्य॥१२४॥

यिद्देविक्षे मनस्मा यर्च वाचा। यद्वाँ प्राणेश्वक्षंषा यर्च श्रोत्रेण। यद्रेतसा मिथुनेनाप्यात्मनाँ। अन्द्र्यो लोका देधिरे तेर्ज इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिये तेर्ज इन्द्रियम्। यद्द्या साम्रा यर्जुषा। पश्नाश्चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दोभिरोषंधीभिर्वन्स्पतौँ। अ्द्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपो विमोक्रीमीय तेजं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षुत्रम्। येनैन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वरुणो येन् राजां। विश्वं देवा ऋषंयो येनं प्राणाः। अन्द्र्यो लोका दिधरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपो विमोक्रीमीय तेजं इन्द्रियम्। अपा पृष्पंमस्योषंधीनाः रसंः। सोमस्य प्रियन्धामं॥१२७॥ अग्नेः प्रियत्म हिवः स्वाहां। अपा पृष्पंमस्योषंधीनाः रसंः। सोमस्य प्रियन्धामं। इन्द्रंस्य प्रियत्म हिवः स्वाहां। अपा पृष्पंमस्योषंधीनाः उपा पृष्पंमस्योषंधीनाः रसंः। सोमस्य प्रियन्धामं। विश्वंषां देवानां पृष्पंमस्योषंधीनाः रसंः। सोमस्य प्रियन्धामं। विश्वंषां देवानां प्रियत्म हिवः स्वाहां। वयः सोम व्रते तवं। मनस्तन्षु

पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह॥१२८॥
देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः
पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह
मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः
सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युरमृतंत्र आगन्। वैवस्वतो

नो अभयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता र्याः। सर्चतात्रः शचीपतिः। परंम्मृत्यो अनु परंहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा र्रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयता र्रियः। सर्चतात्रः शचीपतिः॥१३०॥

शर्चोपतिः॥१३०॥
वनस्पतांव्यो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियन्थामांशीमहीवाभिनः शीयतार रियरेकं च॥=[१४]
सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेऽनागस्
उदंस्ताम्प्सीद्वह्मं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राळणा यद्दिदीक्षे चतुर्दश॥१४॥
सर्वान्भृतिमेव यामेवाप्स्वाहुंतिं व्रतानां पर्णवृत्कः सोम्यानांमस्मिन्यज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः
प्रोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यस्त्रिष्ट्शदंत्तरशतम्॥१३०॥

सर्वाञ्छचीपतिः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

कर्म धत्ते पश्चं च॥🕳

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्जनता सङ्ग्रह्णानीतिं। द्वादंशारत्नी रशना भेवति। द्वादेश मासौः संवत्सरः। संवत्सरमेवावे रुन्धे। मौञ्जी भंवति। ऊर्ग्वे मुञ्जौं। ऊर्जमेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षंत्रम्भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥ यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनमध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिमभि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्षे केशश्मश्रु वंपते। नखानि नि कृन्तते। दतो धांवते। स्नातिं। अहंतं वासः परिंधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यैं। रात्रिं जागरयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रे॥२॥

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापत्यः समृद्धे। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवान्नोऽन्नं जायंते। तदवं रुन्धे। तासुं ब्रह्मौदनं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥ चतुंः शरावो भवति। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठति। उभयतोरुक्मौ भंवतः। उभयतं एवास्मित्रुचं दधाति। उद्धरित शृतुत्वायं। सर्पिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्र्ञन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। चत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती श्प्यवं रुन्धे॥४॥ यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नशनान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंदनः। रेत आज्यम्। यदाज्यें रशनान्युनत्तिं। प्रजापंतिमेव रेतंसा समंध्यति। दर्भमयीं रशना भंवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदर्थः। पवित्रं वै दर्भाः॥५॥ यद्र्भमयी रशुना भवंति। पुनात्येवैनम्। पूतमेनम्मध्यमा लंभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य महिमोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविशत्। तन्महर्त्विजाम्महर्त्विकम्। यन्महर्त्विजः प्राश्ञन्ति। महिमानंमेवास्मिन्तद्वेधित। अर्थस्य वा आलेब्धस्य रेत उदेक्रामत्। तत्सुवर्ण्र् हिरंण्यमभवत्। यत्सुवर्णे हिरंण्यन्ददांति। रेतं एव तद्वंधाति। ओदने दंदाति। रेतो वा ओदनः। रेतो हिरंण्यम्।

रेतंसैवास्मिन्नेतों दधाति॥६॥

व्याति रुन्ये दर्भा अभव्ययद चं॥————[२] यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंत्येऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बृध्नाति। आ देवताभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रंतिप्रोच्यं। न देवताभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वम्मेध्यंम्भन्त्स्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यास्मिति। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वम्मेध्यंम्बध्नाति॥७॥

न देवताँभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रम्तव इति रश्नामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौं हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहु यत्यैं। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्केण ऋियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्येत्यिधं वदित यजुंष्कृत्यै। यज्ञस्य समृंद्धौ॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रश्ना केर्त्व्या ३ त्रयोदशार्त्नी ३ रितिं। ऋष्मो वा एष ऋतूनाम्। यत्संवत्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासो विष्टपम्। ऋष्म एष यज्ञानाम। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्भस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोद्शमंर्तिः रंशनायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्ं सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु कव्येत्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामैन्त्स्रमारपन्तीत्यांह। सृत्यं वा ऋतम्। सत्येनैवनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवनम्सीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। यन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवेनं करोति। धर्तासीत्यांह। धर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वान्रमित्यांह। अग्नावेवेनं वश्वान्रे जुंहोति। सप्रथस्मित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पृशुभिः प्रथयित। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं पृवास्यैषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमनो धर्तासि धरुण इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्यै त्वा क्षेमांय त्वा रय्यै त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आशिषमेवेतामाशांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैन ई स्वृगा कंरोति। स्वाहाँ त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। यस्यां एव देवताया आलुभ्यतें। तयैवैनु इ समर्धयति॥१२॥

बुधाति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांह् सप्रथस्मित्यांह देवेश्य इत्यांह् पश्चं चा——[३] यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयिति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नयिति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वर्रुण् इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः पुरः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव व पाप्मा आतृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य आतृंव्यः हन्ति। सेधुकम्मुसंलम्भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्मे साधयति। पौर्श्वलेयो हंन्ति। पुर्श्वल्वां वै देवाः शुचन्न्यंदधः। शुचैवास्य शुचर्र हन्ति। पाप्मा वा एतमींप्सतीत्यांहः। योंऽश्वमेधेन यजंत इति। अश्वंस्याधस्पदमुपांस्यति। वृज्ञी वा अश्वंः प्राजापत्यः। वञ्जेणैव पाप्मानम्भ्रातृंव्यमवंक्रामित। दक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥ पाप्मानंमेवास्माच्छमंलुमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेत्सशाखोपसम्बंद्धा भवित। अप्सुयोनिर्वा अश्वः। अप्सुजो वेत्सः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युद्हिति। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाित। अहं च त्वं चं वृत्रहिन्नितिं ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाित। ब्रह्मक्षत्रे पुव सन्दंधाित। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमन्नित्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्य॥१५॥

चृत्वारं ऋत्विजः समुंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सृभ्यों दिग्भ्योंऽभि समीरयन्ति। शृतेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्यः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन् मेध्येनेष्ट्वा। अयश्राजां वृत्रं वंध्यादितिं। राज्यं वा अध्वर्यः। क्षत्रश्र राजपुत्रः।

राज्येनैवास्मिनक्षत्रन्दंधाति। शतेनां राजभिंरुग्रैः सह

ब्रह्मा॥१६॥

भ्वति प्रावयति मिमीते पश्चं च॥

दक्षिणत उदङ्खिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येंनेष्ट्वा। अयर राजाँप्रतिधृष्यों ऽस्त्विति। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। तिष्ठन्प्रोक्षंति॥१८॥

बलेंनेवास्मिन्बलं दधाति। श्तेनं सूतग्राम्णिभिः सह होतां। पृश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन् मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायें। बहुव्रीहियवायें बहुमाषितिलायें। बहुहिर्ण्यायें बहुह्स्तिकांये। बहुदासपूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्वितिं। भूमा वे होतां। भूमा सूंतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्वतेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तरतो देक्षिणा

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय र राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंदिधाति। श्रतरशंतम्भवन्ति। श्रतायुः पुरुषः श्रतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। चतुः श्रता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रति तिष्ठति॥१९॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यन्निक्तमनालब्धमुत्सृजन्ति। यत्स्तोक्यां अन्वाहं। सुर्वहुतंमेवेनं करोत्यस्केन्दाय। अस्केन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वांह। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमितमवं रुन्धीत। अपरिमिता

अन्वांह। अपंरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रो। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपंः। ता अवं रुन्थे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निवैश्वान्रः॥२१॥ अस्यामेवेनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीति। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवेनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमांयैवेनं जुहोति। स्वित्र स्वाहेत्यांह। सावित्र एवेनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवैनं जुहोति। अपाम्मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध्र एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहेत्यांह। वरुणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाँक्षरा विराट्। अर्न्न विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। प्र वा एषों-ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनंः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिंतिष्ठति। एता ५ हं वाव सौंऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्केन्दाय। अस्केन्न १ हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ अभिजित्यै वैश्वान्रः संवित्र एवैनं जुहोति वायवं एवैनं जुहोति च्यवते पट् चं॥——[६] प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादश्वः पशूनामन्त्रादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यान्त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी वै देवानामोजिंष्ठौ बिलेष्ठौ। ओर्ज एवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामोर्जिष्ठो बलिष्ठः। वायवे त्वेति पश्चात्। वायुर्वै देवानांमाशुः सारसारितंमः॥२५॥ जवमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशुः सारसारितंमः।

विश्वेंभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे वै देवा देवानां यश्स्वितंमाः। यशं पुवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यंशस्वितंमः। देवेभ्यस्त्वेत्यधस्तांत्। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपरिष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषिमन्तो हरस्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरों दधाति। तस्मादश्वंः पशूनान्त्विषिमान्हरुस्वितमः। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्यांह। एभ्य एवैनं लोकेभ्यः प्रोक्षंति। सते त्वाऽसंते त्वाऽन्धस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्याह। तस्मादश्वमेधयाजिन सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापत्योऽश्वंः। अथ कस्मादिनमन्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंताः। तं यद्विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इति प्रोक्षतिं। देवतां एवास्मिन्नन्वा यांतयति। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

सारसारितमोऽपंचिततमः प्राजापृत्योऽश्वः पश्चं च॥—————[७]

यथा वे ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनां लब्धमृत्सृजन्ति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सर्वहृतं मेवैनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कं त्रु हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्क्षाराय स्वाहें कृताय स्वाहेत्यां ह। एतानि वा अश्वचिर्तानिं। चरितेरेवैन समर्धयित॥२८॥ तदां हुः। अनां हुतयो वा अश्वचिर्तानिं। नेता हों त्व्यां इतिं। अथो खल्वां हुः। हो त्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानश्वमेध स्स्रस्थां पयित। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्मां द्वोत्व्यां इतिं। बहिर्धा वा एनमेतदायतं नाइधाति। भ्रातृं व्यमस्मे जनयित॥२९॥

यस्यांनायत्नें उन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्राः पुरस्तांत्स्वष्टकृतः। आहुवनीयें उश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। तदांहुः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य क्रृष्ट्यें। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥ यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभि्र्यज्ञंमानं व्यर्धयेत्। अवं सुवर्गाक्षोकात्पंद्येत। पापीयान्त्स्यादितिं। सकृदेव

होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारिश्शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारिश्शदक्षरा जगंती। जाग्तोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धै। एकमितिरक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुकः॥३१॥

अर्थ्यति जन्यति खल्बांहुर्जगंती श्रीणं च॥———[८] विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वे माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वीऽिस् हयोऽसीत्यांह। शास्त्येवेनंमेतत्। तस्मांच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्यो-ऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वोन्पशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूना श्रेष्ठमं गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठांमाप्रोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यर्वाऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियन्नांमधेयम्। प्रियेणैवैनंन्नामधेयंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥ आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनं गमयति। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व पृव द्विषन्तम्भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्यांय त्वा भविष्यते त्वेत्युत्सृंजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला पृतं देवभ्योऽश्वम्मेधांय प्रोक्षिंतङ्गोपायतेत्यांह। शृतं वै तल्प्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं पृवेनं पिरं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परौं परावतङ्गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रिन्तः स्वाहेह रमितिः स्वाहेतिं चतृषु पृत्सु जुंहोति॥३४॥

पृता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनंम्बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रं खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वम्मेध्यः रक्षंन्ति। तेषां य उद्दं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथ् य उद्दं न गच्छंन्ति॥३५॥ राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिच्यते। योऽबलों-ऽश्वमेधेन् यजेते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्ं। हुन्येतांस्य युज्ञः। चतुः श्वता रक्षन्ति। यज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयः। सेव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥

गुच्छुति भुवतः पुत्सु जुंहोति न गच्छंन्ति नवं च॥-----[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

सप्त जुंहोति। सप्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहमेव दीक्षामवं रुन्थे। त्रीणि वैश्वदेवानि जुहोति। चत्वार्यौद्धहणानिं। सप्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे॥३८॥ एकंवि शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंवि शतिं देवलोकाः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकवि शः। एष सुंवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्रस्यं विष्टपम्ं। तत्स्वारांज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्गह्णानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यं। एषां लोकानां क्रुस्यं। अप वा एतस्मांत्प्राणाः ऋांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे। पूर्णाहुतिमंत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥ कुन्धे प्राणान्दीक्षामवं रुन्ध उच्यते कामन्ति तिष्ठति॥———[१०]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानि जुहोति। यज्ञस्योद्यंत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहाऽधीतं मनंसे स्वाहाँ। स्वाहा मनंः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेति प्राजापतये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्यै स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पृवेनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये बृहृत्यै स्वाहा सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सरंस्वती। वाचेवेनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रंपथ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रस्थिषाय स्वाहेत्यांह। पृशवो

वै पूषा। प्रशुभिरेवैन्मुद्यंच्छते। त्वष्ट्रं स्वाह्य त्वष्ट्रं तुरीपांय स्वाह्य त्वष्ट्रं पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्ट्यं वै पंशूनां मिंथुनाना र्रं रूपकृत्। रूपमेव प्रशुषुं दधाति। अथों रूपैरेवैन्मुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाह्य विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाह्य विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। यज्ञो वे विष्णंः। यज्ञायैवैन्मुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तंब्ध्ये सयत्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपांय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥-----[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रातः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायित्रयाश्छन्दसोऽिध् निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौप्रोति। गायत्रीं छन्देः। सवित्रे प्रसिवत्र एकांदशकपालं मृध्यन्दिने। एकांदशाक्षरात्रिष्टुप्। त्रैष्टुंभं मार्ध्यं दिन् सवनम्। मार्ध्यं दिनादेवैन् सवनात्रिष्टुभृश्छन्दसोऽिध् निर्मिमीते॥४४॥

अथो मार्ध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँप्रोति। त्रिष्टुमं छन्दंः। स्वित्र आंसिवत्रे द्वादंशकपालमपराह्णे। द्वादंशाक्षरा जर्गती। जार्गतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवेनं जर्गत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनाँप्रोति। जर्गतीं छन्देः। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृंतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेति चतंस्र आहंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो व्रजो भवति। प्रजापतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्स्रमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो व्रजो भवंति। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥

त्रिष्टुभुश्छन्द्सोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च॥_____[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मात्पुरा ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं महिमानं दधाति। तस्मात्पुरा राजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्री धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मात्पुरा दोग्ध्री धेनुरंजायत। वोढांऽनुङ्वानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मौत्पुरा वोढांऽनुङ्वानंजायत।

आशुः सिप्तिरत्यांह। अश्वं एव ज्वं दंधाति। तस्मांत्पुरा-ऽऽशुरश्वोंऽजायत। पुरंन्धियोंषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्मात्स्री युंवतिः प्रिया भावुंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं य्ज्ञेन् यजंन्ते। स्भेयो युवेत्यांह। यो वै पूर्ववयसी। स स्भेयो युवां। तस्माद्युवा पुमांन्य्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते। निकामेनिकामे नः पर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिकामे हु वै तत्रं पर्जन्यो वर्षित। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते। फिलन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फिलन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते। योगक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते॥४९॥
अनुङ्गानित्यांह जायते वर्षित सुष्ठ चं॥————[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों युज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्नेश्वमेधमंधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव युज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंन्नहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंन्नहोमां जुहोतिं॥५०॥ देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्येन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्येन जुहोति। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुना जुहोति। मृहृत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुना जुहोति॥५१॥

मह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यष्ठाजाः। यष्ठाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवाना र्रं रूपम्। यत्क्रम्बौः। यत्क्रम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रीणाति। धानाभिर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्प्रीणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यत्सक्तंवः। यत्सक्तंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजापितिमेव तत्प्रीणाति। मुसूस्यैर्जुहोति। सर्वांसां वा

पृतद्देवतांना १ रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोतिं। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गृतण्डुलैर्जुहोति। प्रियाङ्गां ह वै नामैते। पृतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गृतण्डुलैर्जुहोतिं। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा वि्राट्। विराद्गत्स्त्रस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥५५॥

जुहोति मधुंना जुहोति पृथुंकैर्जुहोतिं क्रम्बैर्जुहोति सक्तुंभिर्जुहोतिं प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोतिं चत्वारिं च (अन्नहोमानाज्येनाग्नेर्मधुंना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैर्धानाभिः सक्तुंभिर्मसूस्यैः

प्रियङ्गुतण्डुलेर्द्शान्नांनि द्वादंश।)॥_____

[88]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षा ईस्यजिघा॰सन्। स एतान्य्रजापंतिर्नृक्त॰ होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा॰्स्यपाहन्। यन्नंक्त॰ होमां जुहोतिं। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा॰्स्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणेव यज्ञाद्रक्षा॰्स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जंहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपंहत्यै। आज्यंनान्ततो जुंहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं पुवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिंतिष्ठति। द्वाभ्या इस्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। अस्मि इश्वामुष्मि ईश्व। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वाययुर्वे पुरुंषः श्वावींर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

पृजापितं वा एष ईंप्सितीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इति। अथो आहुः। सर्वाणि भूतानीति। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापित्वा एकंः। तमेवाप्नोति। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापित्वा एकंः। तमेवाप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

एकवदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः शृतवींर्यः। आयुंरेव वीर्यमवंरुन्थे। सहस्रांय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुंरेवावं रुन्थे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्धे। अर्बुदाय स्वाहेत्याह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचमेवावं रुन्धे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्याह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्धे। समुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

समुद्रमेवाप्नोति। मध्याय स्वाहेत्याह। मध्यमेवाप्नोति। अन्ताय स्वाहेत्यांह। अन्तंमेवाप्नोति। परार्धाय स्वाहेत्यांह। प्रार्थमेवाप्नोति। उषसे स्वाहा व्युंध्ये स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावंरुन्धे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रतितिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुह्यात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युंध्ये स्वाहोदेष्यते स्वाहो द्यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिंताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

एकोत्तरं जुंहोति प्रयुतांय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाहुर्व्युष्टिः सप्त चं॥———[१६]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नामधेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहत्यंद्रावाञ्चंहोति। सर्वमेवैन्मस्कंत्रः सुवर्गं लोकं गंमयति। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामित। पृथिव्ये स्वाहा-उन्तिरक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामित। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामित। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामित॥६३॥

पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्येकिविश्शिनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्शः। एष सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रे। भुवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्मै कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्ये॥६४॥ अर्वाङ्यज्ञः सङ्कांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यास्यै। भूतं भव्यं भविष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यास्यै।

पर्याप्त्ये। आ में गृहा भंवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूँत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामति॥६५॥

द्रद्धः स्वाह् हर्नूभ्या् स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जहोति। अङ्गंअङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मन्स्तेनं मुश्रति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन् समंध्यति। ओषंधीभ्यः स्वाहा मूलैभ्यः स्वाहेत्योषिधहोमाञ्जहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलैभ्योऽन्याः। ता पुवोभयी्रवं रुन्थे॥६६॥ वनस्पतिभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जहोति। आरण्यस्यान्नाद्यस्

मेषस्त्वां पचतैरंवत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाद्धः स्वाहेत्यपा॰ होमाँ अहोति। अप्सु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवान्नोऽन्नं जायते। तदवं

रुन्धे॥६७॥

पूर्वदीक्षा जुंहोति पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामृत्यनंन्तरित्यै कामित रुन्धे जायंत एकं

च॥——[१७]

अम्भार्रस जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्रस। तस्य वसवो-ऽधिपतयः। अग्निर्ज्योतिः। यदम्भार्श्स जुहोतिं। इममेव लोकमवं रुन्धे। वसूना सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्धे। नभा रेसि जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभा रेसि॥६८॥ तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभार्श्स जुहोतिं। अन्तरिंक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणाः सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महा ५सि जुहोति। असौ वै लोको महा रेसि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥ यन्महा ५ सि जुहोति। अमुमेव लोकमवं रुन्धे। आदित्याना ५ सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्धे। नमो राज्ञे नमो वर्रणायेतिं यव्यानिं जुहोति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। मयोभूर्वातों अभि वांतूस्रा इतिं गव्यानिं जुहोति। पशूनामवंरुख्यै। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै॥७०॥

सिताय स्वाहाऽसिंताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं

लोकस्य प्रमुंक्त्यै। पृथिव्यै स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहांऽदन्तकाय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तितिं परिधीन् युनक्ति। इमे वै लोकाः परिधर्यः। इमानेवास्में लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रि॥७१॥

यः प्राण्तो य आंत्मदा इति महिमानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजंमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जायतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्च्सानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे। जिल्ले बीजिमिति जुहोत्यनंन्तरित्ये। अग्रये समनमत्पृथिव्ये समनमदिति सन्नतिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्ये। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेति भूताभव्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतितिष्ठति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्यावंरुद्धे। यदऋन्दः प्रथमं जायंमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनाँप्रोति। सर्वं जयित। योंऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥
य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ र रक्षा इंस्यजिघा रसन्। स
एतान्प्रजापंतिर्नक्त रहोमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स
यज्ञाद्रक्षा रस्यपंहन्। यन्नंक रहोमां जुहोतिं। युज्ञादेव
तैर्यजमानो रक्षा रस्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रो
स्वाहेत्यंन्त्तो जुंहोति। सुव्गंस्यं लोकस्य समंष्ट्रौ॥७४॥
व नभारिस सूर्यो ज्योतिः सन्तत्यै समंष्ट्रौ भूतं यजंते नवं च॥———[१८]

पुक्यूपो वैकाद्शिनी वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति। पुक्विद्शिन्यंश्वम्धस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपो भवन्ति। राज्ञंदाल एकंविरशत्यरिवरश्वम्धस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धे। नान्येषां पशूनां तेज्न्या अवद्यन्तिं। अवद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेंज्ञनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रक्षशाखायांम्न्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वेत्स्शाखायामश्वंस्य। अप्सुयोनिर्वा अर्थः। अप्सुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पश्तियुञ्जन्ति। आरोकेष्वांरण्यान्धांरयन्ति।

वा अर्थः॥७९॥

पृशूनां व्यावृंत्त्यै। आ ग्राम्यान्पृशूह्रँभंन्ते। प्रार्ण्यान्त्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥

अर्श्वस्य व्यावृत्त्यै त्रीणि च॥——[१९]

राञ्चंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवावभितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्थस्यावंरुद्धौ। भ्रूणहृत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्थेनोभ्यतः परिं गृह्णाति। षञ्जेल्वा भवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धौ। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धौ॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोम्पीथस्यावंरुद्धौ। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शित्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष स्वर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ठौ। शृतं पृशवो भवन्ति॥७८॥ शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अंश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्तस्यावंरुद्धौ। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। कस्मौत्सत्यात्। दक्षिणतौऽन्येषौ पशूनामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येति। वारुणो

एषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शुतुदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंं ऽग्नाविधं वैतसे कटे ऽश्वं चिनोति। अप्सुयोनिर्वा अर्थः। अप्सुजो वेंतुसः। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूपरं चिनोति। पश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥ प्राणापानावेवास्मिन्त्सम्यश्चौ दधाति। अश्वं तूपरं गोमृगमिति सर्वहुतं एताञ्ज्होति। एषां लोकानांमभिजिंत्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवैन् सर्तनुं करोति। सात्मा-ऽमुष्मिँ ह्योके भंवति। य एवं वेदं। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्धे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्याह। संवत्सरो वा इंलुवर्दः। परिवत्सरो बंलिवर्दः। संवत्सरादेव परिवत्सरादायुर्व रुन्धे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जुरसां विस्रसामुं लोकमेति॥८१॥ तेज्सोऽवंरुद्धै भवुन्त्यश्वों गोमृगमिंलुवर्दश्चत्वारिं च॥———————[२०]

एकविश्शौंऽग्निर्भविति। एकविश्शः स्तोमंः। एकविश्शित्र्यूपौः। यथा वा अश्वां वर्षभा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्ं। एवमेव तत्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेकविश्शाः। ते यत्संमृच्छेरन्ं। हुन्येतांस्य युज्ञः। द्वाद्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वाद्शः स्तोमः॥८२॥

एकांदश यूपाः। यद्वांदशों ऽग्निर्भवंति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश यूपा भवंन्ति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥ दुह पुवैनां तेनं। तदांहः। यद्वांदशौंऽग्निः स्याद्वादशः स्तोम एकादश यूपाः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादकत्। एकवि १ श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकवि १ शः स्तोर्मः। एकंवि शतिर्यूपाः। यथा प्रष्टिभियाति। तादगेव तत्॥८४॥ यो वा अश्वमेधे तिस्रः कुकुभो वेदे। कुकुद्ध राज्ञाँ भवति। एकवि शौं ऽग्निर्भवति। एकवि शः स्तोर्मः। एकंवि शतिर्यूपाः। एता वा अश्वमेधे तिस्रः ककुर्मः। य एवं वेदं। ककुद्ध राज्ञां भवति। यो वा अश्वंमधे त्रीणिं शीर्षाणि वेदं। शिरों ह राज्ञां भवति। एकवि १ शों ऽग्निर्भवति। एकवि शः स्तोमः। एकंवि शातिर्यूपाः। एतानि वा अंश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि। य पुवं वेदं। शिरों ह राज्ञां भवति॥८५॥

बाद्यः स्तोमः स एव तिष्छरी ह राज्ञां भवित पद चं॥———[२१] देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राज्ञांनन्। तमश्वः प्राज्ञांनात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्ये। न व मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो व सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्गातोद्गायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पथा प्रंतिपादयेत्। ताहक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञोऽञ्जंसा नयति। एवमेवेन्मश्वंः सुवर्गं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंम्नवा रंभन्ते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ये। हिं करोति। सामैवाकंः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्दीथः। उद्दीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋक्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यजंमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥ प्रुंषो वै युज्ञः। युज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वं पुश्तियुअन्ति। युज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्का। अश्वं तूप्रं गोमृगम्। तानंग्रिष्ठ

आर्लभते। सेनामुखमेव तत्सङ्श्यंति। तस्माँद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रींवं पुरस्ताँ छलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाभिं पुरस्तौत्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चम्। अत्रं वे पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वे रांज्न्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्यंनैवेनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राज्न्यौऽन्नादो भावुंकः। आ्रभ्रेयौ कृष्णग्रींवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्नन्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्वथौ स्वथ्योः। स्वथ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राज्ञन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथौं क्वचे एवेते अभितः पर्यूहते। तस्मौद्राज्नन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धान्ने पृषोद्रम्धस्तौत्। प्रतिष्ठामेवेतां कुंरुते। अथौं इयं वै धाता।

अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उत्सेधमेव तं कुरुते। तम्मांदुत्सेधम्भये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

कुरुते धत्ते कुरुते पर्श्व च॥----[२३]

साङ्ग्रहण्या चर्तुष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्ने किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिर्देवैभ्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीप्सित विभूरंश्वनामान्यम्भार्ंस्येकयूपो राज्ञंदालमेकविर्शो देवाः पुरुषस्त्रयोविरशितः॥२३॥

साङ्गह्ण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्ग्रहण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमांप्रोत्। तमाह्वाऽष्टांद्शिभिरवांरुन्थ यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञमेव तैराह्वा यजमानोऽवंरुन्थे। संवृत्स्रस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवृत्सरों ऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। संवृत्सरम्व तैराम्वा यजमानोऽवंरुन्थे। अग्निष्ठें उन्यान्पशूनुंपाकरोति। इतरेषु यूपेंष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंन्वालंभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्यैः सर्थस्थापर्यंत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रो। व्यथ्वांनः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तो स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघाः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरेण्येष्वाजायेरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांरण्याः। यदांरण्येः सर्इस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमान्मरेण्यं मृतर हरियुः। अरेण्यायतना ह्यांरण्याः पृशव इति। यत्पृशून्नालभेत। ऋतवंः स्यातामुत्सृजेत्स्यंतुस्रीणिं च॥=

अनंबरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुत्मृजेत्॥३॥ यज्ञवेश्मं कुंर्यात्। यत्पशूनालभंते। तेनैव पृशूनवंरुन्थे। यत्पर्यग्निकृतानुत्मृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेशसम्भवति। न यजंमानुमरंण्यम्मृतः हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थापयति। एते व पृशवः क्षेमो नाम। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वांनः क्रामन्ति। स्मन्तिकं ग्रामयोग्रीमान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघाः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स पुतानुभयान्पशूनंपश्यत्। ग्राम्याङ्श्चांरुण्याङ्श्चं। तानालंभत। तैर्वे स उभौ लोकाववारुन्ध। ग्राम्येरेव पशुभिरिमं

लोकमवांरुन्ध। आर्ण्यैर्मुम्। यद्ग्राम्यान्पृशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुन्तैः। अनेवरुद्धो वा एतस्यं संवत्स्र इत्यांहुः। य इतइतश्चातुर्मास्यानि संवत्स्रं प्रयुङ्क इति। एतावान् वै संवत्स्रः। यचांतुर्मास्यानि। यदेते चांतुर्मास्याः पृशवं

आलभ्यन्तै। प्रत्यक्षेमेव तैः संवत्सरं यर्जमानोऽवंरुन्धे। वि वा एष प्रजयां पशुभिर्ऋध्यते। यः संवत्सरं प्रयुङ्के। संवत्सरः सुंवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गन्तु लोकन्नापंराध्नोति। प्रजा वै पशवं एकादशिनीं। यदेत ऐकादशिनाः पशर्व आलभ्यन्तैं। साक्षादेव प्रजां पशून् यजंमानोऽवंरुन्धे। प्रजापंतिर्विराजंमसृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविंशत्। तान्द्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तामाप्रोत्। तामास्वा दशिभिरवांरुन्ध। यद्दशिनं आलभ्यन्ते॥७॥ विराजंमेव तैराह्वा यजंमानोऽवंरुन्धे। एकांदश दशत आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रैष्टुंभाः पशवंः। पश्नेवावंरुन्धे। वैश्वदेवो वा अर्श्वः। नानादेवत्याः

तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बृहुरूपा भेवन्ति। तस्माँद्वहुरूपाः

पशवः समृंद्धै॥८॥

आर्ण्याँ श्लोको दिशनं आलुभ्यन्ते नानां रूपाः पृशवो द्वे चं॥————[२] अस्मै वै लोकार्य ग्राम्याः पृशव आर्लभ्यन्ते। अमुष्मां आरण्याः। यद्ग्राम्यान्पशूनालभंते। इममेव

पशवों भवन्ति। अश्वंस्य सर्वत्वायं। नानांरूपा भवन्ति।

तैर्लोकमवंरुन्थे। यदांरण्यान्। अमुन्तैः। उभयांन्पृशूनार्लभते। गाम्या ॥ श्वांरण्या ॥ अभयों लोकयो रवंरु छै। उभयांन्पृशूनार्लभ ग्राम्या ॥ श्वांरण्या ॥ अभयंस्यान्ना द्यस्यावं रु छै। उभयांन्पृशूनात् ग्राम्या ॥ श्वांरण्या ॥ अभयंषां पशूनामवं रु छै। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृषां लोकानामात्र्यं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मात्सत्यात्॥ १०॥

अस्मिँ होते बहवः कामा इति। यत्समानीभ्यो देवताभ्योऽन्यै-ऽन्ये पृशवं आलभ्यन्ते। अस्मिन्नेव तल्लोके कामान्दधाति। तस्मादिस्मिँ होके बहवः कामाः। त्रयाणान्नेयाणाः सह वपा जुंहोति। त्र्यांवृतो व देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एषां लोकानां कृस्यै। पर्यग्निकृतानारण्यानुत्सृंजन्त्यहि रेसाये॥११॥

अवंरुद्धा उभयांन्यशूनालंभते स्त्यादिहर्रसाये॥——[३]
युअन्ति ब्रुध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रुध्नः।
आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषिमत्यांह। अग्निर्वा अरुषः।
अग्निमेवास्मै युनक्ति। चर्रन्तमित्यांह। वायुर्वे चर्र्नः।
वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

इमे वै लोकाः परितस्थुषंः। इमानेवास्मैं लोकान् युंनिक्त। रोचंन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोंचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्में रोचयति। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामानेवास्में युनक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मै युनक्ति॥१३॥ शोणां धृष्णू नृवाहसेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्मैं युनक्ति। एता एवास्मैं देवतां युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रो। केतुं कृण्वन्नंकेतव इतिं ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवेन् राज्ञां इमयति। जीमूर्तस्येव भवति प्रतीकमित्याह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थानः सवितः पूर्व्यास् इत्येध्वर्युर्यजेमानं वाचयत्यभिजिंत्यै॥१४॥ परा वा एतस्यं यज्ञ एंति। यस्यं पशुरुपार्कृतोऽन्यत्र वेद्या एतिं। एत इस्तों तरेतेनं पथा पुनरश्वमावं र्तयासि न इत्याह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं परस्तां द्वधात्यावृत्त्ये। यथा वै हविषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपाकृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमान्येवास्य तत्सम्भंरन्ति॥१५॥ भूर्भुवः सुवरितिं प्राजापत्याभिरावंयन्ति। प्राजापत्यो

वा अर्थः। स्वयैवेनं देवतंया समंध्यन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावाता। सुव्रिति परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै। हिर्ण्ययाः काचा भंवन्ति। ज्योतिर्वे हिर्ण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीची दधाति। सहस्रंम्भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवंरुन्थे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रेष्टुंभेन् छन्द्रसेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्ं। इन्द्रियन्निष्ठुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवंरुन्धे। आदित्यास्त्वां-ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्रसेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्ं। प्रावो जगंती। तेजंसैवास्में प्रावनंरुन्धे। पत्नयोऽभ्यंअन्ति। श्रिया वा एतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी (३) ञ्छाची (३) न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवात्रादीं कुंवते। एतद्देवा अत्रंमत्तैतदत्त्रंमिद्धि प्रजापत् इत्यांह। प्रजायांमेवात्राद्यंन्दधते। यदि नावृजिष्ठेत्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रान् वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृंथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुंमत्रयते। एषां लोकानांम्भिजित्यै। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूप्त्यायं॥१९॥

परित्स्थुष इत्यंहिम प्रवास्मै प्रनक्त्यभिजित्ये भरन्यश्वमेथो रुन्ये रूपि व्रविद्यते। त्रो प्रथमेथेन यजिते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मा वं वदतः। तेजंसा चैवेनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्थयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणतआयतनो वे ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वे ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्मादक्षिणोऽधौ ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्तआंयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरो-ऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। यजमानदेवत्यों समर्धयतः। किङ् स्विदासीत्पूर्विचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्विचित्तिः॥२१॥ दिवेमेव वृष्टिमवंरुन्थे। किङ् स्विदासीद्बृहद्वय इत्यांह। अश्वो वे बृहद्वयः। अश्वमेवावंरुन्थे। किङ् स्विदासीत्पशङ्गिलेत्यांह। रात्रिवै पिंशङ्गिला। रात्रिमेवावंरुन्थे। किङ् स्विदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। श्रीर्वे पिंशङ्गिला। रात्रिमेवावंरुन्थे। किङ् स्विदासीत्पिलिप्पिले श्रीर्वे पिंलिप्पिला। अन्नाद्यमेवावंरुन्थे॥२२॥

वै यूपंः। यजमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्च्सेनं च्

कः स्विदेकाकी चंरतीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावंरुन्थे। क उंस्विज्ञायते पुनिरत्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनः। आयुंरेवावंरुन्थे। किं स्विद्धिमस्यं भेषजिमत्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावंरुन्थे। किं स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥ अयं वै लोक आवपंनम्महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। पृच्छामिं त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्यांह। वेदिर्वे परो-ऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावंरुन्थे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्यांह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावंरुन्थे।

पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्यांह। सोमो वै

वृष्णो अश्वंस्य रेतंः। सोमुपीथमेवावंरुन्धे। पृच्छामि

वाचः पंरमं व्योमेत्याह। ब्रह्म वै वाचः पंरमं व्योम। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे॥ २४॥

होतां भवित वै वृष्टिः पूर्विचित्तिरुन्नाद्यंमेवावंरुन्धे महदित्यांहु सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्चत्वारिं

अप वा एतस्मौत्प्राणाः ऋामन्ति। यौंऽश्वमेधेन यजीते। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञप्यमान आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्प्राणा अपंक्रामन्ति। अवंन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियन्त्वां प्रियाणांम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनान्त्वां निधिपति ई हवामहे वसो

मुमेत्यांह। अपैवास्मै तद्भूवते॥२५॥ अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येंवास्मैं ह्रवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनंन्ध्रवते। अप वा एतेभ्यंः प्राणाः ऋामन्ति॥२६॥

ये यज्ञे ध्रवंनन्तन्वतें। नवकृत्वः परियन्ति। नव वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवात्मन्दंधते। नैभ्यंः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति पत्नीमुदानयति। अह्वतैवैनाम्। सुभंगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं एवैनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोर्ण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवैनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृश्नात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यत्सूचीभिरसिप्थान्कत्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। गायत्री त्रिष्टुङ्गगृतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्ता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमंयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्ताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्तरिद्धाः रंज्ताः। कुर्ध्वा हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्तरिद्धाः रंज्ताः। कुर्ध्वा हरिण्यः। दिशं पुवास्में कल्पयिति। कस्त्वां छ्यति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि स्माये॥२९॥ हुवते क्रामन्त्यूण्वांथामित्यांह जग्तीत्यांह कल्पयत्येकं च॥———[६]

अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रं ऋांमित। यौंऽश्वमेधेन यजते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीवै राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्मै राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयति। वेणुभारङ्गिराविवेत्यांह। राष्ट्रं

वै भारः। राष्ट्रमेवास्मै पर्यूहति। अथास्या मध्यंमेधतामित्यांह।

श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

हंरिणी। राष्ट्रं यवंः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं देधाति। न पुष्टं पृशु मंन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशूत्र पृष्यंति॥३१॥ शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वैशीपुत्रन्नाभिष

श्रियंमेवावंरुन्धे। शीते वातें पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं

शीतो वार्तः। क्षेमंमेवावंरुन्धे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विश्वे

शूष्रा यदयजारा न पापाय यनायतात्याहा तस्माद्धरापुत्रश्नामा इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विश्वै शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विशं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहंतङ्गभे पस् सर्पतीत्यांह। तस्माँद्राष्ट्राय विशंः सर्पन्ति। आहंतङ्गभे पस् इत्यांह। विश्वे गभंः॥३२॥ राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्।

माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वे माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीवें वृक्षस्याग्रम्। श्रियमेवावं रुन्धे॥३३॥
पर्मलामीति ते पिता गर्भे मिष्टमेत्र स्यदित्यांह। विडे गर्भः।

प्रसुंलामीतिं ते पिता गुभे मुष्टिमंत श्सयदित्यांह। विश्वै गर्भः। राष्ट्रम्मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माद्राष्ट्रं विश्वं घातुंकम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञेऽपूतं वदन्ति। द्धिकाव्णों अकारिष्मितिं सुरिम्मतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवात्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामिन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवात्मानं पवयन्ते॥३४॥

गृह्रस्य मध्यं पृष्यंति गर्भे रुन्धे वधते च्त्वारि चा———[७]
प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः
सम्भवितुन्नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवदित्सः। यो मेतः पुनः
सम्भरदितिं। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त
और्ध्रवन्। योंऽश्वमेधेन यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोतिं।
पुरुष्मालंभते॥३५॥
वैराजो वै पुरुषः। विराजंमेवालंभते। अथो अन्नं वै

विराट्। अन्नमेवार्वरुगे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापतिमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियंमेवार्वरुगे। गामार्लभते॥३६॥ यज्ञो वै गौः। यज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः।

युज्ञी वे गोः। युज्ञम्वालभते। अर्थो अन्न वे गोः। अन्नम्वावंरुन्थे। अजावी आलंभते भूम्ने। अर्थो पृष्टिवे भूमा। पृष्टिमेवावंरुन्थे। पर्यम्निकृतं पुरुषश्चारण्या इश्चोत्सृजन्त्यहि ईसार् तैंऽस्योभयं यज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिहुंता भवन्ति। नैनंन्द्रङ्ख्यः पृशवो यज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिहुंता हि एसन्ति। योंऽश्वमेधेन यजेते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

लुभूते गामालंभते प्रमौंऽष्टो चं॥

पृथमेन वा पृष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेन कृतेनायांनामुत्तरेहन्।

एकवि एकवि एकवि शात्प्रीतिष्ठायां प्रतिं तिष्ठति। एकवि शात्प्रीतिष्ठायां

उभौ वा एतौ पशू आर्लभ्येते। यश्चांवमो यश्चं परमः।

ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्करयः पृष्ठम्भवन्त्यन्यदेन्यच्छन्दंः। अन्यैंऽन्ये वा एते पृशव आलंभ्यन्ते॥३८॥
उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयित। अथो अहं एवैष बिलर्हियते। तदाहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्चारण्याश्चं। एते वै सर्वे पशवंः। यद्गव्या इतिं।

तेनैवोभयाँन्पशूनवंरुन्धे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभि

ग्व्यान्पशूनुंत्तमेऽहं नालंभते॥३९॥

ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवंः संवत्सरः।

सौरीर्नवं श्वेता वृशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तृत एव ब्रह्मवर्च्समवंरुन्धे। सोमाय स्वराज्ञेंऽनोवाहावंनुङ्घाहावितिं द्वन्द्विनः पृश्चनालंभते। अहोरात्राणांमभिजित्ये। पृश्चभिवां एष व्यृध्यते। योंऽश्वमेधेन यजते। छुगुलङ्कल्माषंङ्किकिदीविं विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पृश्चना लंभते। पृश्चभिरेवात्मान् समर्धयति। ऋतुभिर्वा एष व्यृध्यते। योंऽश्वमेधेन यजते। पिशङ्गास्त्रयो वासन्ता इत्यृतुपृश्चनालंभते। ऋतुभिरेवात्मान् समर्धयति। आ वा एष पृश्चभ्यो वृश्च्यते। योंऽश्वमेधेन यजते। पर्यग्निकृता उत्सृजन्त्यनां व्रस्काय॥४०॥

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामितिं। स प्तावंश्वमेधे महिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीतः। ततो व स महानंत्रादो- ऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामितिं। स प्तावंश्वमेधे महिमानां गृह्णीतः। महानंत्रादः स्यामितिं। स प्तावंश्वमेधे महिमानां गृह्णीतः। महानेवात्रादो भवति। यज्मानदेवत्यां व वपा। राजां महिमा। यद्धपाम्महिम्रोभ्यतः परियजंति। यजमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तांत्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टात्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा पृतेऽश्वं पृव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्धपाम्महिम्रोभ्यतः परियजंति।

तानेवोभयाँन्प्रीणाति॥४१॥

पृश्यजंति पद्गा—[१०]
वैश्वदेवो वा अश्वंः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या
देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः
समदेन्दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्राभ्याम्मण्डूकां जम्भ्येभिरिति।
आज्यंमवदानं कृत्वा प्रतिसङ्ख्यायमाहुंतीर्जुहोति। या एव
देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः
समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्चंहोत्यनंन्तिरत्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासशः संवत्सर औप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तैंऽब्रुवन्नग्नयः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यत्स्विष्टकुद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याभिभूत्यै। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृगुकुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पुशवो वै गोमृगः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशून्नर्त्दंधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशून्भिमंन्यते॥४४॥ अश्वशुफेनं द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्।

रुद्रौँऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृश्नन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृश्ननिभमंन्यते। अयस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयांम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यों वे प्रजाः। रुद्रौँऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो

यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतैं। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥ द्र्यात्यभंवन्मत्यते प्रजा अन्तर्द्याति हे चं ॥———[११] अश्वंस्य वा आलेब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयंमभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवैनमालंभते। आज्येंन

यदश्वस्तामाय जुहाति। समधम्बन्मालभते। आज्यन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिर्श्शतं जुहोति। षद्गिर्श्शदक्षरा बृह्ती॥४६॥ बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रौ। पृशूनेव मात्रया

बार्हताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्धयति। तायद्भूयंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रया व्यर्धयेत्। षद्भिर्श्शतं जुहोति। षद्भिर्श्शदक्षरा

बृहत्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥_____

बृह्ती। बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्थयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वै पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ (३) न्द्विपदाँ (३) इति। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा

अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठायपति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। प्र प्रतिष्ठायां श्चवत। द्विपदां अन्ततो जुंहोति प्रतिष्ठित्ये॥४८॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्।

तिमिष्टिभिरन्वैच्छत्। तिमिष्टिभिरन्विवन्दत्। तिदिष्टीनािमिष्टित्वम् यत्संवत्सरिमिष्टिभिर्यजेते। अश्वमेव तदिन्विच्छति। सावित्रियो भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते।

अस्यां वाव तं विनदन्ति। न वा इमाङ्कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्येतुमर्हतीतिं। यत्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृप्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतङ्गन्तोः। यत्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यै॥५०॥ यत्प्रातरिष्टिंभिर्यजेते। अश्वमेव तदन्विच्छति। यत्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यैं। तस्मात्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। तस्मादिवां नष्टेष एंति। यत्प्रातरिष्टिंभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवैनमन्विंच्छति। अथों अहोरात्राभ्यामेवास्मै योगक्षेमं केल्पयति॥५१॥ [8 3] भुवन्ति धृत्यां एनमन्विंच्छुत्येकं च॥

अप वा पृतस्माच्छ्री राष्ट्रङ्कांमित। यौंऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणो वीणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा पृतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणांऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राह्मणो गायंताम्॥५२॥ प्रश्नश्रंकास्माच्छ्रीः स्यांत्। न वै ब्राह्मणे श्री रंमत् इतिं। ब्राह्मणोंऽन्यो गायेंत्। राजन्योंऽन्यः। ब्रह्म वै ब्राह्मणः। क्षत्रश्र राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिंगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायंताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रङ्कांमेत्॥५३॥

न वै ब्रांह्मणे राष्ट्र रमत इति। यदा खलु वै राजां कामयते। अर्थ ब्राह्मणञ्जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गायेत्। नक्तर्थ राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभयतों राष्ट्रं परिंगृहीतम्भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इति ब्राह्मणो गायैत्। इष्टापूर्तं वे ब्राह्मणस्यं॥५४॥ इष्टापूर्तेनैवेन ससमर्धयति। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्युमु संङ्गाममंहन्निति राजुन्यः। युद्धं वै राजुन्यंस्य। युद्धेनैवैन र स समर्धियति। अक्लंप्ता वा एतस्यर्तव इत्यांहुः। यों ऽश्वमेधेन यर्जंत इतिं। तिस्रों उन्यो गायंति तिस्रों उन्यः। षद्भम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेवास्में कल्पयतः। ताभ्यार् सङ्स्थायाम्। अनोयुक्ते च शते च ददाति। श्तायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति॥५५॥

गायेताङ्गामेद्वाह्मणस्यं कल्पयतश्चत्वारिं च॥————[१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोंकादेव मृत्युमवयजते। नैनं लोकेलोंके मृत्युर्विन्दति। यदमुष्मै स्वाहाऽमुष्मै स्वाहेति जुह्वंत्सश्रक्षीत। बहुं मृत्युममित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवैकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिलोंक्लोके मृत्युः॥५६॥

अश्नया मृत्युरेव। तमेवामृष्मिं ह्लोकेऽवंयजते। भ्रूणहृत्याये स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्याये स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाहुंत्या तर्पयित्वा परिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्रे भेषजं करोति। एता॰ हु वै मुण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्यायै प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण॰ हन्ति। सर्वसमै तस्मै भेषजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः।

अन्तत एव वर्रुणमवयजते। खलतेर्विक्लिधस्यं शुक्लस्यं पिङ्गाक्षस्य मूर्धं जुंहोति। एतद्वे वर्रणस्य रूपम्। रूपेणैव

वर्रणमवंयजते॥५८॥

वारुणो वा अर्थः। तं देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापत्यं करोतिं। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेत्यांह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमंः प्रजापंतय

इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावंरुन्धे। अधिपतिर्स्यधिपतिम्मा कुर्विधेपतिरहं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवैन ५ समानानां करोति। मान्धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषंमेवैतामाश उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलेब्याय स्वाहेति

नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां लोकानांमभिजिंत्यै॥६०॥ प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन यर्जते।

आग्नेयमैन्द्राग्नमाश्विनम्। तान्पशूलंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो

भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावंरुन्धे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावंरुन्धे। यदांश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धै।

त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंव लोकेषु प्रतितिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहविष्मिष्टिं निर्वंपति। दशांक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति

-सर्वत्वायं॥६२॥

देवतां। देवतांभिरेवैनंम्भिषज्यति। यत्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना १ राजां। याभ्यं एवैनं विन्दतिं॥६३॥ ताभिरेवैनंम्भिषज्यति। यत्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत एवैनंम्भिषज्यति। एताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो

एवैनंम्भिषज्यति। एताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णं चुरुं निर्वपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स एवैनंम्भिषज्यति। अश्लोणो हैव भंवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्वपेत्। यदिं मह्ती देवतांऽभिमन्येत। एतद्देवत्यों वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपेन्मृगाखरे यदि नागच्छैंत्। इयं वा अग्निवैश्वान्रः। इयमेवैनंमुर्विभ्यां परिरोधमानंयति। आहेव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोम्चेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अर्श्हसा वा एष गृहीतः। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। यद रहोम्चे निर्वपंति। अर्हंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। सौर्य रेतः। यत्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवैन् ससमर्धयति। यजंमानो वा अश्वः। गर्भैवा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवैन् ससमर्धयति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्वित्तः क्रियते। इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥ विन्दत्यश्लोणो हैव भंवत्यधीयाहंध्यते गर्भेरेवेन् स समर्धयति हे चं॥——[१७]
तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्त्सङ्स्थिते निर्वपत्। द्वाद्शिभिवेंष्टिभिय
यदिष्टिभियंजेत। उपनामुंक एनं युज्ञः स्यात्। पापीया क्स्तु

यादाष्टाम्यजता उपनामुक एन युज्ञः स्यात्। पापायाः स्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा रेसि। य ईजानः। तानि क एतावदाशु पुनः प्रयं जीतेति। सर्वा वै सङ्स्थिते युज्ञे वागांप्यते॥६८॥

साप्ता भवित यातयाँम्नी। कूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौद्नान्त्सङ्स्थिते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। युज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं युज्ञो भविति। न पापीयान्भवित। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाः संवत्सरः। संवत्सर एव प्रतितिष्ठति॥६९॥

आप्यते संवत्सर एकं च॥———[१८]

पुष वै विभूनीमं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रं विभु भविति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते। पुष वै प्रभूनीमं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रं प्रभु भविति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते। पुष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रोर्जस्वद्भवित। यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते। पुष वै पर्यस्वान्नामं युज्ञः॥७०॥

सर्व है वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै विधृंतो नामं युज्ञः। सर्व है है वै तत्र विधृंतम्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै व्यावृंत्तो नामं युज्ञः। सर्व है है वै तत्र व्यावृंत्तम्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्व है है वै तत्र प्रतिष्ठितम्भवति॥ ७१॥

यत्रैतनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै तेंज्ञस्वी नामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवित। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै ब्रंह्मवर्च्सी नामं युज्ञः। आ हु तत्रं ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वा अतिव्याधी नामं युज्ञः। आ हु वै तत्रं राज्जन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै दीर्घो नामं युज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं युज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते॥७२॥

पयंस्वान्नामं युज्ञः प्रतिष्ठितम्भवित् युज्ञैतनं युज्जेन् यर्जन्ते षद्वं (एष वै विभूः प्रभूरूर्जस्वान्पयंस्वान् विश्वंतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चस्यितिव्याधी दीर्घः क्रुप्तो द्वादंश॥॥——[१९] तार्प्यणाश्वर् संज्ञीपयन्ति। युज्ञो वै तार्प्यम्। युज्ञेनैवैन्र्स्य समर्थयन्ति। यामेन् साम्ना प्रस्तोताऽनूपतिष्ठते।

यम्लोकमेवेनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वे पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवंरुन्थे। हिर्ण्यकृशिपु भंवति। तेजुसोऽवंरुद्धे॥७३॥

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वों भवति। प्रजापंतेरात्यैं। अस्य वै लोकस्यं रूपन्तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकन्तार्प्यणांत्रोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर् हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुक्मेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनार सायुंज्यम्। सार्षितार् समानलोकतांमाप्नोति। योंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंकध्या आप्रोत्युष्टो चं॥————[२०]
आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस
आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्च ई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्।
तेंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्व ६
सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माँ द्यज्ञे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-

प्रतितिष्ठति॥७८॥

लुब्योऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुप्वपंति। योनिमन्तमेवैनमायतंनवन्तं करोति॥७७॥ योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानौम्। यदंर्काश्वमेधौ। प्राणापानावेवावंरुन्थे। ओजो बलं वा एतौ देवानौम्। यदंर्काश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावंरुन्थे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधैऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिश्चिनोतिं। तावंर्काश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावंरुन्थे। अर्थो अर्काश्वमेधयोरेव

यच्च्चयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यत्सद्यो वाजांन्त्सम-

जंयत्। तस्मौद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादंत्त।

तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अंश्वमेधस्य योनिरा-

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुम्भूतम्मधायालंभन्त। तमालभ्योपांवसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इति। एकं वा पृतद्देवानामहंः। यत्संवत्सरः। तस्मादश्वः पुरस्तांत्संवत्सरः आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वः।

यत्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥

तस्मादश्वमेधः। वेदुकोऽश्वमाशुम्भवति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः

पश्नामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानिं सम्भृत्यालंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। योंऽश्वमेधेन यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। प्रमूतम्मेधायालंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञम्यजन्त देवाः। काम्प्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृत्त्वमंकामयन्त। तेऽमृत्त्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन् यज्ञंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८ प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यज्ञते काम्प्रेणं। अप्नर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वे रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्भं तूपरं

बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेंभ्यः। सर्वस्यास्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाप्रोति। सर्वं जयति। योऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मिधोऽभंव्याजंत एत् वेदं॥

[२२]

यो वा अर्थस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अर्थस्यैव मेध्यंस्य

लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यत्सायं प्रांतर्जुहोति। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पुदे वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य पुदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्देपंदे जुह्नित। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवर्तते। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्नित॥८४॥ प्रेव अग्निहोत्रं जुहोति ग्रीणं व॥———[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युअन्ति तेजसाऽपंप्राणा अपृश्रीरूर्ध्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैंश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञऋतुभिरपृश्रीब्रांह्मणौ सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्तार्प्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितरं यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी त्रयोविश्शितः॥२३॥
प्रजापंतिरस्मिँ ह्योक उत्तर्तः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो
लोकेभ्यः सर्वर्ष ह वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चुत्वार्यशीतिः॥८४॥

प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥ प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवा स् संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवाः संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु। आपंमापामपः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमृतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिद्धंया। वाय्वश्वां रिम्पित्यः। मरींच्यात्मानो अद्गुहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥ अपार्श्यंष्णिम्पा रक्षंः। अपार्श्यंष्णिम्पारघम्ं। अपाँघ्रामपं चावर्तिम्। अपंदेवीरितो हिता वर्ज्ञं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशं॥३॥

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्य-मण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादेत्ते। सर्वस्माद्भवंनाद्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं काल-विशेषंणम्। नदीव प्रभेवात्काचित्। अक्षय्यातस्यन्दते यथा॥४॥

र्यथा॥४॥
तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रुः सतीं न निवंति। एवं
नानासंमुत्थानाः। कालाः संवत्सर् श्रिंताः। अणुशश्च
महश्वश्च। सर्वे समव्यत्रिंतम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः
संन्न निवर्तते। अधिसंवत्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥
अणुभिश्च महद्भिश्च। सुमारूढः प्रदृश्यंते। संवत्सरः
प्रत्यक्षेण। नाधिसत्वः प्रदृश्यंते। पुटरों विक्लिधः पिङ्गः।

पृतद्वंरुण्लक्षंणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। सहस्रं तत्र नीयंते। एक १ हि शिरो नाना मुखे। कृत्स्रं तंदतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जिल्पतं त्वेव दिह्यंते। शुक्ककृष्णे संवंत्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंज्तं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषिन्निह रातिरस्त्विति। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृश्ववंः। नाऽऽदित्यः संवत्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवत्सरस्य प्रियतंमः रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पत्स्यमांनो भवति। इदं पुण्यं कुंरुष्वेति। तमाहर्रणं द्यात्॥७॥

साकुआना र सप्तर्थमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषंयो देवजा इति। तेषांमिष्टानि विहितानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपुशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखायमब्रवीत्। जहांको अस्मदीषते। यस्तित्याजे सखिवदुर सखायम्। न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति। यदी रे शृणोत्यलक रे शृणोति॥८॥ न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनेनादाभिधावः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्गाः। शुक्लकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्त्रेर्ज्ररदेक्षः। वसन्तो वसुंभिः सह। संवृत्सरस्यं सिवृतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चं परिरक्षंतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपदृश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं कालपंर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तन्निबोधंत। शुक्कवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन् पृथिवी सर्वाम्॥१०॥ ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासा १सि। आदित्यानां निबोधंत। संवत्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्ददता सह। अदुःखो दुःखचं क्षुरिव। तद्मां ऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनांव्यथंयन्निव। रुरुदंक्ष इव दश्यंते। ह्लादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रं इयन्ते। संवत्सरात्ता भ्रं इयन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवत्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

[३]

अक्षिदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसन्ने कुनीनिक। आङ्के चार्द्गणं नास्ति। ऋभूणां तन्निबोधंत। कनकाभानिं वासा श्सि। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वों जीवनप्रदः। पुता वाचः प्रयुज्यन्ते। शरद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥ अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो मरुद्गंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिमव। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैर्वस्तिवंर्णैरिव। विशिखासंः कपर्दिनः। अऋद्धस्य योत्स्यमानस्य। ऋद्धस्येव लोहिनी। हेमतश्चक्षुंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिव॥१३॥ दुर्भिक्षं देवंलोकेषु। मनूनांमुदकं गृहे। एता वाचः प्रवदन्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिरीः। ता अग्निः पर्वमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेर्ह्वः स्वतपसः।

जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वतपसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्म सुप्रथा आवृणे॥१४॥

अतिंताम्राणिं वासार्सा। अष्टिवंजिशतिष्ट्रं च। विश्वे देवा विप्रहर्गन्ता अग्निजिंह्वा असश्चंता नैव देवों न मृर्त्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्कंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुंरार्तिः। पृथिव्यामपंरा श्रिता॥१५॥ तस्येन्द्रो विद्यंस्पेण। धनुर्ज्यांमिछिनत्स्वंयम्। तिदंन्द्रधनुं-रित्युज्यम्। अभवणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोर्बार्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्तिः। शिर् उत्पिंपेष। स

पृतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्बिः। शिर् उत्पंपेष। स प्रंवर्ग्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रंवर्ग्येणं युज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिंदधाति। नैनर्ं रुद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यते। नैव रूपं ने वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यते। अन्योन्यं तु ने हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषिं न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्नते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्रोति। य एवं वेद। स खलु संवत्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानंभिवहति। स द्रप्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥ अवंद्रप्सो अर्शुमतींमतिष्ठत्। इ्यानः कृष्णो द्शिनः स्हस्रैः। आवर्तिमन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उप्स्रुहि तं नृमणामथंद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंव्यर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवत्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मै द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वर्गाङ्कोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर सनिर्वचनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्रङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कलं चित्रभान्। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेंमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाज्योतिर्लभुन्ते। तान्त्सोमः कश्यपादिधिनिर्द्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त

साकम्॥२०॥

शीर्षंण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्त्सप्त सूर्यानिति। पञ्चकर्णो वात्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥ आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरुं गुन्तुम्। अपश्यमहमेत्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्ठितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्ठिंतपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तान्-वेतिं पृथिभिदंक्षिणावान्ं। ते अस्मे सर्वे घृतमांतप्नित। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता तेभिः सोमाभी रक्षंण इति। तदंप्याम्नायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्त्सहस्रूष्ट् सूर्याः॥२४॥ अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

क्वेदमभ्रं निविशते। क्वायर् संवत्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा ऋतवः श्रिताः। अर्द्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्तुंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविश्वन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अप्सु निविश्वन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥ अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युत्सूर्ये समाहिताः॥ अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्।

येनेमे विंधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंत्सस्य वेदेना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दश्स्ये॥२७॥ विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों

म्यूखैं। किं तद्विष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजती रोद्सी उंभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराद्दीप्तिरुच्यते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकुमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चेतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमांश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः परं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततो मध्यममायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽस्तो गृहान्॥३०॥

क्षयपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निर्प्नन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तर्दे-शेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्वैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथा-ऽपंण्यस्य कर्मणः। अपाण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥ आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तं वास्वैः। अपैतं मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रृंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्येषा भवंति। आयस्मिन्त्सप्त वांस्वाः। रोहंन्ति पूर्व्या रुहंः॥३२॥ ऋषिर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरित। कश्यपः पश्यंको भवति। यत्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुषस्य। तस्येषा भवंति। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मञ्जंहराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उत्तिं विधेमेति॥३३॥

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंयांपाश्च। पुङ्किरांधाश्च सप्तंमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिंता इति। यथर्त्ववाग्नेरिचिर्वणंविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकांर्चिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्त्रीक्स्य। प्रभ्राजमाना व्यंवदाताः॥३४॥ याश्च वास्ंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला

विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छमिति। न त्वकांम १ हृन्ति॥३५॥ य एवं वेद। अथ गंन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्गारिर्वम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशानुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्त्सूर्यवृचीः। कृतिरित्येकादश गंन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गरगिरः॥३६॥

नैनं गरों हिनस्ति। य एंवं वेद। गौरी मिंमाय सलिलानि

तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी

अंतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं

वैद्युतो हिनस्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराशर्यः।

बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमित्रिति। वाचो विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। वराहवंः स्वतपसः॥३७॥ विद्युन्महसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्वेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभिवां तैरुदीरिताः। अमूँ ल्लोकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति।

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं

समानमेतदुदंकम्॥ ३८॥

जिन्वन्त्यग्नय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुर्वत। जमदंग्निराप्यायते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरैः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छुं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

सहस्रवृदियं भूमिः। प्रं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्त्रीपुमम्। शुक्रं वांमन्यदांज्तं वांमन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वां पूषणाविह रातिरंस्तु। वासांत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौ। द्यावांभूमी चुरथः

स् सखांयौ। ताविश्वनां रासभाश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगतर् सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुर्नीभिरौत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिङ्गिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजंद्भिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गैः। समुद्रस्य धन्वंन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैः शतपंद्भिः षडंश्वैः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चैव। सवितारेप्सोऽभवत्। त्य सतृप्तं विदित्वैव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्त्सोमंतृप्सुषु। स सङ्गामस्तमौद्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवाऽत्येत्यन्ये। रक्षसानिन्वताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थां अश्विना। ते एते द्युः पृथिव्योः। अहंरहुर्गभं दधाथे॥४४॥

तयोर्तौ वृत्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोर्तौ वृत्सौ। अग्निश्चांदित्यश्चं। रात्रेर्वृत्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्लोऽग्निः॥४५॥ ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टो। दम्पंती एव भंवतः। तयोर्तो वृत्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टो। दम्पंती एव भंवतः। तयोर्तो वृत्सौ॥४६॥ उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिंपद्येते। सेय र रात्रीं गृभिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्ं। यद्रात्रौं रूश्मयंः। यथा गोर्ग्भिण्यां उल्बणम्ं। एवमेतस्यां उल्बणम्ं। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृत्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

प्वित्रंवन्तः परिवाज्मासंते। पितेषां प्रत्नो अभिरंक्षिति व्रतम्।
महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्।
प्वित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतंः।
अतंप्ततनूर्न तदामो अश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तत्समांशत।
ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सद्ये ततंक्षुः॥४८॥
ऋषंयः सप्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः

शङ्कंतोऽवसन्। अर्थं सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य।

अमी य ऋक्षा निहिंतास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वर्रुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तत्संवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तत्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठः सर्वधातंमम्। तुरं भगंस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम मै॥५०॥

नपुरसंकं पुमा्ङ्स्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्थ्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उमे पुर्स आहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्थः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिंकेत॥५१॥

यस्ता विजानात्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमनङ्गुलिरावयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्दध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसित॰ रुदितं गीतम्॥५२॥

स्रेव विद्धिं तत्। अतृष्युङ्स्तृष्यिध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतंनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोंऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुञ्जत्॥५३॥ सोऽजिंह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तत्सम्भवंस्य व्रतम्।

वीणांपणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानि

आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकाँश्वमेक्योजनम्। एकचर्न्नमेक्पुरम्। वातप्रांजिगतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥ नास्याक्षों यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेताँन् रोहिंताङ्श्वाग्नेः। रथे युक्ताऽधितिष्ठंति। एकया च दशभिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये

विश्रात्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिश्राता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

———————————————————[११] आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये

चन्द्रवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्त ४

सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निंबोधत। आम्न्द्रैरिन्द्र हरिंभिः। याहि म्यूरंरोमभिः। मा त्वा केचित्रियेमुरिंत्र पाशिनः। दुधन्वेव ता इंहि। मा म्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। यामि म्यूरंरोमभिः। मा मा केचित्रियेमुरिंत्र पाशिनः। निधन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हरित्वमापृत्रैः। इन्द्राऽऽयाहि सहस्रयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवृत्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचरास्त्व। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितः। अष्टौदिग्वासंसो-ऽग्नयः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्रूरथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्तः स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवृता चं। विश्वरूपेरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अप्सुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्श्स च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं कंरोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्सां चुक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरणमिस। ब्रह्मण उदीरणमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

[अपंकामत गर्भिण्यः] अष्टयोनीमुष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीमिमां महींम्। अहं वेद

न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयौन्यष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युरघाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिद्यौरदितिर्न्तरिक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैत्सप्तिभिः॥६२॥

प्रा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभिः पुत्रेरिदितिः। उपप्रैत्पूर्वं युगम्। प्रजाये मृत्यवे तंत्। प्रा मार्ताण्डमाभरदिति। ताननुक्रमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चार्यमा च। अश्शंश्च भगंश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भी हुस्सः श्रंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तदित्पदिमिति। गर्भः प्रांजापत्यः। अथु पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥

[यथास्थानं गंर्भिण्यः]

योऽसौ तपत्रुदेति। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ योंऽस्तमेति। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायाऽस्तमेति। मा में

प्रजायां मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरापूर्यति॥६४॥ मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरापूरिष्ठाः।

असौ योऽपृक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंक्षीयति। मा

में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोत्सृंपत॥६५॥

इमे मासाँश्चार्धमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत मोत्सृपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा मर्म प्राणैरपंप्रसृपत मोत्सृंपत। अय संवत्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपीत च॥६६॥ मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप मोर्त्सृप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपीति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृप। इय रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसपीति चोत्संपीति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप मोत्स्ंप। ॐ भूर्भुवः स्वः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुन र रीद्वम्॥६७॥

अथाऽऽिदत्यस्याष्टपुंरुष्स्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवत्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अंभूर्भवः स्वः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम्॥६८॥

शरोगस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भृवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो

मिथुंन १ रीढ्वम्॥६९॥

[£]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्रीक्स्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। घर्षाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि।

अवपतन्ताना १ रुद्राणा १ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युताना १ रुद्राणा १ स्थाने स्वते जंसा भानि। प्रभ्राजमानीना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। व्यवदातीना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। वासु किवेद्युतीना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। रजताना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। १ थामाना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वतेजंसा भानि। किपलाना रुद्राणीना रूपाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितीना रुद्राणीना रूपाने स्थाने स्वतेजंसा भानि। अर्धाना रुद्राणीना स्थाने स्थाने स्वतेजंसा भानि। अवपतन्तीना रुद्राणीना स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतीना रुद्राणीना स्थाने स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभूभुंवः स्थं। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुंन रि्षुम्॥७१॥

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुंन रोष्टुम्॥७२॥

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि।

-[२०]

दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं न्रकः। तस्मान्नः पीरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः पीरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः पीरिपाहि। आ यस्मिन्त्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतऋतंवित्येते॥७३॥

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पृश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपेरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पंश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तिरक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। एवा ह्यंव। एवा ह्यंग्ने। प्वा हि वांयो। एवा हींन्द्र। एवा हि पूषन्। एवा हि देवाः॥७४॥

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्रस्करिद्धंया। वाय्वश्वां रिष्म्पतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवन्सूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे स्ता महानाम्नीर्महामानाः। मह्सो महसः स्वंः॥७५॥ देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे स्ता अपाश्यंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्यंिष्णम्पारघम्। अपाष्ट्रांष्णम्पाचावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीताः श्रा भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥७६॥

भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा स् संस्तृन्भिः। व्यशंम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। कृतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्वतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे॥७७॥

योऽपां पुष्पं वेदे। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भविति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भविति। य एवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भविति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो उग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान्

भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥ आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै

तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्ये तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्ये तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षेत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥ योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। पर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पर्जन्यंस्यऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पर्जन्यंस्यऽऽयतंनम्। आयर्तनवान् भवति। य एवं वेदे। योऽपामायर्तनं वेदे॥८३॥ आयर्तनवान् भवति। संवत्सरो वा अपामायर्तनम्। आयर्तनवान् भवति। यः संवत्सरस्यऽऽयर्तनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवत्सरस्यऽऽयतंनम्। आयर्तनवान् भवति। य एवं वेदं। यों ऽप्सु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥ इमे वै लोका अप्सु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रसमुदंय रसन्। सूर्ये शुक्र रसमाभृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपा॰ रसंः। तेंऽमुष्मिंन्नादित्ये समाभृंताः। जानुदघ्नीमुंत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फदघ्रम्॥८५॥ पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्वि- हायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधार्य। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्प्सु ह्ययं चीयतें। असौ भुवंनेप्यनाहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे चातुर्मास्येषुं॥८६॥ अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। एतद्धं स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कम्ग्निं चिनुते। स्त्रियम्ग्निं चिन्वानः। संवत्सरं प्रत्यक्षंण। कम्ग्निं चिनुते। सावित्रम्गिं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षंण। कम्ग्निं चिनुते। सावित्रम्गिं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षंण। कम्ग्निं चिनुते। सावित्रम्गिं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षंण। कम्ग्निं चिनुते। रावित्रम्गिं चिन्वानः।

अमुमादित्य प्रत्यक्षेण। कम्भि चिन्ते॥८७॥ नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। प्राणान्प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम्भिं चिन्वानः॥८८॥ इमाँ ह्योकान्प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। इममारुणकेतुकम्भिं

उपानुवाक्यंमाशुम्भि चिंन्वानः॥८८॥ इमाँ ह्योकान्यत्यक्षंण। कम्भि चिंनुते। इममां रुणकेतुकम्भिं चिंन्वान इतिं। य एवासौ। इतश्चाऽमृतंश्चाऽव्यतीपाती। तमितिं। यों उग्नेर्मिथूया वेदं। मिथुन्वान्नंवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्नंवति। य एवं वेदं॥८९॥

उदंतिष्ठन्न्॥९१॥

समंभवत्। तस्यान्तर्मनंसि कामः समंवर्तत। इदश् सृंजेयमितिं। तस्माद्यत्पुरुंषो मनंसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदित। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्॥९०॥ सतो बन्धुमसंति निरंविन्दन्न। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनी्षेतिं। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा। शरींरमधूनुत। तस्य

आपो वा इदमांसन्त्सिलिलमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपर्णे

ये नर्खाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गाः समंभूत्॥९२॥

यन्मा १ समासीत्। ततो ५ रुणाः केतवो वार्तरशना ऋषंय

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहमिहासमितिं। तत्पुरुषस्य पुरुष्त्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्ं समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायापं:॥९३॥

अञ्जलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांऽरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यग्र इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततो वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथारुणः केतुरुत्तर्त उपादंधात्। पुवाहीन्द्रेति। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदीची दिक्। अथारुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। पुवा हि पूष्त्रिति। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इतिं। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धवाप्सरस्थ्रोदंतिष्ठत्र्। सोध्वा दिक्। या विप्रुषो विपरापतत्र्। ताभ्योऽसुरा रक्षा रसि पिशाचाश्चोदंतिष्ठत्र्। तस्मात्ते पराभवत्र्। विप्रुङ्गो हि ते समंभवत्र्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९६॥

आपों हु यद्वृंह्तीर्गर्भमायत्र्ं। दक्ष्मं दर्धाना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त सर्गाः। अद्भो वा इद॰ समंभूत्। तस्मांदिद सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मांदिद सर्व् प्रविष्टं शिथिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविंशत्। तदेवाऽभ्यनूक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानिं। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंम्भि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवरुद्धां। तदेवानुप्रविंशिता। य एवं वेदं॥९८॥

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपार रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिलुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता वे ब्रह्मवर्च्स्या आपः। मुख्त एव ब्रह्मवर्च्समवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रह्मवर्च्सितरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता देक्षिणत उपंदधाति। एता वै तेजस्विनीरापंः। तेजं एवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेजस्वितंरः। स्थावरा गृह्णाति। ताः पृश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थांव्राः। पृश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तरत उपंदधाति। ओजंसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धार्वन्तीः। ओर्ज एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्ध ओजस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥ असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवाज्योऽत्रं जायंते। तदवंरुन्धे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातंरशना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकंः॥१०२॥ तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अरुंणासश्च। ऋषयो वार्तरशनाः।

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अरुंणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्रुतधां हि। समाहिंतासो सहस्रधायंसमितिं। श्रुतशंश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्भिं चिनुते। य उंचैनमेवं वेद॥१०३॥

जानुद्विम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपार संर्वत्वाये।

पुष्करपूर्ण १ रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्य १ रुकाः। अमृतं पुरुषः। पृतावृद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेध्मवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्री। आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररर्ष्ढिया इति। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिसः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेति। पश्चितिय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानेवाग्निः। तं चिनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादः। अन्तिरिक्षं पादः। द्यौः पादः। दिशः पादः। प्रोरंजाः पादः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य पृतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित एता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषुं यज्ञकृतुष्वितिं। अर्थं ह स्माहारूणः स्वायम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा पुतेषां वीर्याणि। कमृग्निं चिनुते॥१०७॥

स्त्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। सावित्रम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। च्यातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। इममारुणकेतुकम्भिं चिंन्वान इतिं। वृषा वा अग्निः। वृषांणौ सङ्स्फांलयेत्। हुन्येतांस्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तर्वेद्याङ् ह्यंग्निश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा पृषौंऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावान् भवति। य एवं वेदे। पृशुकामश्चिन्वीत। स्ंज्ञान्ं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव स्ंज्ञानेऽग्निं चिनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदे॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिंः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति।

य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर श्रीक्षन्वीत। वज्रो वा आपं:॥१११॥

वर्जमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एंनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्ज्यसकामः स्वर्गकामश्चिन्वीत। एतावृद्धा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षिति न धांवेत्॥११२॥ अमतं वा आपः। अमतस्यानंन्तिरत्यै। नाप्स मत्रंपरीषं

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाप्सु मूत्रंपुरीषं कुर्यात्। न निष्ठींवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा एषोंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुंष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽिधतिष्ठेंत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्म्स्याश्नीयात्। नोद्कस्याघातुंकान्येनंमोद्कानि भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

इमानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वें च देवाः। यज्ञं चं नस्तुन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः सुह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्विवता तुनूनांम्। आप्नंवस्व प्रप्नंवस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुं:खनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥ मरीचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयत्र्। ते ते देहं कल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वप्ताः अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण

जान्नामण्डल्यं मारताः। राज्यः सामस्य तृतासः। सूयण स्युजीषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥ देवानां पूर्ययोध्या। तस्यार्थ हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मै ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभ्राजमाना्थ हरिणीम्। युशसां सम्प्रीवृताम्। पुर्थ हिरण्मयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधित। अश्वतांसः श्वंतास्श्र॥११७॥ यज्यानो रोऽप्रायक्तनं। स्वर्गन्ते नापंश्वते। हन्दंपिं चं

युज्वानो येऽप्ययुज्वनंः। स्वयंन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रमुग्निं चे ये विदुः। सिकंता इव संयन्ति। रृष्टिमिनेः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिर्क्तु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारींषु कृनीनींषु। जारिणींषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गारेषु च ये हुताः। उभयाँन् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। श्रतिमन्नु श्ररदंः॥११९॥ अदो यद्वह्मं विल्वम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायंसाम्। कामुप्रयवंणं मे अस्तु। स ह्यंवास्मिं सुनातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापों देवीरिहाऽऽहिंत॥१२०॥

विशींणीं गृध्रंशीणीं च। अपेतों निर्ऋति १ हंथः। परिबाध इ श्वेतकुक्षम्। निजङ्घ १ शब्लोदंरम्। स् तान् वाच्यायंया सह। अग्ने नाशंय स्न्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मृन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन कि १ शुकावंता। अग्ने नाशंय सुन्दर्शः॥ १ २ १॥

पुर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नों

युवसंमिच्छत्। इदं वर्चः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंर्न्तद्युंयोत। मृयोभूर्वातों विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सृपिप्पला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

पूर्नमामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुनर्भगः। पुनर्ब्राह्मणमैत् प्राप्ताः प्रार्विणागैतः प्राप्ताः सर्वादेशः प्रशिवीपरक्ताः।

पुनर्मामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भगः। पुन्र्र्बाह्मणमैतु
मा। पुन्र्रविणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय्
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजांयते पुनः। तेनं
माम्मृतं कुरु। तेनं सुप्रजसं कुरु॥१२३॥

अद्धस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोऽधेहि सप्त्रान्नः। ये अपोऽश्रन्तिं केच्न। त्वाष्ट्रीं मायां वैश्रवणः। रथर्रं सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चक्तरं सहंस्राश्वम्। आस्थायायांहि नो बिलिम्। यस्मै भूतानिं बिलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥
असाम सुमतौ यज्ञियंस्य। श्रियं विभ्रतोऽन्नंमुखीं

श्तद्वाट्टारंगम्नता। स्र्हार्यं नगरं तवं। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बिल्र्र्थं हरेत्। हिर्ण्यनाभयं वितुदयं कौबेरायायं बिलः॥१२५॥ सर्वभूताधिपतये नम इति। अथ बिल्र् हत्वोपितिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्वणः। ब्राह्मणां वय्र् स्मः। नमस्ते अस्तु मा मां हिरसीः। अस्मात्प्रविश्यान्नमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भृदः॥१२६॥

विराजम्। सुद्र्शने चं ऋौश्चे चं। मैनागे चं मुहागिरौ।

तिरोऽधा भुवं:॥१२६॥
तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥ अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रयुश्चीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थां सिद्धन्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थां सिद्धन्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थां

नं सिद्धन्ते। यस्तें विघातुंको भ्राता। ममान्तर्हृंदये

श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय् स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैंश्रवणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैंश्रवणो दंदातु। कुबेरायं वेश्रवणायं। महाराजाय नमंः। केतवो अर्फणासश्च। ऋष्यो वातंरशनाः। प्रतिष्ठा शत्यां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे॥१२९॥

संवत्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा मैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरिग्नं परिचरेत्। पुनर्मामैत्विन्द्रियमि-त्येतेनऽनुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरिद्धः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥ अंसश्चयवान्। अग्नये वायवं सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये।

चन्द्रमसे नक्षित्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंत्सराय। वरुणायारुणायेति

व्रंतहोमाः। प्रवर्ग्यवंदादेशः। अरुणाः काँण्डऋषयः।

अरण्यें ऽधीयो्रत्र्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वें जिप्त्वा॥१३१॥ महानाम्नीभिरुदक र संइस्पृश्यं। तमाचाँयों दृद्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालभते। सुमृडीकेंति भूमिम्। एवमंपवर्गे। धेनुर्दक्षिणा। करसं वासंश्च क्षौमम्। अन्यद्वा शुक्रम्। यथाशक्ति वा। एवइस्वाध्यायंधर्मेण। अरण्येंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥

भद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिंदिधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते करोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चासुराणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वय इस्वर्गं लोकमें ष्यामो वयमें ष्याम इति तेऽसुंराः सन्नह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्यंण तपंसैव देवास्तेऽसंरा अमुह्य इस्ते न प्राजान इस्ते पर्रा ऽभवन्ते न स्वर्ग लोकमायन् प्रसृतेन वै यज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन्न प्रसृंतेनासुरान् पराभावयन् प्रसृंतो ह वै यंज्ञोपवीतिनों यज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यजंत एव तत्तरमाँ चज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजये चजेत वा यज्ञस्य प्रसृंत्या अजिनं वासों वा दक्षिणत उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धरतेऽवं धत्ते सव्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत १ संवीतं मानुषम्॥१॥

रक्षा १ से ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान्

नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्तु ह वा तानि रक्षा ईस्यादित्यं योधयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा पुतानि रक्षा रंसि गायत्रिया-ऽभिमन्नितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदुं हु वा एते ब्रह्मवादिनः पूर्वाभिमुखाः सन्ध्यायां गायत्रियाऽभिमन्निता आपं ऊर्धं विक्षिंपन्ति ता एता आपों वज्रीभूत्वा तानि रक्षा रेसि मुन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानुम् अवधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तुं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान्त्सकलं भद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥ यद्वेवा देवहेळेनं देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्रतर्तस्यर्तेन मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मान इह मुंश्रत विश्वे देवाः सजोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन त्व र संरस्वति। कृतान्नः पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावरुणो सोमो धाता बृहस्पतिः।

ते नों मुश्चन्त्वेनंसो यदन्यकृतमारिम। सजातश एसादुत

प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत तानि वरमवृणीताऽऽदित्यो

जांमिश्र्साज्यायंसः शश्सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृतं यदेनस्तस्मात् त्वमस्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥ यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवन्द्या १ शिश्नेर्यदनृतं चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकृम यानि दुष्कृता। येन त्रितो अणवान्निर्बभूव येन सूर्यं तमंसो निर्मुमोचं। येनेन्द्रो विश्वा अजंहादरांतीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आँक्षि। यत्कुसींदमप्रतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्ते दधामि। यन्मयिं माता यदां पिपेष यदन्तरिक्षं यदाशसातिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

यददीं व्यत्रृणमृहं बुभूवादित्सन्वा सञ्जगर् जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रंश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तांभ्यां चकर् किल्बिषाण्यक्षाणां वृग्नुमुप्जिन्नंमानः। उग्नं पृश्या च राष्ट्रभृच तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानिं। उग्नं पश्ये राष्ट्रभृत्किल्बिषाण्य यद्क्षवृत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव

इत्संमानो यमस्यं लोके अधिरञ्जूरायं। अवं ते हेळ् उद्त्तमिम् मं वरुण तत्त्वां याम् त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसको विकुंसको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूराद्दूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मत्समृंच्छाते तमंस्मे प्रसुंवामिस। दुःशू॰्सानुशू॰्साभ्यां घणेनांनुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मत्समृंच्छाते तमंस्मे प्रसुंवामिस। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगंन्मिह् मनंसा स॰ शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

आयुंष्टे विश्वतों दधद्यम्भिर्वरेंण्यः। पुनंस्ते प्राण आयांति परायक्ष्मर्रं सुवामि ते। आयुर्वा अग्ने ह्विषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोंनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सर्शिंशाधि। मातेवांस्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयूर्ंषि पवस् आ सुवोर्ज्यमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनांम्। अग्ने पवंस्व स्वपां असमे वर्चः सुवीर्यम्। दर्धद्वयिं मिय पोषम्॥६॥ अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपत्नान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। असमे दींदिहि सुमना अहंळञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपत्रान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमनस्यमानो वय स्याम प्रणुंदा नः सपलान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा ५ सित। ता इस्त्वं वृत्रहं जिह वस्वस्मभ्यमार्भर। अग्ने यो नोंऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यंः। तं वय समिधं कृत्वा तुभ्यंमग्नेऽपिं दध्मसि॥७॥ यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निमुक्र सर्वं पाप समूहताम्। यो नंः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वा इस्तानंग्रे सन्देह या इश्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिप्सांच सर्वाङ्स्तान्मंष्मषा कुरु। सःशिंतं मे

वैश्वानरः पवंयात्रः पवित्रैर्यत्संङ्गरमभिधावाँम्याशाम्। अनोजानन्मनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तत्सुवामि। अमी ये सुभगें दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वं द्वकमोर्चनम्। विजिहीर्ष्व लोकान्कृधि बन्धान्मुंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वान् पथो अनुष्व। स प्रजानन्प्रतिंगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं जुरसंः पुरस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्ति येषां दत्तं पित्र्यमायंनवत्।

अबुन्ध्वेके ददंतः प्रयच्छादातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती संररेभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहि श्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्द्रिता यानिं चकुम। भूमिर्माताऽदितिनी जनित्रं भ्राताऽन्तरिक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विवित्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्त्रोणाङ्गेरह्नताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरं च पुत्रम्। यदन्नमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदांस्यनुत वां करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोतु। यदन्रमिद्री बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चे प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मोदनृणं कृणोतु। यन्मयां मनंसा वाचा कृत्मेनंः कदाचन। सर्वस्मांत्तस्मांन्मेळिंतो मोग्धि त्व है वेत्थं यथातथम्॥१०॥

वातंरशना ह वा ऋषंयः श्रमुणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभू बुस्तानृषंयो ऽर्थमाय इस्ते निलायं मचर इस्ते ऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ता इस्तेष्वन्वं विन्दञ्छ्द्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चरथेति त ऋषींनब्रुवन्नमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत येनारेपसं स्यामेति त पुतानि सूक्तान्यंपश्युन् यद्देवा देवहेळेनं यददीव्यन्नणमहं बभूवाऽऽयुंष्टे विश्वतों दध्दित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वानुराय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदेर्वाचीनमेनों भ्रूणहत्याया-स्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसों-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुंहुयात्पूतो देवलोकान्त्समंश्रुते॥११॥

कूश्माण्डैर्जुहुयाद्योऽपूंत इव मन्येत् यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिश्चति यदंर्वाचीनमेनौं भ्रूणहृत्यायास्तस्मान्मुच्यते यावदेनों दीक्षामुपैति दीक्षित एतैः संतृति जुंहोति संवत्सरं दीक्षितो भंवति संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्वि १ शति १ रात्रींदीक्षितो भंवति चतुंर्वि १ शतिरर्धमासाः संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीक्षितो भेवति द्वादेश मासाः संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड़ात्रींदीक्षितो भंवति षड्वा ऋतवंः संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीिक्षेतो भवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया एवाऽऽत्मानं पुनीते न मा र समंश्रीयात्र स्त्रियमुपेयात्रोपर्यासीत जुगुंप्सेतानृंतात्पयों ब्राह्मणस्यं व्रतं यंवाग् राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथीं सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तूं घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

अजान् हु वै पृश्नी इंस्तप्स्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भवंभ्यानंर्षृत्त ऋषंयोऽभवन्तद्दषीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकामास्त एतं ब्रह्मयज्ञमंपश्यन्तमाहंरन्तेनांयजन्त् यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पर्यआहुतयो देवानांमभवन् यद्यजू ईषि घृताहुंतयो यत्सामांनि सोमांहृतयो यदर्थवीङ्गिरसो मध्वांहृतयो यद्वाँह्मणानीतिह्मसान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराश्र्द्शमिंदाहुतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्म-पाँघ्रत्रपहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमांयन् ब्रह्मणः सायुंज्यमृषंयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते मंहायुज्ञाः संतृति प्रतायन्ते सतृति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यदुगौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयुज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बिलि १ हरंति तद्भंतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्ग्राँह्मणेभ्योऽत्रं ददांति तन्मंनुष्ययुज्ञः सन्तिष्ठते यत्स्वाध्यायमधीयीतैकांमप्यृचं यजुः सामं वा तद्बंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्त्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजू ५ेषि घृतस्यं कूल्या यत्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधोः कूल्या यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश १ सीर्मेदंसः कूल्यां अस्य पितृन्त्स्वधा अभिवंहन्ति यद्योऽधीते पर्यआहुतिभिरेव तद्देवा इस्तंपयिति यद्यजू ईषि घृताहुंतिभियंत्सामांनि सोमांहितिभियंदथंवां कि रसो मध्वां-हितिभियंद्वां ह्यणानीं तिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र्सीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तंपियति त एनं तृप्ता आयुषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥

٥Ì

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमाणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्दर्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उंपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्धिः पंरिमृज्यं सकृद्ंपस्पृश्य शिरश्रक्षुंषी नासिंके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजू रेषि यत्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामांनि यत्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षित् यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसों ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश रसीः प्रीणाति दर्भाणां महदुंपस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना र रसो यद्भाः सर्रसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यज्रुंस्त्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्पर्ममक्षरं तदेतद्द्याऽभ्यंक्तमृचो अक्षरे पर्मे व्योम्न् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा केरिष्यित य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत् इति त्रीनेव प्रायुंङ्क भूर्भुवः स्वेरित्यांहैतद्वै वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पृच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान स्विता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्रोत्यथौं प्रज्ञातंयेव प्रतिपदा छन्दा स्से प्रतिपद्यते॥१५॥

ग्रामे मनसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंन्नुत व्रजन्तुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य एवं विद्वान्त्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्रये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥१६॥

मध्यन्दिने प्रबलमधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्ग्रौह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपति तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वरुंणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष्णः सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिंणा॥१७॥

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधीनं विद्युदिग्नर्वर्षः हिवः स्तंनियृत्वंषद्भारो यदंवस्फूर्जिति सोऽनंवषद्भारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जित् पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपों हि स्वाध्याय इत्यंत्तमं नाकरं रोहत्युत्तमः संमानानां भवित् यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंत्स्वर्गं लोकं जंयित् तावंन्तं लोकं जंयित् भूयारं सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्यं जंयित् ब्रह्मंणः सायुंज्यं गच्छित॥१८॥

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचिर्यद्देशः

समृं दिवेवतानि य एवं विद्वान्महारात्र उपस्युदिते व्रज्ञ इस्तिष्ठन्नासीनः शयानो ऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां होका अयित सर्वां होका नेनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मि -स्तृतीये लोके अनृणाः स्याम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वांन्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपाँघ्रन्नाहुंतीनां यज्ञेनं यज्ञस्य दक्षिणाभिर्दक्षिणानां ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दसाः स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूँत्सृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्यंक्ता। यस्तित्याजं सिख्विवद् सर्खायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी १ शृणोत्यलक १ शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मात्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अवाङ्कत वां पुराणे वेदं विद्वा १ संम्भितो वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च हर्समिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माद्भाह्मणेभ्यों वेद्विद्यों दिवे दिंवे नर्मस्कुर्यान्नाश्चीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजयित्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वित्रः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वर स्पृणोत्यात्मा हि वरः॥२०॥ —————[१६] दहे ह वा एष छन्दा स्सि यो याजयंति स

दुहे हु वा एष छन्दा १सि यो याजयंति स येनं यज्ञकृतनां याजयेत्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानम्पसद आसंन १ सुत्या वाग्जुहूर्मनं उपभृद्धृतिर्धुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

कृतिधावंकीणीं प्रविशतिं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृह्स्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्याया ५ रात्र्यामुग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम् कामाय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कामांय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवाऽऽत्मन्धंते हुत्वा प्रयंताञ्ज्विः कर्वातिर्यङ्काग्निम्भियंत्रयेत सं मांऽऽसिश्चन्तु मरुतः समिन्द्रः सं बृहस्पतिः। सं माऽयमग्निः सिश्चत्वायुंषा च बलेन चाऽऽयुंष्मन्तं करोत मेति प्रतिं हास्मै मरुतः प्राणान्दंधति प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितरत्सर्व सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिरभिमंत्रयेत त्रिषंत्या हि देवा योऽपूत इव मन्येत स इत्थं जुंह्यादित्थम्भिमंत्रयेत पुनीत एवाऽऽत्मानमायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वर ई स्पृणोत्यात्मा हि वर्रः॥२२॥

——[१८] भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूभुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणा उहं तेर्जसा कश्यंपस्य यस्मै नमुस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तंरा हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदेय संवत्सरः प्रजनंनमश्विनौ पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावरुणावपरपादावग्निः पुच्छेस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततंः प्रजापंतिरभंयं चतुर्थः स वा एष दिव्यः शांकरः शिशुंमार्स्त १ ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जयित जयित स्वर्गं लोकं नाध्वनि प्रमीयते नाप्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नान्पत्यंः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षिंतमसि त्वं भूतानामधिपतिरसि त्वं भूताना ॥ श्रेष्ठों ऽसि त्वां भूतान्युपं पूर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिश्कुमाराय नमं:॥२३॥

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंरायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्त्रायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

[२०] ॐ नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते केरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषुजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ चित्तिः सुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं बर्हिः। केतों अग्निः। विज्ञांतमृग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो ह्विः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मासुं नृम्णन्धात्स्वाहां॥१॥

ज्जन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

पृथिवी होता दर्श। [२] अग्निर्होता। अश्विनाऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ता।

सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्य पुरोगाः। श्रातास्तं

-[३]

इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनुश्रुतः स्वाहां॥३॥

अ्ग्निर्होताऽष्टौ॥•

स्वाहाँ॥५॥

सूर्यं ते चक्षुं। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वाचंस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्नां। दिवि देवावृध् होत्रा मेर्यस्व स्वाहां॥४॥

महाहं विरहोतां। सृत्यहं विरध्वर्युः। अच्युं तपाजा अग्नीत्। अच्युं तपाजा अग्नीत्। अच्युं तपाजा उपवृक्ता। अना धृष्यश्चां प्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यां भिगरो। अयास्यं उद्गाता। वाचं स्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम् स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं मपात्। मा दैव्यस्तन्तु श्छे दि मा मंनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्यै

ब्राह्मण एकंहोता। स यज्ञः। स में ददातु प्रजां पशून्पुष्टिं यशंः। यज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूती। स में ददातु प्रजां पशून्पुष्टिं यशंः। भर्ता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रंतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां पशून्पुष्टिं यशंः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्। अन्तरिक्षं चतुंर्होता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां पशून्पुष्टिं यशंः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टुं यशः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्कंल्पयाति। स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टुं यर्शः। ऋतवश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्शं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशेः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौरष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां पशून्पुष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवंहोता। स तेंजस्वी। स में ददातु प्रजां पशून्पुष्टिं यशंः। तेजस्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इद॰ सर्वम्। स में ददातु प्रजां पशून्पृष्टिं यशंः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

प्रतिष्ठा प्राणर्श्व मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥——

अग्निर्यजुंभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः।

मित्रावरुणावाशिषां। अङ्गिरसो धिष्णियर्ग्निभिः। मुरुतः

सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषां।

अदितिर्वेद्यां। सोमो दीक्षयां॥११॥

त्वष्टेध्मेनं। विष्णुर्यज्ञेनं। वसंव आज्येन। आदित्या
दिक्षणाभिः। विश्वं देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पितः
पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तिरक्षं पिवत्रेण। वायुः

पात्रैः। अहङ् श्रृद्धयां॥१२॥

क्षिया पात्रैरेकं च॥———[८] सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेंः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्।

आदित्यानां जर्गती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥ वर्रुणस्य विराट्। यज्ञस्यं पङ्किः। प्रजापंतरनुंमतिः। मित्रस्यं

श्रुद्धा। स्वितुः प्रसूतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पूर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिद्धाः। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क सूनृतां च देवानां पत्नंयः॥१४॥

अनुष्टुन्दिशः पर्दं — [९] देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्ते। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिरंण्यम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामो दाता॥१५॥

कामः प्रतिग्रहीता। कामः समुद्रमाविंश। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्ते। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वासः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनेवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋत्या अश्वतरगर्द्भौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गृन्धुर्वाप्सराभ्यः स्रगलं कर्णे। विश्वेंभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओद्नम्। सुमुद्रायापः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीरुसायानंः। वैश्वानुराय रथम्। वैश्वानुरः प्रव्नथा नाकुमारुंहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमा विश। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्ते। एषा ते काम दक्षिणा। उत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुषमपंः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥------[१०]

सुवर्णं घर्मं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्यात्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णे। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। श्रतः शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतारो यत्रैकं भवंन्ति। समानसीन आत्मा जनानाम्॥२०॥

होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। समानंसीन आत्मा जनांनाम्॥२०॥ अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रैकं भवंन्ति। चतुर्होतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रंमृग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव कृप्तम्। वाचो वीर्यं तप्साऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। त्वष्टांर र रूपाणिं विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥ अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिंक्युः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गुहांसु। अमृतेन कृप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं कवयो निचेंक्युः। शतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः।

आत्मान ५ सवितारं बृह्स्पतिम्। चतुर्होतारं प्रदिशोऽनुं

विश्वमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्यात्मा निहितः पश्चहोता। अमृतंं देवानामार्युः प्रजानाम्॥२२॥

इन्द्र्रं राजांनर सिवतारंमेतम्। वायोग्तमानं कृवयो निर्चिक्युः। रिश्मिर् रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्यं पदे कृवयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याण्डकोशर शुष्ममाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्र्रं रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥ अमृतंस्य पूर्णान्तामुं कृलां विचंक्षते। पाद्र् षड्ढोतुर्न

किलांविवित्से। येनुर्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षुड्धा

मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढोतारमृतुभिः कर्ल्पमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनसा चरन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्यात्मान शत्या चरन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृंप्तः। परेण तन्तुं परिष्चियमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना ह हदेयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मैतद्वह्मण उज्जेभार। अर्क इ श्रोतंन्त हत्यं मध्यैं। आ यस्मिन्त्सप्त परेवः। मेहन्ति बहुला इश्रियम्। बहुश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अच्युंतां बहुला श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रिरेन्द्रांय पिन्वते। बृह्धामिन्द्रं गोमंतीम्। अच्युंतां बहुला श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत श्रिता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रिश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला श्रियम्। रिश्मिरिन्द्रः सिवता मे नियंच्छत्॥२६॥

घृतं तेजो मध्रमिदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दधातु। हरिः पत्ङ्गः पट्री सुपूर्णः। दिविक्षयो नभसा य एति। स न इन्द्रेः कामव्रं देदातु। पश्चारं चुक्रं परिवर्तते पृथु। हिरण्यज्योतिः सरिरस्य मध्यै। अजंस्रं ज्योतिर्नर्भसा सर्पदेति। स न इन्द्रंः कामवरं देदातु। सप्त युंअन्ति रथमेकंचक्रम्॥२७॥ एको अश्वो वहति सप्तनामा। त्रिनाभि चऋमुजर्मनेर्वम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रें। तपो दीक्षामृषंयः सुवर्विदंः। ततः क्षत्रं बलमोजंश्च जातम्। तदस्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रुश्मिं बोभुज्यमानम्। अपां नेतारं भुवंनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्युः परमे व्योमन्॥२८॥ रोहिंणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। श्तर सहस्राणि प्रयुतानि नाव्यानाम्। अयं यः श्वेतो रिशमः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां पुशून्धनानि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रश्मिः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पशून् विश्वरूपान्। पतङ्गमक्तमसुरस्य माययां॥२९॥ हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। सुमुद्रे अन्तः कुवयो विचंक्षते। मरीचीनां पदिमंच्छन्ति वेधसं। पृतङ्गो वाचं मनेसा बिभर्ति। तां गेन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पुशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ता १

अग्रे प्रमुंमोक्तु देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्समास् नियंच्छतम्। प्र प्रं युज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः प्रश्नवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषाः सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आर्ण्याः पृश्नवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। वायुस्ताः अग्रे प्रमुंमोक्त देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आर्ण्याः पृश्नवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषाः सप्तानामिह रन्तिरस्तु।

रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥ आत्मा जनानां विकुर्वन्तं विपश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराजं चरन्तं गोमतीं मे नियंच्छ्त्वेकंचकं

अगुल्मा जनाना विकुवन्त विपाश्च प्रजाना वसुधाना विराज् चरन्त गामता मृ ।नथच्छुत्वकचक्
व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टौ चं॥

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष एवेद १ सर्वम्। यद्भूतं यच्च भव्यम्। उतामृत्त्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। एतावांनस्य महिमा। अतो ज्याया १ श्रु पूरुषः॥३२॥

पादौँऽस्य विश्वां भूतानिं। त्रिपादंस्यामृतंं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः। पादौँऽस्येहाभंवात्पुनः। ततो विष्वुङ्क्षंक्रामत्। साशनान्शने अभि। तस्मौद्धिराङंजायत। विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्चाद्भृमिमथो पुरः॥३३॥ यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वस्नतो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः। सप्तास्यांसन्परि-धयः। त्रिः सप्त समिधंः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंधुन्पुरुषं पृशुम्। तं यृज्ञं बर्हिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञात्सं वृहृतंः। सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेके वायव्यान्। आर्ण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्यज्ञात्सं वृहृतंः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा इसि जज्ञिरे तस्माँ त्। यजुस्तस्मां दजायत॥ ३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोंभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेरे तस्मात्। तस्मांज्ञाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधुः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौंऽस्य मुखंमासीत्। बाहू रांजुन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यंः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रंश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णो द्यौः समंवर्तत। पुद्धां भूमिदिशः श्रोत्रात्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्स्तु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरेः। नामानि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्तें। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। श्रृ अः प्रविद्वान्प्रदिश्रश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानः सचन्ते। यत्र पूर्वं साध्याः सन्तिं देवाः॥३८॥ पूर्वं साध्याः सन्तिं देवाः॥३८॥

अद्भाः सम्भूतः पृथिव्ये रसाँच। विश्वकर्मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुषस्य विश्वमाजानमग्रे॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवेर्णं तमसः परस्तात्।

तमेवं विद्वान्मृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानित् योनिम्। मरीचीनां प्दिमिच्छिन्ति वेधसः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशें। हिश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्ं। इष्टं मेनिषाण। अमुं मेनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायते वर्शे स्म चं॥———[१३]
भूर्ता सन्भ्रियमांणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा
भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्ं। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव
मृत्युममृतं तमांहः। तं भूर्तारं तम् गोप्तारमाहः। स भृतो
भ्रियमांणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत
जहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥
उतो बहूनेकुमहंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्देद

यतं आबुभूवं। सन्धां च या संनद्धे ब्रह्मणैषः। रमते तस्मिन्नुत जीर्णे शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वोश्चरन्ति जानृतीः। वृत्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमुग्निः हंव्यवाह र सिमैन्त्से। त्वं भर्ता मांतरिश्वां प्रजानांम्॥४२॥ त्वं यज्ञस्त्वमुवेवासि सोमः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहुननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवो म एधि। नमों वामस्तु शृणुत १ हवंं मे। प्राणांपानावजिर १ सञ्चरंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जिहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जंहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मंणा संविदानौ। वधायं दत्तं तमहरू हंनामि। असंज्ञजान सत आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। पुरास्यं भारं पुन्रस्तमिति। तहै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानीङ्गसाथां नवं॥———[१४] हरि १ हर्रन्तमनुयन्ति देवाः। विश्वस्येशानं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमन्मेदमागात्। अयनं मा विवंधीर्विक्रमस्व। मा छिंदो मृत्यो मा वंधीः। मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम। सुद्यश्चेकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कार्मेनाजनयन्पुनः। कार्मेन मे काम आगौत्। हृदयाद्भृदयं मृत्योः। यद्मीषांमुदः प्रियम्। तदैतूपमामि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्ष्णमते शुण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजार रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनंसा वन्दंमानः। नार्धमानो वृषभं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेक्राण्मानुषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

मृत्यवे वीरा १ श्वत्वारि च॥ -[१५] त्रणिविंश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृंहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजस्वते॥४७॥

आ प्यायस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः

सप्रथंस्तमः॥४८॥

[*e* ξ]—

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषस्ं मर्त्यासः। अस्माभिंरू नु प्रंतिचक्ष्यांऽभूदो ते यंन्ति ये अंपरीषु पश्यान्॥४९॥

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृह्ज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महत्याये स्वाहा सर्वस्मै स्वाहां॥५१॥ चित्तर संन्तानेनं भवं युक्रा रुद्रन्तिनंमा पशुपति ई स्थूलहृद्येनाग्निर हृदंयेन रुद्रं लोहितेन शुवं मतस्नाभ्यां महादेवमुन्तः पाँर्श्वेनौषिष्ठहनर शिङ्गीनिकोश्याभ्याम्॥५२॥

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥ चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यें वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयुः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचमुद्यास शिवामदस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जर्गत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापृती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये स्तयं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुप्स्तरंणमृहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मध्रं जनिष्ये मध्रं वक्ष्यामि मध्रं विदष्यामि मध्रंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यें वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पत्ये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयुः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतो मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचमुद्यास शिवामदंस्तां जुर्हां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जर्गत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पश्नां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजायै पश्नां भूयासं प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायैं पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

युअते मनं उत युंअते धियंः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विप्रिश्चतंः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवतुः परिष्ठतिः। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादेव। अश्विरसि नारिरसि। अध्वर्कृद्देवभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥ देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा

सर्चां। प्रैतु ब्रह्मंण्स्पतिः। प्र देव्येतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधसम्। देवा यज्ञं नंयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमद्य। मखस्य शिरंः॥३॥ मखायं त्वा। मखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंमद्य। मखस्य शिरंः। मखायं त्वा। मखस्यं

त्वा शीर्ष्णे। देवींर्वमीर्स्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्यासमद्या मखस्य शिरंः॥४॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजोंऽसि। ऋद्यासंम्द्या म्खस्य शिरंः। म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा अंसि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंम्द्या म्खस्य शिरंः॥५॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला कंरोतु। मृखस्य शिरोंऽसि॥६॥ यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायुत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मखस्य

रास्नांऽसि। अदितिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मुखोंऽसि॥७॥

प्ते शिरं ऋतावरीर्ऋद्धासंम् म्खस्य शिरः शिरः शिरंऽसि नवं चा——[२] वृष्णो अश्वस्य निष्पदंसि। वर्रुणस्त्वा धृतव्रंत आधूपयतु। मित्रावर्रुणयोध्रुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। उयोतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं महिना दिवम्। मित्रो बंभूव सप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवों देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिव्तोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्यौ। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवे त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्मुमां-मुष्यायणं विशा पृशुभिर्ष्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणद्मि। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणद्मि। जागंतेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणद्मि। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वा क्विं। छृणत्तुं त्वा ह्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि

हुविः। देवं पुरश्चर सुग्घ्यासं त्वा॥१०॥

पृथ्वीं भंव वाख्यद्वी [३] ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण प्रचेरिष्यामः। होतंर्घ्मम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिंणौ पुरोडाशावधिंश्रय। प्रतिप्रस्थातुर्विहंर। प्रस्तोतः सामानि

पुराडाशावाधश्रय। प्रातप्रस्थातावहर। प्रस्तातः सामानि गाय। यजुर्युक्त्र सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैद्वैरनुमतं मुरुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियष्णुम्। स्तुभौ वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः।

ओमिन्द्रंवन्तुः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥———[४]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतंर्घमम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा म्खायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहाँ। दक्षांय स्वाहा क्रतंवे स्वाहाँ। ओजसे स्वाहा बलांय स्वाहाँ। देवस्त्वां सिवता मध्वांऽनक्तु॥१२॥ पृथिवीं तपंसस्त्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिरिस तपोऽसि। स॰सीदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति

यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वृपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिण्तः। इन्द्रस्याधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पश्चात्। देवस्यं सिवृतुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावरुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरुपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि ते तिष्ठन्ताम्जरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥

सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्ष्धि-रिस। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्॥१७॥

विषुरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्ञतं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्ञंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रेष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधुं॥१८॥

अनुक्कुसादीदुत्तुर्तः पाहि प्रतिमा असि यज्ञतन्ते अन्यज्ञागंतमस्येकं च॥———[५]

दश प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदींचीः। दशोध्वां भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धृह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्तौद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैर्देवेरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मंनुष्येषु। सम्राह्वर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चस्यसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगंसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥ मिय् रुक्। दशं पुरस्ताँद्रोचसे। दशं दक्षिणा। दशं प्रत्यङ्कः। दशोदङ्कं। दशोध्वीं भांसि सुमनस्यमानः। स नः सम्राडिषमूर्जं

धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो घर्मी रुंचीय॥२१॥

रोच्य धेहि नवं च॥——[६]
अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च प्थिभिश्चरंन्तम्।
स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवनेष्वन्तः।

अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूंचीभ्याम्। अनु वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवेनं सिवता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाह्य समग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवत्रा। सः सूर्यंणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोरन्तिरक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनंसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

<u>----</u>[り]

ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृधि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रस्त्वं देव घर्म देवान्पांहि। तपोजां वार्चमस्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानांम्। पिता मंतीनाम्। पतिः प्रजानांम्। मतिः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सवित्रा यंतिष्ट। स॰ सूर्येणारुक्त। आयुर्वास्त्वम्स्मभ्यं घर्म वर्चोदा असि। पिता नोंऽसि पिता नो बोध। आयुर्द्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥ २५॥

अन्तरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमहिं त्वा मा मां हि सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शतं पूर्नियंविष्ठ पाह्य १ हंसः। समेद्धार ५ शत १ हिमाः। तन्द्राविण र् हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टींमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विंदेय तर्व सन्दर्शि। माऽहर रायस्पोषंण वि योषम्॥२६॥ रोचते सूर्याय त्वा देवायुर्वं द्रविणोदा दर्धाना द्वे चं॥_____

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित् एहिं। सर्रस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदांपय। यस्ते स्तनः शश्यो यो मयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रधा वंसुविद्यः सुदत्रः। सरंस्वति तिमेह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिर्षेष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घर्मायं शिश्षा बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोंऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमसि। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुर्मं पात वसवो यजंता वट। स्वाहौ त्वा सूर्यंस्य रुश्मयें वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यंस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यौं त्वा परिंगृह्णामि॥३०॥ अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु १ शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हि १ सीः। अन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हि १ सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हि १ सीः। सुवंरसि सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥ पृहिं पहि पिन्वस्व गृह्णि नवं च॥———[८]

स्मुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सिक्तायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवेँ त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयेँ त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंथे त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहाँ। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहाँ। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घुर्मस्यं। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्रयें यज्ञियांय। शं यजुंिभः। अश्विना घुर्मं पांत शहादिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घूर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमर्साताम्। तं प्राव्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥ दिवि धां इमं यज्ञम। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ।

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ। पितृन्धंर्म्पान्गंच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृथिव्या अष्टौ चं॥———[९] इषे पीपिहि। ऊर्जे पीपिहि। ब्रह्मणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अन्द्यः पीपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वनस्पतिभ्यः पीपिहि।

द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यर्जमानाय पीपिहि। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्माणि धारय। क्षुत्राणि धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कुन्दयात्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ।

यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अह्रज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। रात्रिज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्रो रात्रिये मा पाहि। एषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्रों मा पाहि॥३९॥

पृषा ते अग्ने स्मित्। तया सिंध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिंरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत १ ह्विः। मधुं ह्विः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रुश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्यः॥४१॥

ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि स्कुन्दयाँद्रुद्रायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाऽह्रों मा पाह्यग्नौ सप्त चं॥——[१०]

घर्म् या तें दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राह्मणे। या हंविद्धिनें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरंक्षे शुक्। या त्रेष्टुंभे छन्दंसि। या राजन्यें। याऽऽग्नींग्ने। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यें। या सदंसि। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। अनुनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

वाहा पृष्यास्त्या पनगा। उद्याः वयमनुकामाम सुविताय नव्यसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षत्रस्यं तनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। वयमनुकामाम सुविताय नव्यसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायै। चक्षुंषस्तनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। वयमनुकामाम सुविताय नव्यसे। वत्नुरंसि श्रं युधायाः॥४४॥ शिशुर्जनंधायाः। शं च विक्षे परिं च विक्षे। चतुंः

शिशुर्जनेधायाः। शं च् विश्वायुः शर्म च् विश्वायः। अप द्वेषो स्रिक्तिनीभिर्ऋतस्यं। सदो विश्वायुः शर्म सप्रथाः। अप द्वेषो अपृह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्चम। घर्मेतत्तेऽन्नमेतत्पुरीषम्। तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वृधिषीमिहिं च व्यम्। आ चं प्यासिषीमहिं॥४५॥

रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्धर्वः। तस्यं ते पद्वद्वंविर्द्धानम्। अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। समृहमायुषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥ व्यंसौ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिंऋदृद्वृषा हरिं। महान्मित्रो न दंर्शतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंरण्युः। महान्त्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥ नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। विश्वावंसु॰ सोम गन्धर्वम्। आपों ददृशुषीः। तदृतेनाव्यायन्। तदन्ववैत्। इन्द्रों रारहाण आंसाम्। परि सूर्यंस्य परिधी रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणातु। दिव्यो गंन्धर्वो रजंसो विमानंः। यद्वां घा सत्यमुत

यन्न विद्या।४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नेमिवन्द् चरणे नदीनाम्। अपावृणोद्दुरो अश्मेन्नजानाम्। प्रासान्गन्धर्वो अमृतानि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानाद्हीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपागाः। इदम्हं मेनुष्यों मनुष्यान्। सोर्मपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेण। सुमित्रा न आप् ओर्षधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्में भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्य रं स्निम्। गायत्रं नवीया रसम्। अग्ने देवेषु प्रवीचः॥५०॥ याऽऽग्नींष्ठे तान्तं पृतेनावं यज्ञे स्वाहा धर्मणा शुं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेण निषंतो विद्य

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषंधीना रूपां। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्धं मनः सुवर्गम्॥५१॥

अस्कान्द्यौः पृंथिवीम्। अस्कानृष्भो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ

स्कन्नाञ्जायते वृषां। स्कन्नात् प्रजनिषीमहि॥५२॥

या पुरस्तांद्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या दंक्षिणतः। या पृश्चात्। योत्तंरुतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं पुतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

______[१४] प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्ये स्वाहाँ॥५४॥

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे नरिन्धंषाय स्वाहां। पूष्णेऽङ्गंणये स्वाहां पूष्णे नरुणांय स्वाहां। पूष्णे सांकेताय स्वाहां॥५५॥

उदंस्य शुष्मौद्भानुर्नात् बिभंति। भारं पृथिवी न भूमी। प्र शुक्रेत् देवी मंनीषा। अस्मत्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिह साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृशिभेर्भवत्। प्रजापितेस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५६॥

यास्तें अग्न आर्द्रा योनंयो याः कुंलायिनीः। ये ते

अग्र इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

अग्निरंसि वैश्वान्रोंऽसि। संवृत्सरोंऽसि परिवत्सरोंऽसि। इदावृत्सरोंऽसीदुवत्सरोंऽसि। इद्वृत्सरोंऽसि वत्सरोंऽसि। तस्यं ते वसन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पृच्छम्। शरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपरुपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्द्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवृत्सरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदिति। पृजापतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवः सीद॥५८॥

चितंयो नवं च॥——[१९] भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नः पाह्य १ हंसः। विधुन्दंद्राण १ समंने बहूनाम्। युवांन १ सन्तं पितृतो जंगार। देवस्यं पश्य कार्व्यं मिह्त्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यद्दते चिंदिभिश्रिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सुन्धिं मुघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्केर्ता विह्नुतं पुनः। पुनेरूर्जा सह र्य्या। मा नो घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधरं मा रजोऽनैः। मोष्वस्मा स्तमंस्यन्तरा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परा दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ता। मा द्यावांपृथिवी हीडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमंस्परिं। उद्दत्यं चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥

पुरोवसंरहीडिषाताः सुपूर्णाः॥———[२०]

भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। युज्ञेन पर्यसा

-[२२]

सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमहि। तस्यं सुम्नमंशीमहि। तस्यं भृक्षमंशीमहि। तस्यं तु इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपंहूतस्योपंहूतो भक्षयामि॥६२॥

यास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। क्षुच् तृष्णा चं। अस्नुक्रानांहुतिश्च। अश्नन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं

स्निक्क स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चं शीता चं। उग्रा चं भीमा चं। सदाम्नीं सेदिरिनंरा। एतास्तें अग्ने घोरास्त्नुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६४॥———[२३]

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयः श्चा निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं विक्षिपः॥६५॥

[28]

——[२५]

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सह्सह्वाइश्च सहंमानश्च सहंस्वाइश्च सहीयाइश्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासौस्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवंस्त्वा पचन्तु। संवृत्स्ररस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

खद फद जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः कूराणि॥६८॥

विगा इंन्द्र विचरंन्तस्पाशयस्व। स्वपन्तमिन्द्र पशुमन्तमिच्छ। वर्ज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपतौऽस्य प्रहेर भोजनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवदस्व। मृत्यो मृत्युना संवदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पृश्चकृत्वंस्ते नमंः। दृश्कृत्वंस्ते नमंः। दृश्कृत्वंस्ते नमंः। अगुसृह्स्रकृत्वंस्ते नमंः। अपरिमित्कृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु मा मां

हिश्सीः॥६९॥

त्रिस्ते नर्मः सप्त चं॥____ असृन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि। गृध्रंः सुपूर्णः कुणपुं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो भवस्यं

चोभयोः॥७०॥

यदेतहृंकसो भूत्वा। वाग्दैंव्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिराय।

तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥

यदींषितो यदिं वा स्वकामी। भयेडंको वदंति वाचंमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवामस्मभ्यं कृणुतं गृहेषुं॥७२॥

-[३१] दीर्घमुखि दुर्हणु। मा समं दक्षिणतो वंदः। यदिं दक्षिणतो वदौद्विषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥

इत्थादुर्लूक आपंत्रत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत

आगंतः। तिमृतो नांशयाग्ने॥७४॥

श्वेताभिः सह सर्वे हताः॥७७॥

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वृदसिं। द्विषतों नः परावद। तान्मृत्यो मृत्यवें नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छंन्तु। अग्निनाऽग्निः संवदताम्॥७५॥

प्रसार्य स्कथ्यौ पतंसि। स्व्यमिक्षं निपेपि च। मेहकंस्य चुनामंमत्॥७६॥

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन ज्ञमदेग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपतिरहृतः। अथो माताऽथो पिता। अथो स्थूरा अथो क्षुद्राः। अथो कृष्णा अथौ श्वेताः। अथो आ्रशातिका हृताः।

आह्रावंद्य। शृतस्यं हुविषो यथां। तत्सत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्मसिं॥७८॥ ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शुपर्थेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूंणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनंसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधंरो मत्पंद्यस्वाऽसौ॥७९॥

उत्तुंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तुंद। गिरी॰ रनु प्रवेशय। मरींची्रुप सन्नुंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोंऽमुं नांशय। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वृयं द्विष्मः॥८०॥

———[३९]
भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवौऽद्धायि
भुवौऽद्धायि भुवौऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णां नृम्णायि नृम्णां
नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

पृथिवी स्मित्। तामुग्निः सिनन्धे। साऽग्निः सिनन्धे। तामुहः सिनन्धे। सा मा सिनद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिमन्ताः स्वाहाः। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः सिनंन्धे। सा वायु सिनंन्धे। तामहर सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनंन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिन्त। तामांदित्यः सिनंन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। ताम्ह सिन्धे। सा मा सिन्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनदंसि सपत्रक्षयंणी। भातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्नै व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्योः स्मित्। तामांदित्यः सिमंन्धे। साऽऽदित्यः सिमंन्धे। तामृहः सिमंन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा॥८५॥ वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिमंन्ताः

स्वाहाँ। अन्तरिक्ष समित्। तां वायुः समिन्धे। सा वायु र

सिन्धे। तामृह र सिन्धे। सा मा सिन्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिन्ता रूप्ताहाँ। पृथिवी समित्। ताम् ग्निः सिन्धे। साऽग्निः सिन्धे। ताम् हः सिन्धे। सा मा सिन्धे। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्यंन् सिमंन्ता इं स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदंसि सपत्रक्षयंणी। भ्रातृ व्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते ऽग्नें व्रतपते। व्रतानांं व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

स्मित्सिमेंन्थे ब्रुतं चेरिष्याम्यायुंषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टो चं॥•[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्युंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि। इडांये वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छित्स्मह्मवास्तुः स भूयाद्यौऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः। प्रतिष्ठासि प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रंतिष्ठायाँश्छित्स्मह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्यौऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व १ हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौं वात आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥ दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वातु यद्रपंः। यद्दो वातते गृहें ऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषुजम्। ततों नो मह आवंह वात् आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नो हृदे प्र णु आयू ५ेषि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेन। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भुवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनांतां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाखणं प्रपंदो प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंदो। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तुभिः परिपातम्स्मानिरष्टेभिरिश्वना सौभंगेभिः। तन्नों मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां निश्चित्र आ भुंवदूती सदावृधः सखाँ। कया शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मश्हिष्ठो मत्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षु णः सखीनामिवता जरितृणाम्। शतं भंवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूणुंहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नो देवीर्भिष्टंय आपो भवन्तु पीतयें। शं योर्भिस्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिंव मातरंः। तस्मा अरंं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जुनयंथा च नः। पृथिवी शाुन्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुच र शमयत्। अन्तरिक्ष र शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तः शुचरं शमयतु। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच ५ शमयतु। पृथिवी शान्तिंरन्तरिक्ष शान्तिर्द्यौः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिवायुः शान्तिरादित्यः शान्तिश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षेत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं र्ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिमें अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा माु श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानिं मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना ५ रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता ५ अन्। तचक्षुंर्देविहेतं पुरस्तांच्छुऋमुचरंत्। पश्येम श्रारदेः शतं जीवेम शरदेः शतं नन्दाम शरदेः शतं मोदाम श्रदः शतं भवाम श्रदः श्रतः श्रुणवाम श्ररदः श्रतं प्रब्रंवाम श्ररदेः श्तमजीताः स्याम श्ररदेः श्तं ज्योक् सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्यात्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवपंनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायुंरयाणि सर्वमायुंरयाणि। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावादिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥९३॥

प्रावतीं दधात ब्द्धां जिन्वंथ इशे स्म चं॥———[४२]
नमीं वाचे या चोदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों
वाचे नमों वाचस्पत्ये नम् ऋषिंभ्यो मत्रुकृद्धो मत्रंपतिभ्यो
मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपत्यः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतो
मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां

देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मा अहमिदम्प्रस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणमे प्रजाये पश्नां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पश्नां भूयास् प्राणापानौ मृत्योमां पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मध्य मिनष्ये मध्यं जिनष्ये मध्यं वक्ष्यामि मध्यं विद्यामि मध्यमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास् शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥



॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै सत्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशे ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तत्सहासदितिं। तेषाँ कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्डवो देक्षिणार्द्ध आंसीत्। तूर्घ्रमुत्तरार्द्धः। परीणज्ञंघनार्द्धः। मरवं उत्करः॥१॥ तेषां मखं वैष्णवं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तं देवा अन्वांयन्। यशोऽवरुरुंत्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। स्व्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषंवः। तस्मोदिषुधन्वं पुण्यंजन्म। यज्ञजंन्मा हि॥२॥ तमेक र सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्वि-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृष्णुवन्ति। सौऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वै नामैते॥३॥ तत्स्मयाकांना इस्मयाकत्वम्। तस्मांद्वीक्षितेनांपिगृह्यं स्मेतव्यम्। तेजंसो धृत्यै। स धनुः प्रतिष्कभ्यांतिष्ठत्। ता

उंपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं व इम र रंन्थयाम। यत्र कं च खनांम। तद्पों ऽभितृंणदामेतिं। तस्मांदुपदीका यत्र कं च खनंन्ति। तद्पों ऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेवृत्ड् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण्ड् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत् प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्यमस्यं धर्मत्वम्। महुतो वीर्यमपप्रदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीर्त्वम्॥५॥ यदस्याः समभंरन्। तत्सम्राज्ञः सम्राद्धम्। तः स्ततं

वीयमपप्तिति। तन्महावीरस्य महावीर्त्वम्॥५॥
यदस्याः समभंरन्। तत्सम्राज्ञः सम्राद्वम्। तङ् स्तृतं
देवतांस्रोधा व्यंगृह्णत। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं
दिन् सर्वनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन्
यज्ञमानाः। नाशिषोऽवार्रुन्धत। न स्वृंवं लोकम्भ्यंजयन्।
ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥
भिषजौ वै स्थः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति।

भिषजो वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंब्रूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यांमेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- ऽरुंन्धतः। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिक्ति। यज्ञस्यैव तच्छिरः प्रतिदधाति। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजमानः। अवाशिषों रुन्धे। अभि सुंवर्गं लोकं जयित। तस्मादेष आश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्करो होते तृन्दन्ति महावीर्त्वमंब्रवत्रजयन्त्म् च॥———[१]
सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः
प्रश्वः। प्रशूनेवावंरुन्धे। चतंस्रो दिशः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति।
छन्दा ऐसि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानिं ह्व्यं
वंक्ष्याम् इति। तेभ्यं पृतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै
याज्यांयै॥८॥

देवतांये वषद्वारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा ईस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानि देवेभ्यों हव्यं वहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। ह्विर्वे दीक्षितः। यज्ञंहुयात्। ह्विष्कृतं यजमानम्ग्रौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥ यज्ञपरुर्न्तरियात्। यज्ञंरेव वंदेत्। न हविष्कृतं यजमानम्ग्रौ

प्रदर्धाति। न यंज्ञपरुरन्तरेति। गायत्री छन्दा इस्यत्यंमन्यत।

तस्यै वषद्वारौऽभ्यय्य शिरौऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्द्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्द्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदिर्यभ्रिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जेव युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वेणवी। तेजो वै वेणुं:॥११॥

तेर्जसैव यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंते प्रस्त्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। वर्ज्ञं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस नारिर्सीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावेतदाह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणेव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्यैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। यज्ञो वे सूनृतां। अच्छां वीरं नयं पङ्किराधसमित्यांह॥१३॥ पाङ्गो हि युज्ञः। देवा युज्ञं नयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्धासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीर्ष्ण इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥
त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यों युज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थश् हंरित। अपंरिमितादेव

शिरः सम्भंरित। तूष्णीं चंतुर्थं हंरित। अपंरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भंरित। मृत्खनादग्रें हरित। तस्मांन्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऊर्जं वा एतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥

यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्ङ् ह्यंतत्पृंथिव्याः। यद्वल्मीकः। अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र प्राक्रंमत॥१६॥ तन्नाद्धियत। स पूतीकस्तम्बे परांत्रमत। सोंऽद्धियत।

सौंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्।

यदूतीका भवंन्ति। युज्ञायैवोतिं दंधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पशून्प्राविंशत्॥१७॥ तमेवावंरुन्धे। पश्चेते संम्भारा भंवन्ति। पाङ्कों यज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तस्य शिरुः सम्भेरति। यद्ग्राम्याणां पशूनां चर्मणा सम्भरंत्। ग्राम्यान्पशूञ्छुचाऽर्पयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भरित। आरुण्यानेव पृशूञ्छुचार्पयति। तस्मौत्समावंत्पशूनां प्रजायंमानानाम्॥१८॥ आरण्याः पशवः कनीया स्मः। शुचा ह्यृंताः। लोमतः सम्भरित। अतो ह्यस्य मेध्यम्। परिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्यै। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधति शान्त्यैं। मदंन्तीभिरुपं सृजति॥१९॥ तेजं एवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कुपालैः स॰सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मुकुपालैः स॰सृंजति। पुतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचापंयति। शर्कराभिः सर्मृजति धृत्यै। अथो शन्त्वायं।

अज्ञलोमेः सर्मृजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तुन्ः। यदुजा। प्रिययैवैनं तुनुवा सर्मृजिति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः सर्मृजिति। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव युज्ञर सर्मृजिति॥२०॥

याज्यांयै न जुंहुयादविश्द्वेणुः शान्त्यं पृक्किरांधस्मित्यांह हरित दिहन्ति प्राक्रंम्ताविशत् प्रजायंमानानाः स्जित शृन्तवायाष्टौ चं॥————[२] परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्निभ प्राण्यात्। यत्कुर्वन्निभ प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचापयत्। अपहायः प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्यं चादित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥ तस्मान्नान्तराय्यम्॥ आत्मनां गोपीथायं। वेणुंना करोति।

तस्मान्नान्त्राच्यम्। आत्मना गापायाया वणुना कराता तेजो वै वेणुः। तेजः प्रवर्ग्यः। तेजसैव तेजः समर्द्धयित। मुखस्य शिरोऽसीत्याह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरः। यत्प्रवर्ग्यः॥२२॥

तस्मदिवमांह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्यांह। यज्ञस्य ह्यंते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। पुषां लोकानामाध्यै। छन्दोंभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रेसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। पृतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं कंरोति धृत्यैं। सूर्यंस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वश्केनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दांश्ंसि निष्पत्॥२५॥

छन्दोंभिरेवैनं धूपयित। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोऽभीद्धं। मैत्रियोपैति शान्त्यै। सिद्धे त्वत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिवतोद्धंपत्वित्यांह। स्वितृप्रंसूत पृवैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्वंपित। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥ तस्मांदिशः सर्वा दिशोऽन विभांति। उत्तिष्ठ बहन्भवोध्वंस्तिष्ठ

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभाति। उत्तिष्ठ बृहन्भवोध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौऽन्धो भवितोः।

यः प्रवर्ग्यम्नविक्षंते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष् इत्यांह। चक्षुंषो गोपीथायं। ऋजवें त्वा साधवें त्वा सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजः। अन्तरिक्षः साधा असो सुक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिः। इमानेवास्मै लोकान्कंल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै। इदमहम्मुमांमुष्यायणं विशा पशुभिंब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामीत्यांह। विशैवैनं पृशुभिंब्रह्मवर्चसेन पर्यूहति। विशेतिं राज्नन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवैनं पर्यूहति। पशुभिरिति वैश्यंस्य। पशुभिरेवेनं पर्यूहति। असुर्यं पात्रमनाँच्छृण्णम्॥२८॥ आर्च्छृणत्ति। देवत्राकः। अजक्षीरेणाऽऽर्च्छृणत्ति। परमं वा एतत्पर्यः। यदंजक्षीरम्। परमेणैवैनं पयसाऽऽच्छ्रंणत्ति। यजुंषा व्यावृंत्त्यै। छन्दोंभिराच्छृंणत्ति। छन्दोंभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दा इस्याच्छृंणत्ति। छृन्धि वाचिमत्याह। वाचंमेवावंरुन्धे। छृन्ध्यूर्जिमित्यांह। ऊर्जमेवावंरुन्धे। छृन्धि हविरित्यांह। हविरेवार्कः। देवं पुरश्चर सुघ्यासुन्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥२९॥ प्रंवुग्र्यश्चन्दोंभिः करोति वीुर्यसम्मितुं छन्दार्श्स निष्पत्पृणेत्याह

सुक्षितिरनाँच्छृण्णुञ्छन्दा्ड्स्याच्छृंणत्त्यृष्टौ चं॥______[3] ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतेर्घर्मम्भिष्टुहीत्याह। एष वा एतर्हि बृहस्पतिः। यद्भद्धा। तस्मां एव प्रतिप्रोच्य प्रचरित। आत्मनोऽनाँत्यै। यमायं त्वा मखाय त्वेत्यांह। पुता वा पुतस्यं देवताः। ताभिरेवेन १ समर्द्धयति। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥ अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपंहत्ये। अनंवानम्। प्राणाना ५ सन्तंत्ये। त्रिष्टुर्भः सतीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥ गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यजमाने दधाति। सन्तंतुमन्बाह। प्राणानांमन्नाद्यंस्य सन्तंत्यै। अथो रक्षंसामपंहत्यै। यत्परिंमिता अनुब्रूयात्। परिंमितुमवंरुन्धीत। अपंरिमिता अन्वांह। अपंरिमितस्यावंरुख्यै। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं॥३२॥ यत्प्रवर्ग्यः। ऊर्ङ्ग् औः। यन्मौ ओ वेदो भवंति। ऊर्जैव युज्ञस्य शिरः समर्द्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजंमाने दधाति। सप्त जुंहोति। सप्त वै शीर्षण्याः

प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनुक्तित्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्तः। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपौस्यितः। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रलवानादीप्योपौस्यितः। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। अप्रंतिशीणीग्रं भवति। एतद्वंरिहरहोषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेजं पुवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं देधाति। सश्मीदस्व महाश् असीत्यांह। महान् ह्यंषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। पुते वाव त ऋत्विजंः। ये देर्शपूर्णमासयोः। अथं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशांस्त इति। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीर्न्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूड्ष्याहं। शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्थे। आयुंः पुरस्तांदाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पश्चात्। श्रोत्रंमृत्तरतः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्में समीचों दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥ मनोरश्वांसि भूरिंपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिंपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूप्सदां मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितः स्थ परिचित् इत्याह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतों र्श्मर्यः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्य र रिश्मिभिः पर्यूहिति। तस्मांदसावांदित्योंऽमुिष्मिं छोके रिश्मिभिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छत्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वादंश् मासाः संवत्स्रः। संवत्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्यांहुः। यत्रंयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मास्मवंरुन्धे। अन्तरिक्षस्यान्तर्द्धिर्सीत्यांह् व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्रायस्वत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हन् बिभर्षि सायंकानि धन्वेत्यांह॥३९॥ स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं ध्वित्राण्यादेत्ते। छन्दोभिरेवैनान्यादेत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यजंमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपहत्ये। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घुर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष ह् वा अंस्य प्रियां तनुवमाक्रांमति। यत् त्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता ह

वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥
ततो वै स दुश्चर्मांऽभवत्। तस्माक्रिः प्रीत्य न चंतुर्थं
परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि।
अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रुप्त्यै। विनिषद्यं
धून्वन्ति। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं
लोकस्य समंष्ट्ये। सुवंतों धून्वन्ति। तस्मांद्य सुवंतः
पवते॥४२॥

द्धातीवान्वांह यज्ञस्यांहैष उपरिष्टादाशीर्न्यो व्यांस्थापयंन्ति रुश्मयों भवन्ति धन्वेत्यांह यज्ञश्चंकाम्

समंध्ये द्वे चं॥-अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्तौद्रोचयतु गायुत्रेण् छन्द्सेत्यांह। अग्निरेवैनं वस्ंभिः पुरस्ताँद्रोचयति गायुत्रेण छन्दंसा। समारुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैर्दक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेन छन्द्सेत्यांह। इन्द्रं एवैन ५ रुद्रैदेक्षिणतो रोचयति त्रेष्टुंभेन छन्दंसा। समारुचितो रोचयेत्याह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। वरुणस्त्वाऽऽदित्यैः पश्चाद्रोचयतु जागतेन छन्दसेत्याह। वरुण एवैनमादित्यैः पृश्चाद्रोंचयित् जागंतेन छन्दंसा॥४३॥ समारुचितो रोचयेत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वानुष्टुभेन छन्दसेत्याह। द्युतान एवैनं मारुतो मरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्यानुष्टुभेन छन्दंसा। समारुचितो रांचयेत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। बृहस्पतिंस्त्वा विश्वैदिवैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन छन्दसेत्यांह। बृहस्पतिरेवैनं विश्वैदिवैरुपरिष्टाद्रोचयति पाङ्केन छन्दंसा। समारुचितो रोचयेत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते॥४४॥ रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्याह। रोचितो ह्यंष देवेषुं।

रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्यांह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राह्वर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्यंष देवेष्वायुंष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितों ऽहं मेनुष्येष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासमित्याह। रुचित एवैष मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रंह्मवर्चसी भवति। रुगंसि रुचं मियं धेहि मिय रुगित्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। तं यदेतैर्यजुंर्निररोंचयित्वा। रुचितो घुर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यजंमानः। अथ यदंनमेतैर्यजुंभी रोचयित्वा। रुचितो घर्म इति प्राहं। रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजमानः॥४५॥ पृक्षाद्रोंचयित् जागंतेन छन्दंसा पाङ्केन छन्दंसा समारुचितो रोंच्येत्यांहाशिषंमेवैतामाशाँस्ते शास्तेऽष्टौ चं॥= शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत् प्रवर्ग्यः। ग्रीवा उपसदः।

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत् प्रंवर्ग्यः। ग्रीवा उपसदः। पुरस्तांदुपसदां प्रवर्ग्यं प्रवृंणिक्ता ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। त्रिः प्रवृंणिक्ता त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥ ऋतुभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणक्ति। द्वादेश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। चतुंर्वि १ शतिः सम्पंद्यन्ते। चतुंर्वि १ शतिरर्द्धमासाः। अर्द्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। अथो खर्लु। सकृदेव प्रवृज्यः। एक १ हि शिरः॥४७॥ अग्निष्टोमे प्रवृंणक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावांनग्निष्टोमः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। नोक्थ्ये प्रवृं अयात्। प्रजा वै पुशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यें प्रवृञ्चात्। प्रजां पुशूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणक्ति॥४८॥ पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावयित्वाऽवंरुन्धे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयति। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायतिं। तमेव प्रजानां गोप्तारं कुरुते। अनिंपद्यमानमित्यांह॥४९॥ न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च पथिभिश्चरंन्तमित्यांह। आ च ह्यंष परां च पथिभिश्चरंति। स सधीचीः स विषूचीर्वसान इत्याह। सधीचीश्च होष विषूचीश्च वसानः

प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूंचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। समग्रिरग्निनां गृतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यवेषों ऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा सम्ग्निस्तपंसा गृतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृणाति। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां युच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ ह्रोकान्त्सन्दं-धाति। विश्वांसां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्याहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। तृपोजां वाचंमस्मे नियंच्छ देवायुवमित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्धे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्येष देवानाम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत् प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमाह। पतिः प्रजानामित्याह। पतिर्ह्येष प्रजानाम्। मतिः कवीनामित्याह॥५३॥

मित् ह्येष केवीनाम्। सं देवो देवेन सिव्त्रा येतिष्ट् सं सूर्येणारुक्तेत्याह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रवेग्यं च संशास्ति। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्याह। आशिषंमेवैतामाशास्ते। पिता नोऽसि पिता नो बोधेत्याह। बोधयंत्येवैनम्। न वै तेऽवकाशा भवन्ति। पित्रिये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। य्जस्य शिरौंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव य्जस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥ रुचितमवेंक्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना स्ष्रें। रुचितमवेक्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजन्यों वर्षित। वर्षुंकः प्रजन्यों भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवेंक्षन्ते। रुचितं वै ब्रंह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चिसनों भवन्ति॥५६॥ अधीयन्तोऽवैंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवैंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजायेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजायेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजायते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

ऋतवो हि शिरः सर्वपृष्ठे प्रवृण्क्यिनिपद्यमान्मित्यांह गृतेत्यांह शार्दावेवास्मां ऋतू केल्पयित रूथे कवीनामित्यांह प्राणाः प्रतिद्याति भवन्ति वाचयित च्त्वारि चा——[६] देवस्य त्वा सिवृतुः प्रस्व इति रशनामादेने प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्नाऽसीत्यांह यज्जैष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सर्रस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अस्यै देवनामानि। देवनामेरेवैनामाह्वंयित। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अस्यै मनुष्यनामानि॥५८॥

मनुष्यनामेरेवेनामाह्वयित। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वयित। अदित्या उष्णीषंम्सीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्येड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वत्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तिवत्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥ स्वयैवैनं देवतयोपावसृजति। अश्विभ्यां प्रदापयेत्याह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषुजं करोति। यस्ते स्तनंः शशय इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्म ५ शि र षोस्न घर्मं पाहि घर्मायं शि र षेत्याह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। ताद्दगेव तत्। बृहस्पतिस्त्वोपं सीद्तित्याह॥६०॥ ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानंवः स्थ पेरंवु इत्याह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहिंतेनेत्यांह व्यावृंत्त्यै। अश्विभ्यां पिन्वस्व सर्रस्वत्यै पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृहस्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भागधेर्येन समर्द्धयति। द्विरिन्द्रायेत्याह॥६१॥ तस्मादिन्द्रों देवतानां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रैष्टुंभोऽसि जागंतमसीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपुमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वाभ्यां वर्षद्भियाता इति। इन्द्रांश्विना मधुनः सारघस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्वरोति। अथो अश्विनांवेव भांगुधेयेंन समर्द्धयति॥६२॥

घुमं पांत वसवो यजंता विहत्यांह। वसूनेव भांगधेयेंन् समर्द्धयित। यद्वंषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यांत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षा १सि यज्ञ १ हंन्युः। विहत्यांह। प्रोक्षंमेव वषंद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञ १ रक्षा १सि प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यंस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अंस्य पुण्यों र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं हिवर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। सूर्यंस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवेनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छ्रामीत्यांह। अन्तिरिक्षेणेवेन्मुपंयच्छिति। न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमर्हित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयमित्यांह। देवेरेवेनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि वा एनमेतदंर्द्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्नंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीर पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहि श्रेसायै॥६५॥

सुवंरिस् सुवंर्मे यच्छ दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिर्ः प्रतिंदधाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥

पाङ्को युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नयै त्वा वसुंमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्यों ऽग्निर्वसुंमान्। तस्मां पुवैनं जुहोति। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमों रुद्रवान्। तस्मां पुवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अप्सु वै वर्रण आदित्यवान्। तस्मां पृवेनं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैवैनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवृतस्रो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां पृवेनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो

वै यमोऽङ्गिरस्वान्पितृमान्॥६८॥

तस्मां एवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभयो जुहोति। दश सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वै देवाः स्वर्गं लोकमांयन्। तद्रौहिणयों रौहिणत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमंति। अहर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्यीतिषा इस्वाहा रात्रिज्यीतिः केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा हु स्वाहेत्याह। आदित्यमेव तदमुष्मिं लोके ऽह्नां परस्तौद्दाधार। रात्रिया अवस्तात्। तस्मादसावादित्योऽमुष्मिँ होकेऽहोरात्राभ्याः धृतः॥६९॥

विश्वा आशां दक्षिण्सिदत्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्या एवैनं पाति। विश्वां देवानयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्भांग्धेयेन समर्द्धयति। स्वाहांकृतस्य घुर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भांगधेयेन समर्द्धयति। स्वाहाऽग्नये यज्ञियांय शं यजुंर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथो ह्विरेवाकंः॥७०॥

अश्विना घुमं पांत हार्दिवानमहर्दिवाभिकृतिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भांगुधेयेन समर्द्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्सातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविडित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घुमस्यं युजेति। वषंद्वृते जुहोति। रक्षंसामपंहत्यै। अनुंयजित स्वगाकृंत्यै। घुममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्ये। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नमः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्यांह। पृष्वेवैनं लोकंषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितृन्धंर्म्पान्गच्छे-त्यांह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुंकः पूर्जन्यो भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते।

तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्केन्दाय। इषे पीपिह्यूर्जे पीपिहीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमाशांसते। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमाशांसते। त्विष्यें त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्ये त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासे सुधर्मा में न्यसमे ब्रह्माणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयित। नेत्त्वा वातः स्कृन्दयादिति यद्यंभिचरेत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेतिं ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन सह निर्धं गमयित। पूष्णे शरेसे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥ ताभ्यं पुवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः इ स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांगुधेयेन समर्द्धयित। सर्वतः समनिक्ति। सर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्रंश्चं निरस्यिति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वीक्षेत। यद्न्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया सिमध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपीपरो मा रात्रिया अह्यो मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया सिमध्यस्वाऽऽयुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिज्योतिर्गिः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)त्र होत्व्या(३)मितिं॥७९॥

यद्यज्ञंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अभिः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होंतृव्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुत १ हविर्मधुं हिवरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥ प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैनमिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव घर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत इत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। स्वधाविनोंऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेर्जसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रंवर्ग्येण चरन्ति। प्राश्नंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥ संवत्सरं न मा रसमंश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न मृन्मर्थेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तत्सङ्श्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुपयन्तः। विभ्राजिं सौर्ये ब्रह्मसन्यंदधत। यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्। तदेतेनैव व्रतेनांगोपायत्। तस्मांदेतद्वतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं।

तस्मादेतानि यजूरेषि विभ्राजः सौर्यस्थेत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्य इति प्रातः सर्सादयति। स्वाहाँ त्वा नक्षत्रेभ्य इति सायम्। पृता वा पृतस्यं देवताः। ताभिरेवैन्र समर्द्धयति॥८२॥

अक्रुक्षिनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरिधि पिन्वयति धार्येत्यांह् वाचीं घर्मपास्तेभ्यं एवैनं जुहोत्युन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायत्सपत चं॥———[८] घर्म या तें दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोंभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमर्व यजते। इयत्यग्रे जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मितिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्यांह। दिव पुवेमाँ श्लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्याह॥८३॥ एष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा परस्पाया इत्याह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रवर्ग्यः। तं यद्विषा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासर्यंत्। जिह्नां युज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्चमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव युज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥ प्राश्चमुद्वांसयति। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति।

श्रुफोप्यमान्धवित्राणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मानमेवेन् स् सर्तनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ह्लोके भविति। य एवं वेदे। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

यज्ञ १ रक्षा १ सि जिघा १ सिन्ति। साम्ना प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रेक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकभ्यो रक्षा १ स्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रेक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥ यत्पृंथिव्यामुंद्वासर्यंत्। पृथिवी १ शुचाऽपंयत्। यद्प्सु। अपः

शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽर्पयेत्। यद्वन्स्पतिषु। वन्स्पतीं ञ्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयित। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं एवैनं प्रतिष्ठापयति। वृत्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः परिषिञ्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावानेवाग्निः। तस्य शुचर् शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवेः। ऋतुभिरेवास्य शुचर् शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

इयं वा ऋतम्। तस्यां पृष पृव नाभिः। यत् प्रव्यर्थः। तस्मादेवमाह। सदो विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्याह भ्रातृं व्यापनुत्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नं मेतत्पुरीष् मिति द्वा मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवनम्नाद्येन् समर्द्धयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्धर्व इत्याह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमान रन्तें बन्ध्तां व्याचेष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्याह। आशिषंमेवैतामाशास्ते। व्यंसौ यों ऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिंऋदद्वृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्यंषः॥९०॥ वृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हि सीरित्याहाहि स्सायै। विश्वावंस् स सोम गन्धर्वमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमाणस्यान्तर्यन्ति। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुरभि तन्नों गृणात्वि-त्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियो हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतांनि वोचदित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मै कल्पयति। पुतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगा इत्याह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमहं मनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥ म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पुशून्त्सोमपीथमनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्योह। प्रजामेव पृश्नून्त्सोमपीथमात्मन्धंत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सुन्त्वित्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चे वयं द्विष्म इत्याह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषों ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयतिं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वै लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आंदित्यः सुंवर्गो लोकः। यत्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गाह्मोकान्नैतिं॥९३॥

ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह दधात्युन्वित्यं रक्षुस्वी रक्षंसामपंहत्यै वै हिरंण्यमाहार्द्धयित् ह्यंष

गृंणात्वत्यांह मनुष्यांनित्यांहास्यैषोंऽष्टौ चं॥————[९] प्रजापितुं वै देवाः शुक्रं पयोऽदुह्नन्। तदैभ्यो न व्यंभवत्। तदग्निर्व्यंकरोत्। तानि श्रितंयाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानिं शुक्रयजूङ्ष्यंभवन्। शुक्रियाणां वा एतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा एतयोर्न्यत्। देवानांमन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥ तत्साम्नः पर्यः। यदजायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पयंसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्द्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यतें। उत्तरवेद्यामुद्वांस-येत्तेर्जस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥ तेजः प्रवर्गः। तेजंसैव तेजः समर्द्धयति। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णैव मुखं सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एवं भवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वया रेसि पर्यासंते। परि वै ता समां प्रजा वया ईस्यासते॥ ९६॥ तस्मादुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो

वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा पृतज्ञ्योतिरुदेंति। तत्पृश्चान्निम्नोचित्। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा पृतन्मध्याज्ञ्योतिंरजायत। ज्योतिः प्रवृग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयित॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र् स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निवैश्वानुरः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवैनं वैश्वानुरेणाभि प्रवंतयित। औदुंम्बर्या्ष् शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अत्रं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

इदमहम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपि दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपि दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदीरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छिति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गोः पयं उत्तरवेदिरांसते स्थापयित धुमां यंन्ति॥

प्रजापंतिः सम्भ्रियमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घृर्मः प्रवृक्तः।

महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्रंवर्ग्यः।

स एतानि नामाँन्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्नाँ। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥१००॥

यो वै वसींया श्सं यथाना ममुंप्चरित। पुण्यां तिं वै स तस्में कामयते। पुण्यां तिमस्मे कामयन्ते। य एवं वेदे। तस्मादेवं विद्वान्। घमं इति दिवाऽऽचंक्षीत। सम्माडिति नक्तम्। एते वा एतस्यं प्रिये तनुवौं। एते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवां॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समर्द्धयित। कीर्तिरेस्य पूर्वागेच्छिति जनतांमायतः। गायत्री देवभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रंवग्येणेवानु व्यंभवन्। प्रवग्येणाप्रुवन्। यचंतुर्विरशितकृत्वंः प्रवग्यें प्रवृणिक्तं। गायत्रीमेव तदनु विभवित। गायत्रीमांप्रोति। पूर्वांऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छिति। वैश्वदेवः सर्संन्नः॥१०२॥ वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोंऽभिकीर्यमांणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमान। मारुतः क्रथन्। पौष्ण उदंन्तः। सार्स्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। सार्स्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्हियमांणः। प्रजापंतिरहूयमांनो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि

नामाँन्यकुरुत। य पृवं वेदं। विदुरेंनं नाम्नाँ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहुंतिं नाश्जुतेऽर्थं। कस्मांदेषौंऽश्जुत् इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचें दधाति॥१०४॥ तस्मांदश्जुते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रावंग्वं। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशेर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावेषः॥१०५॥ वदन्ति तन्व सरसंत्रो ह्यमांने वायुतो दंधात्येषः॥———[११]

स्विता भूत्वा प्रथमेऽह्न्प्रवृंज्यते। तेन् कामा एति। यद्वितीयेऽहंन्प्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्र-वृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यतें। आदित्यो भूत्वा रश्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंन्प्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्पष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवत्स्रमेति। यत्संप्तमेऽहंन्प्र-वृज्यतें। धाता भूत्वा शक्तंरीमेति। यदंष्ट्रमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्त्रंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ ल्लोकानेति। यद्दंश्मेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजमिति॥१०७॥

यदेकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेंति। यत्पुरस्तांदुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ छोका इ-स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांद्मुतोऽर्वा-ङिमाँ छोका इस्तपंत्रेति। य पृवं वेदे। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजंमेति तपित॥———[१२] ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

- - \ ********

॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवारसं प्रवतो महीरन् बहुभ्यः पन्थामनपस्पशानम्। वैवस्वत स्ङ्गमंनं जनानां यम राजान ह्विषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्नं प्रथमन्वागुन्नपैतदूंह यदिहाबिभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबंन्धुषु। इमौ युंनज्मि ते वही असुंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंन सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्चांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिंददात्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रैभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मा अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥ आयुर्विश्वायुः परिपासति त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्रासंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद १ हविः। अग्नयें रियमते स्वाहाँ। पुरुषस्य सयावर्यपेद्घानिं मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जुरस् आयंति। पुरुंषस्य सयाविर् वि ते प्राणमंसि स्नसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं मा्ड् स्ता प्रियेऽहं देवी स्ती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नो लोको पर्यसाऽभ्यावंवृत्स्व॥२॥

इयं नारी पतिलोकं वृंणाना निपंद्यत उपं त्वा मर्त्य प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेंहि। उदींर्ष्व नार्यभि जींवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहिं। हस्तग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वमभि सम्बंभ्व। सुवर्ण् ९ हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रियै ब्रह्मंणे तेजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयेम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षत्रायौजंसे बलांय। अत्रैव त्विमृह व्य र सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयेम। मणिर हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पुष्ट्ये बलाय। अत्रैव त्वमिह वय र सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमातीर्जयेम॥३॥ इममंग्ने चमसं मा विजीहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्।

ड्ममग्न चम्स मा विजाहरः ।प्रया द्वानामुत साम्यानाम्। एष यश्चमसो देवपानस्तस्मिन्देवा अमृता मादयन्ताम्। अग्नेवर्म परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोर्णुष्व मेदसा पीवसा च। नेत्त्वां धृष्णुर्हरंसा जर्ह्षणणो दर्धद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयातै। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। युदा शृतं करवी जातवेदोऽथेमेनं प्रहिंणुतात्पृतृभ्यः। शृतं यदा क्रसीं जातवेदोऽथेंमेनं परिंदत्तात्पृतृभ्यंः। यदा गच्छात्यसुनीतिमेतामथां देवानां वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छु यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं तें शोचिस्तंपतु तं तें अर्चिः। यास्तें शिवास्तन्वों जातवेदस्ताभिर्वहेम सुकृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमेतद्यं वै तदस्य योनिरसि। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोकुकुञ्जातवेदो वहेंम सुकृतां यत्रं लोकाः॥४॥ विद्वानुभ्यावंवृत्स्वाभिमांतीर्जयम् शरींरैश्चत्वारिं च॥----------[१]

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथो रिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथोभिऽरिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्नयं कर्मकृते स्वाहा यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहाँ। यस्तं इध्मं ज्ञभरंत्सिष्विदानो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्मात्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नये वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहाँ॥५॥

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्युग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं पुर ऊंत एकं तृतीयंन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तनुवै चार्रुरेधि प्रियो देवानां परमे सधस्थे। नाके सुपर्णमुप यत्पतंन्त १ हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुंणस्य दूतं यमस्य योनौं शकुनं भुंरण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा। अथां पितृन्त्सुंविदत्रा अपींहि यमेन ये संधमादं मदन्ति। यो ते श्वानौं यमरक्षितारौं चतुरक्षौ पंथिरक्षीं नृचक्षंसा। ताभ्या र राजन्परि देह्येन इस्वस्ति चौस्मा अनमीवं चे धेहि॥६॥

उरुणसावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा ५ अनुं।

तावस्मभ्यं दशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुंमद्येह भद्रम्। सोम एकैंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ता इश्चिंदेवापिं गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजंः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ताङ्श्चिदेवापिं गच्छतात्। तपंसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुर्वर्गताः। तपो ये चंक्रिरे महत्ता इश्चिंदेवापिं गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः सः रंभध्वमुत्तिष्ठत प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम ये असुन्नशेवाः शिवान् वयम्भि वाजानुत्तरेम॥७॥ यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्र सहस्रंधारं वितंतमन्तरिक्षे। येनापुनादिन्द्रमनौर्तमार्त्ये तेनाहं मा सर्वतंनुं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिंमिच्छमांनाः। धाुतुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मात्रय्या वर्चसा स॰सृंजाथ। उद्वयं तमंसस्परि पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्। धाता पुंनातु सविता पुंनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥

ध्रुह्यत्तरमाष्टो चं॥———[३] यन्ते अग्निममन्थाम वृष्भायेव पक्तवे। इमन्तर शंमयामसि

क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहस्त्वमु निर्वापया पुनंः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिंके शीतिंकावति ह्रादुंके ह्रादुंकावति। मुण्डूक्यां सुसङ्गमयेम इस्विग्नि श्वमयं। शं ते धन्वन्या आपः शमुं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शर्मु ते सन्तु वर्ष्याः। शं ते स्रवंन्तीस्तुनुवे शर्मु ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शमु पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥ अवं सृज् पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंतश्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातुं शेषु सङ्गेच्छतां तुनुवां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः समिष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तें कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः स्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च यो ब्राह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तुनुव् सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं तु एकं पुर ऊतु एकं तृतीयेंन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थै। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। युमेन् त्वं युम्यां संविदानोत्तमं नाकुमिधं रोहेमम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवृतुः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्पिरं धाता पुनातु। अस्मात्त्वमिधं जातौंऽस्ययं त्वदिधंजायताम्। अग्नयं वैश्वान्रायं सुवृगीयं लोकाय स्वाहां॥१०॥

अवंशीयता स्धस्थे पश्चं च॥ आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता र सुप्रयतेह बर्हिष्यूर्जाय जात्ये ममं शत्रुहत्यै। यमे इंव यतमाने यदैतं प्रवाम्भर्न्मानुषा देव्यन्तः। आसींदत इस्वमुं लोकं विदाने स्वासस्थे भंवतिमन्देवे नः। यमाय सोम र् सुनुत यमार्य जुहुता हविः। यम ४ हं युज्ञो गंच्छत्युग्निदूंतो अरंङ्कतः। युमायं घृतवंद्वविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नों देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुमत्तम् राज्ञे हव्यं जुहोतन। इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकुन्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जर्गतुः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। युमं भंङ्गाश्रवो गांय यो राजानपुरोध्यः। युमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजानपरोध्यः। येनापो नद्यों धन्वानि येन द्यौः पृथिवी दढा। हिरण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिरण्याक्षानंयः शुफान्। अश्वाननश्येतो दानं यमो राजाभि तिष्ठति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जगत्। यमाय सर्वमित्रस्थे यत् प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दशर्षंयः। यमं यो विंद्यात्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिंविजानते॥१२॥ त्रिकंद्रुकेभिः पतंति षडुर्वीरेक्मिद्धृहत्। गायुत्री त्रिष्टुप्छन्दा रेसि सर्वा ता यम आहिता। अहंरहर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवस्वतो न तृप्यति पश्चभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृतवादिनः। ते राजिन्नह विविच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणा इश्वापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनति॥१३॥ पृथिकृद्धों विजान्तेऽनुं वेनति॥ वैश्वान्रे हविरिदं जुंहोमि साहस्रमुत्सर् शृतधारमेतम्।

वैश्वान्रे ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमुत्सर् शृतधारमेतम्। तस्मिन्नेष पितरं पितामहं प्रपितामहं बिभर्तिपन्वमाने। द्रप्सश्चेस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमन् स्थरंन्तं द्र्प्सं जुंहोम्यन् सप्त होत्राः। इम॰ संमुद्र॰ शृतधारमुत्संव्यच्यमानं भुवनस्य मध्यें। घृतं दुहानामदितिं जनायाग्रे मा हि॰सीः पर्मे व्योमन्। अपेत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च्नूत्तेनाः। अहोभिरद्भिरक्तिभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानमस्मै। स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिर्युज्यन्तामघ्रियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषत् लाङ्गलम्। शुनं वर्त्रा बध्यन्ताः शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाची सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सवितेतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भंव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम् सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्तिं प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यंः पृथिवी १ रेतसाऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूरंयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवताः। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवतया। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

अघ्निया अंगन्म सप्त चं॥_____ उत्तें तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अह॰ रिषम्। एता स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रां युमः सादनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातर् भूमिंमेतामुरुव्यचंसं पृथिवी र सुशेवाम्। ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थैं। उष्ट्रश्रश्च पृथिवि मा विबाधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येंनं भूमि वृणु। उङ्गर्श्वमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित् उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासों मधुश्रुतो विश्वाहाँस्मै शरुणाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबत्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥ एषा तें यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम बर्हिर्देवेभ्यो जीवेन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं युमेन त्वं यम्यां संविदानः।

मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमुराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधेथां मा माता पृथिवी मही। वैवस्वत १ हि गच्छांसि यम्राज्ये विरांजिस। नुळं प्रुवमारोंहैतं नुळेनं पृथोऽन्विंहि। स त्वं नुळप्लंबो भूत्वा सन्तंरु प्रत्रोत्तंर॥१८॥ स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरूपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भेव। षड्ढोता सूर्यं ते चक्षेर्गच्छत् वातमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छु यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः शर्मु ते सुन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां मे दिशः शुग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवता। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्र्ध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥ अपूपवाँन्यृतवाईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपिर।

योनिकृतंः पथिकृतंः सपर्यत् ये देवानां घृतभांगा इह स्थ। पुषा ते यमुसादंने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। दशाँक्षरा ता रक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधंवान्मधुंमा इश्वरुरेह सींदतूत्तभ्रुवन् पृथिवीं द्यामुतोपरि। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत ये देवाना 🕏 शृतभांगाः क्षीरभांगा दिधंभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा तें यमुसादंने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। श्ताक्षरा सहस्रौक्षरायुतौक्षराऽच्युंताक्षरा ता॰ रेक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा देभन्पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥ अनंपस्फुरन्ती्रुतंर देवतंया द्वे चं॥————[७]

पृतास्ते स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रे। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनूः कांमृदुधाः करोत्। त्वामर्जुनौषंधीनां पयो ब्रह्माण् इद्विदः। तासां त्वा मध्यादादेदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाः स्तम्बमाहंरैतां प्रियतमां ममं। इमां दिशं मनुष्याणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाः स्तम्बमाहंर् रक्षंसामपंहत्ये। य पृतस्यै दिशः

फलं पुनातु॥

प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनः। दुर्भाणाः स्तम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृण ता अस्य सूर्ददोहसः। शं वातः शं हि ते घृणिः शर्मु ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रुणेन च। वरणो वार्यादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्यै निर्ऋत्यै द्वेषांच वनस्पतिः। विधृतिरिस विधारयास्मदघा द्वेषा रेसि शमि शमयास्मदघा द्वेषा रेसि यव यवयास्मदघा द्वेषा रेसि। पृथिवीं गंच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों गच्छ सुवंर्गच्छ सुवंर्गच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गंच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरींरैः। अश्मंन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परिं धाता पुंनातु॥२२॥

आ रोंह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अंनुपूर्वं यतंमाना यितृष्ट। इह त्वष्टां सुजनिमा सुरत्नों दीर्घमायुः करतु जीवसें वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथुर्तवं ऋतुभियंन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपंरो जहाँत्येवा धांतरायू ५ षि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं कूरं चकार मर्त्यः। कपिर्बभस्ति तेर्जनं पुनर्जरायु गौरिंव। अपं नः शोशुंचद्घमग्नें शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशुंचद्घं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्गाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयें। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो वहिंः सुम्पारंणो भव॥२३॥ इमे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आर्युः प्रतरां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आर्युः प्रत्रां दर्धानाः। आप्यायंमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भेवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं देधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदेः पुरूचीस्तिरो मृत्युं देद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सुर्पिषा सम्मृशन्ताम्। अनुश्रवो अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रै। यदार्श्वनं त्रैककुदं जातः हिमवंतस्परि। तेनामृतंस्य मूलेनारांतीर्जम्भयामसि। यथा त्वमुंद्भिनत्स्योंषधे पृथिव्या अधि। एविमम उद्भिन्दन्तु कीर्त्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं।

अजों ऽस्यजास्मद्घा द्वेषा १ सि युवों ऽसि युवयास्मद्घा द्वेषा १ सि॥ २४॥

भुव जम्भुयामसि त्रीणि च अपं नः शोशुंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशुंचदघम्। सुक्षेत्रिया सुंगातुया वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशुंचदघम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूरयः। अपं नः शोशुंचद्घम्। प्रयद्ग्नेः सहंस्वतो विश्वतो यन्ति सूरयंः। अपं नुः शोशुंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्र ते वयम्। अपं नः शोशुंचदघम्॥२५॥ त्व हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोशुंचदघम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशुंचदघम्। स नः सिन्धुंमिव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशुंचदघम्। आपंः प्रवणादिंव यतीरपास्मत्स्यंन्दतामघम्। अपं नः शोशुंचदघम्। उद्वनादुंदकानीवापास्मत्स्यन्दतामुघम्। अपं नः शोशुंचदघम्। आनन्दार्य प्रमोदाय पुनरागाः स्वान्गृहान्। अपं नुः शोशुंचद्घम्। न वै तत्रु प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशुंचदघम्॥२६॥

अ्घम्घं चुत्वारिं च॥ अपंश्याम युवतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्धेन या तमंसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्ट्रो। मयैतां माइस्तां भ्रियमाणा देवी सती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नो लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियेष्ठामुग्निं मधुमन्तमूर्मिणुमूर्जः सन्तं त्वा पयसोपु स॰संदेम। स॰ रय्या समु वर्चसा सर्चस्वा नः स्वस्तये। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यों घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूना इ स्वसांदित्यानां ममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनांय मागामनांगामदितिं विधष्ट। पिबंतूदकं तृणांन्यत्। ओमुत्सृजत॥२७॥

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत् पश्यंत। सौभाँग्यम्स्यै दत्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमेन्द्र मीद्वः सुपुत्रा र सुभगां कुरु। दशांस्यां पुत्राना धेहि पतिंमेकाद्शं कृधि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विद्यामि। ऋतं विदियामि। सत्यं विदियामि। तन्मामंवतु। तद्वक्तारमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥

सत्यं विद्यामि पर्शं च॥————[१]

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पश्चं॥———[२]

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधि-ज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्याचृक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सुन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विद्या सन्धिः। प्रवचन र् सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सन्धिः। प्रजननर्र सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाक्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजया पृशुभिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

स्थिराचार्यः पूर्विक्पिमित्यिष्प्रजं लेकिन॥——[३] यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतौत्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयाँ स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्ला मे मधुमत्तमा। कर्णाभ्यां भूरि विश्वंवम्। ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधयापिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥ कुर्वाणा चीरमात्मनंः। वासा रसि मम् गावश्च। अन्नपाने च सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोमशां पशुभिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शर्मायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥ यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग प्रविंशानि स्वाहाँ। सं मां भग प्रविंश स्वाहाँ। तस्मिन्त्सहस्रंशाखे। निर्भगाहं त्वयिं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धातरायंन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशों ऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

भूर्भुवः सुविरिति वा पृतास्तिस्रो व्याहृतयः। तासामहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुविरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायुः। सुवरित्यांदित्यः।

असौ लोको यजू ५ षि वेद द्वे चं॥—

मह् इतिं चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुवरिति यजू १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुवरितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा एताश्चंतस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहंतयः। ता यो वेदं। स वेद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

स य एषों उन्तर्हंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः। अमृंतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तर्न इवाव-

लम्बंते। सेंन्द्रयोनिः। यत्रासौ केंशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इति वायौ॥१३॥ सुवरित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पतिम्। वाक्पंतिश्चक्षंष्यतिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपतिः। एतत्ततों भवति। आका्शशंरीरं ब्रह्मं। स्त्यात्मंप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धमृमृतम्। इति प्राचीनयोग्योपाँस्व॥१४॥

व्ययव्मत्मेकं चा
पृथिव्यंन्तिरक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्धाः। अग्निर्वायुरित्यश्चन्द्रमा नक्षत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश
आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान
उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्कक्। चर्म मा॰्सइ
स्नावास्थि मुजा। एतदंधि विधायर्षिरवोंचत्। पाङ्कं वा इदः
सर्वम्ं। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्मृणोतीति॥१५॥

ओमित् ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं शुस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिग्रं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्रिहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवक्ष्यन्नांह

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च।

ब्रह्मोपाँप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपाँप्रोति॥१६॥

तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च पद्गा——[१] अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुवचनम्॥१८॥

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्ये न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदित्व्यम्॥१९॥ देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माक १ सुचंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्मो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिंया देयम्। हिंया देयम्। भिंया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्म्रिशनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्म्र्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यात्र प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्त्सप्त चं॥———[११]

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावांदिषम्। ऋतमंवादिषम्। सृत्यमंवादिषम्। तन्मामावीत्। तद्वक्तारमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

स्त्यमंबादिषुं पश्चं च॥——[१२]

॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन्। सौंऽश्रुते सर्वान्कामान्त्सह। ब्रह्मणा विपश्चितेति। तस्माद्वा पृतस्मादात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापंः। अन्द्वः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्ं। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥१॥ अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी श्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैनदिपं यन्त्यन्ततः। अन्न ५ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वोषधम्चयते। सर्वं वै तेऽन्नमाप्रुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अनु हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वीष्धमुंच्यते। अन्नाद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मौ प्राणुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पृक्षः। अपान उत्तरः पृक्षः। आकाश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मुनुष्याः पुशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्युः। तस्मौत्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त आयुंर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः। तस्मात्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा।

यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यजुरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥३॥ यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रौप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रंद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पक्षः। सत्यमुत्तंरः पक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरे पाप्नंनो हित्वा। सर्वान्कामान्त्समश्रुंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञान्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्द्मयः। तेनैष

पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्।

अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पक्षः। प्रमोद उत्तरः पक्षः। आनेन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छे प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥५॥ असंन्नेव सं भवति। असद्भह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यंः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छती(३)॥ आहों विद्वानमुँ ह्लोकं प्रेत्यं। कश्चित्समंश्जुता(३) उ। सोऽकामयत। बहु स्यां

प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुम्बा। इद॰ सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तत्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निलयंनं चार्निलयनं च। विज्ञानं चार्विज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यमभवत्। यदिंदं किं च। तत्सत्यमिंत्याचक्षते। तदप्येष श्लोंको भवति॥६॥ असद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत।

तदात्मान इस्वयंमकुरुत। तस्मात्तत्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वै तत्सुकृतम्। रंसो वै सः। रसः ह्येवायं लब्बाऽऽनंन्दी भवति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवैष एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते। अथ तस्य भंयं भवति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोको भवति॥७॥ भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादग्नि-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पश्चम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा ५सा भवति। युवा स्यात्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दृढिष्ठों बलिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनन्दः। ते ये शतं मानुषां आनन्दाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एको देवगन्धर्वाणांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एकः पितृणां चिरलोकलोकार्नामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकार्महतस्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दाः। स एक आजानजानां देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानांमानन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः। स एको देवानामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं देवानामानन्दाः। स एक इन्द्रंस्यानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमिन्द्रंस्यानन्दाः। स एको बृहस्पतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं बृहस्पर्तरानन्दाः। स एकः प्रजापर्तरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं प्रजापतेरानन्दाः। स एको ब्रह्मणं आनन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोंको भवति॥८॥ यतो वाचो निवर्तन्ते। अप्रौप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुर्तश्चनेति। एत ए ह वार्वं न तपति। किमह सार्धु नाकरवम्। किमहं पापमकर्रवमिति। स य

एवं विद्वानेते आत्मान इस्पृण्ते। उभे ह्येवैष् एते आत्मान इस्पृण्ते। य एवं वेदं। इत्युपिनषंत्॥ ९॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥ नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां एतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाच्मितिं। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतानि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुम्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाब्धेव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्युभि संविश्नतीति। तद्विज्ञायं। पुनरेव वर्रणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुम्वा॥२॥ प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि

जायंन्ते। प्राणेन् जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तिह्वज्ञायं। पुनरेव वर्णणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्त्रस्वा॥३॥ मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्मेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिह्वज्ञायं। पुनरेव वर्णणं पितरमुपंससार।

तपंस्तृस्वा॥४॥ विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञानाुस्येव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानेन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं

अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तर होवाच। तपंसा ब्रह्म

विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स

प्रयंन्त्यभि संविंश्नितीति। तद्विज्ञाये। पुनेरेव वर्रणं पितंरुमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुह्वा॥५॥

आनन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दाद्धेव खिल्वमानि भूतानि जायंन्ते। आनन्देन जातानि जीवंन्ति। आनन्दं प्रयंन्त्यिभ संविश्वन्तीति। सेषा भाग्वी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योमन् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्रशुभिर्ब्रह्मवर्चसेने। महान्कीर्त्या॥६॥

अत्रं न निंन्द्यात्। तद्वृतम्। प्राणो वा अन्नम्ं। शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्शुभिर्व्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिंचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिंरन्नादम्। अप्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अर्न्न बुहु कुंर्वीत। तद्भृतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशौँऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृंथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवित। महान्भविति प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥ न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंन्नं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वे मुखतौँ ऽन्न १ राद्धम्। मुखतो ऽस्मा अन्न १ राध्यते। एतद्वै मध्यतो ऽन्न राद्धम्। मध्यतो ऽस्मा अन्न राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्न राद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्न राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इंति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति

कर्मित हुस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इति पशुषु। ज्योतिरिति नक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इत्युपस्थे। सर्वमित्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्मवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानवान्भवति। तन्नम इत्युपासीत। नम्यन्ते ऽस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युपासीत। ब्रह्मंवान्भवति। तद्ब्रह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ लोकान्कामान्नी कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतत्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोकुकृद्हङ् श्लोकुकृद्हङ् श्लोकुकृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तुमा(३) द्यि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभवाम्। सुवृर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युपनिषंत्॥१०॥ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥द्शमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भेस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंहतो महीयान्। शुक्रेण ज्योती ५ षि समनुप्रविष्टः प्रजापितिश्चरति गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तदक्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवंं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेर्जसा भार्जसा च। यमन्तः संमुद्रे कवयो वयंन्ति यदक्षरे परमे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेन जीवान् व्यसंसर्ज भूम्यांम्। यदोषंधीभिः पुरुषांन्पशू ॥ विवेश भूतानि चराचुराणि॥ अतः परं नान्यदणीयसं १ हि परौत्परं यन्महंतो महान्तम्। यदेकमव्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं तमंसः परंस्तात्॥१॥ तदेवर्तं तदुं सत्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायंमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तत्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुऋम्मृतं तद्वह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा जिज्ञरे विद्युतः पुरुषादिधे। कुला मुंहूर्ताः काष्ठौश्वाहोरात्राश्चे सर्वेशः॥ अर्द्धमासा मासां ऋतवेः संवत्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपेः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवंः॥ नैनंमूर्धं न तिर्यश्रं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येंशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशं:॥२॥ न सन्दर्शे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यति कश्चनैनम्। हदा मंनीषा मनंसाऽभिक्नुंप्तो य एनं विदुरमृंतास्ते भवन्ति॥ अद्भः सम्भूतो हिरण्यगुर्भ इत्युष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गखास्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नर्मति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवंनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निद सं च विचैक सस ओतः

प्रोतंश्च विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोंचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थ्वों नाम् निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिंता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जनिता स विधाता धामांनि वेद भुवनानि विश्वा। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामान्यभ्यैरंयन्त।

परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासुं। प्रीत्यं लोकान्प्रीत्यं भूतानिं प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यऽऽत्मनऽऽत्मानंमभिसम्बंभूव। सदंसस्पतिमद्भुतं

प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽपुघ्रन्निर्ऋतिं ममं॥४॥ पुशू श्र्य मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हिश्सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगंत्। अविंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिंपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः ॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः

प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें चक्रतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयात्। तत्पुरुषाय विद्महें महासेनायं धीमहि। तन्नंः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विदाहे सुवर्णपक्षायं धीमहि। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विदाहें हिरण्यगर्भायं धीमहि। तन्नौं ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्महें वासुदेवायं धीमहि। तन्नों विष्णुः प्रचोदयांत्। वज्रनखायं विद्महं तीक्ष्णदङ्ष्ट्रायं धीमहि॥६॥ तन्नों नारसि १ हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्महें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयात्। कात्यायनायं विद्महं कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूला शताङ्करा। सर्वर् हरतुं मे पापं

दूर्वा दुःस्वप्ननाशंनी। काण्डांत्काण्डात् प्रुरोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

एवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां वयम्। अश्वेकान्ते रथकान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दृष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमन्त्रिता। मृत्तिके देहिं मे पृष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिके प्रतिष्ठिते सर्वं तन्मे निंर्णुद् मृत्तिके। तयां हतेनं पापेन् गच्छामि पंरमां गतिम्।

॥ शत्रुजयमन्त्राः॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभंयं कृधि। मधंवन्छ्ग्धि तव तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहा स्वस्तिदा विशस्पतिंर्वृत्रहा विमृधों वशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु। आपौन्तमन्युस्तृपलंप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरंमा । ऋजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुची वेन आवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमसंतश्च विवंः। स्योना पृथिवि भवां ऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्मं सप्रथाः। गुन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुंष्टां करीषिणींम्। ईश्वरी ५ सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भुजतु। अलक्ष्मीमें न्श्यतु। विष्णुंमुखा वै देवाश्छन्दोभिरिमाँ श्लोकानंनप-ज्य्यम्भ्यंजयन्। मुहा इन्द्रो वज्रबाहुः षोडुशी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवंन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशमलं कुसीदं तस्मिन्त्सीदतु यों ऽस्मान् द्वेष्टिं। चरेणं पवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रेण शुद्धेनं पूता अतिं पाप्मानमरांतिं

भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

वर्रुणाय नमो वारुण्यै नमोऽन्धः॥१२॥

तरेम। सुजोषां इन्द्र सर्गणो मुरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर

विद्वान्। जुिह शत्रू रप मृधों नुद्स्वाथाभेयं कृणुिह

विश्वतों नः। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में

भूयासुर्यों ऽस्मान् द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो

महरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रस्स्तस्यं भाजयते ह नंः। उश्तीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपो जनयंथा च नः। ॥अधमर्षणसूक्तम्॥ हिरंण्यशृङ्गं वरुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। यन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यंश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वरुणो बृह्स्पतिः सिवता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयंऽप्सुमते नम् इन्द्रांय नमो

यदपां क्रूरं यदमिध्यं यदशान्तं तदपंगच्छतात्।

अत्याशुनादतीपानाद्यच उग्रात् प्रतिग्रहात्। तन्नो वर्रणो

राजा पाणिनां ह्यवमर्शंतु। सोंऽहमंपापो विरजो निर्मुक्तो

मुंक्तिकिल्बिषः। नार्कस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्मंसलोकताम्। यश्चाप्सु वरुणः स पुनात्वेघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोम र सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वृधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये श्रुणुह्या सुषोमंया। ऋतं चं सत्यं चाभींद्धात्तपुसोऽध्यंजायत। ततो रात्रिंरजायत ततः समुद्रो अंर्णुवः॥१३॥ समुद्रादेर्ण्वादिधे संवत्सरो अंजायत। अहोरात्राणि विदधिक्षंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यंथापूर्वमंकल्पयत्। दिवंं च पृथिवीं चान्तरिंक्षमथो सुर्वः। यत्पृथिव्याः रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमा इस्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षुणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य

द्यावांपृथिव्योर्हिरण्मय सङ्श्रितर स्वंः॥१४॥ स नः सुवः सःशिंशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिरहमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रहाहमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि

गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्।

स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीणीं स्तेनो भ्रूंणहा गुंरुत्त्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्मौत्पापात् प्रमुच्यते। रजो भूमिस्त्वमाः रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आक्रौन्त्समुद्रः प्रथमे विधमा जनयंन्प्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्वित्रे अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेंदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निजंहाति वेदंः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामुग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कंर्मफलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपंद्ये सुतरंसि तरसे नमंः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्त्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बंहुला नं उुवीं भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वानि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौं ऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजित् सहंमानम् ग्रिमुग्र ह्वेम पर्मात्स्यस्थांत्। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा क्षामद्वेवो अति दुरिताऽत्यग्निः।

प्रत्नोषिं कुमीड्यों अध्वरेषुं सुनाच्च होता नव्यंश्च सित्सं। स्वाश्चांग्ने तुन्वं पिप्रयंस्वास्मर्भ्यं च सौभंगुमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुजो निषिक्तं तवेन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठम्भि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमग्नये पृथिव्ये स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवरत्रंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवरत्रं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरत्रुमोम्॥१७॥

भूरग्रयें पृथिव्यै स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रग्न ओम्॥१८॥

भूरग्नयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाह्य भुवों वायवें चान्तरिक्षाय

-[り]

च महते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं महते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं महते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवर्महरोम्॥१९॥

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतक्रेतो स्वाहा॥२०॥

पाहि नो अग्न एकंया। पाह्युंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्च तसृभिवसो स्वाहा॥२१॥

॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृषभो विश्वरूपश्छन्दोंभ्यश्छन्दा इंस्याविवेशं। सता १ शिक्यः पुरोवाचोपनिषदिन्द्रौं ज्येष्ठ इंन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

-[८]

-[88]

कर्णयोः श्रुतं मा च्यों बुं ममामुष्य ओम्॥२३॥
———[९]
॥तपः प्रशंसा॥

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं

ऋतं तपंः सृत्यं तपंः श्रुतं तपंः शान्तं तपो दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवृष्ठिह्यैतदुपौस्यैतत्तपंः॥२४॥

॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पृष्पितस्य दूराद्गन्धो वांत्येवं पुण्यंस्य कुर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कुर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिष्यामि कुर्तं पंतिष्यामीत्येवम्नृतांदात्मानं जुगुप्सेत्॥२५॥

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्मह्तो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादौन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवन्ति तस्मौत्सप्तार्चिषंः समिधंः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चर्रन्ति प्राणा गुहाशयां निहिताः सप्त सप्त। अतः समुद्रा गिरयंश्च सर्वेऽस्मात्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैंष भूतस्तिंष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पदवीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्रांणा इ स्वधितिर्वनांना इ सोर्मः पवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्ककृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्ती ५ सर्रूपाम्। अजो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहाँत्येनां भुक्तभोगामजौऽन्यः॥२६॥ हु सः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्ष्मसद्धोतां वेदिषदितिंथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरुसदंतुसद्योमसद्जा गोजा ऋतुजा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। घृतं मिंमिक्षिरे घृतमंस्य योनिंघृते श्रितो घृतमुंवस्य धामे। अनुष्वधमावेह मादयंस्व स्वाहांकृतं

वृषभ विक्षे हव्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधूमा ५ उदांरदुपा ५शुना सममृतत्वमानट्। घृतस्य नाम गृह्यं यदस्ति जिह्वा देवानांममृतंस्य नाभिः। वयं नाम प्रब्नंवामा घृतेनास्मिन् यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृणवच्छस्यमानं चतुः शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चृत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे

शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्या ५ आविवेश॥२७॥ त्रिधां हितं पुणिभिंगुंह्यमांनं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक सूर्य एकं जजान वेनादेक स्वधया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो मृहर्षिः। हिर्ण्युगुर्भं पंश्यत जायंमानः स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्तु। यस्मात्परं नापंरमस्ति

किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायौँ ऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्वमानश्ः। परेण नाकं निहितं गुहायां विभाजते यद्यतयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञान्सुनिश्चितार्थाः सन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परौन्तकाले परोमृतात्परिमुच्यन्ति सर्वे। दहं विपापं परमें श्मभूतं यत्पुंण्डरीकं पुरमध्यस इस्थम्। तत्रापि दहं गगनं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तं च प्रतिष्ठिंतः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः परंः स महेश्वरः॥२८॥

१५]

॥ नारायणसूक्तम्॥

स्ह्स्शीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायंणं देवम्क्षरं पर्मं पदम्। विश्वतः पर्गान्नित्यं विश्वं नारायण् हिरम्। विश्वंमेवदं पुरुष्ट्तिद्वश्वमुपंजीवति। पतिं विश्वंस्यऽऽत्मेश्वंर्र् शाश्वंतर शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं परायणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। यचं किश्विज्ञंगत्स्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तंर्बृहिश्चं तत्स्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥ अनंन्तमव्यंयं क्विर संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पद्मकोश

प्रंतीकाश्र हृदयं चाप्यधोमुंखम्। अधो निष्ठा वितस्त्यान्ते नाभ्यामुंपरि तिष्ठंति। ज्वालमालाकुंलं भाती विश्वस्यऽऽयत्नं मंहत्। सन्तंतः शिलाभिस्तु-लम्बत्याकोश्यसिन्नंभम्। तस्यान्तं सुष्टिरः सूक्ष्मं तस्मिन्त्सर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमजरः कविः। तिर्यगूर्ध्वमंधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापौदतल-मस्तंकः। तस्य मध्ये वह्निंशिखा अणीयौर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठेखेव भास्वरा। नीवारशूकेवत्तन्वी पीता भाँस्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षंरः परमः स्वराट्॥३०॥ नारायुणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारि च॥--------[१३] ॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्दचा मण्डल स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिदीप्यते तानि सामानि स साम्रां मण्डल स साम्नां लोको ऽथ य एष एतस्मिन्मण्डले ऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजू ५ षि स यजुंषा मण्डल ५ स यजुंषां लोकः सैषा त्रय्येवं विद्या तंपति य एषों उन्तरांदित्ये हिरण्मयः पुरुषः॥३१॥ **-**[88]

——[१५]

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्श्रक्षः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्यः सत्यो मित्रो वायुराकाशः प्राणो लोकपालः कः किं कं तत्सत्यमन्नंममृतो जीवो विश्वः कत्मः स्वंयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपतिर्ब्रह्मणः सायुंज्यः सलोकतामाप्रोत्येतासामेव देवतानाः सायुंज्यः समानलोकतामाप्रोति य एवं वेदेत्युपनिषत्॥३२॥

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय् नमः। ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः। हिरण्याय नमः। हिरण्यलिङ्गाय नमः। सुवर्णाय नमः। सुवर्णलिङ्गाय नमः। दिव्याय नमः। दिव्यलिङ्गाय नमः। भवाय नमः। भवलिङ्गाय नमः। शर्वाय नमः। शर्वलिङ्गाय नमः। शिवाय नमः। शिवलिङ्गाय नमः। ज्वलाय नमः। ज्वललिङ्गाय नमः। आत्माय नमः। आत्मलिङ्गाय नमः। परमाय नमः। परमलिङ्गाय नमः। एतत्सोमस्यं सूर्यस्य सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्नं पवित्रम्॥३३॥

-[१६]

<u>----</u>[१७]

-[१८]

-[१९]

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

सुद्योजातं प्रपद्यामि सुद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नाति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

॥ उत्तरवक्र-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमेः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥३५॥

॥दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरेंभ्योऽथ घोरेंभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वृशर्वेभयो नर्मस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुषाय विद्महें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः

प्रचोदयाँत्॥३७॥

·[२०]

-[२१]

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो-ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

॥ नमस्कारमन्त्राः ॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतये-ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

नमो नर्मः। विश्वं भूतं भुवंनं चित्रं बंहुधा जातं जायंमानं च यत्। सर्वो ह्यंष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४१॥

-[२४]

——[२६]

-[२७]

-[२८]

कद्रुद्राय प्रचेतसे मीढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम शन्तंम १ हृदे। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥

॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥

यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याहंतय-स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥

कृणुष्व पाज इति पश्चं॥४४॥

॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्धर्वा मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषा ५ सर्वभूतानां

माता मेदिनी महता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युवी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतुमा का या सा सत्येत्यमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥

॥सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद॰ सर्वं विश्वां भूतान्यापंः प्राणा वा आपंः

प्शव आपोऽन्नमापोऽमृंतमापंः सम्राडापों विराडापंः स्वराडापृश्छन्दा इस्यापो ज्योती इष्यापो यजू इष्यापंः सर्वापाः सर्वा देवता अगारे भर्मतः सर्वाण ओम्॥४६॥

स्त्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भवः सुव्राप ओम्॥४६॥

॥सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मणस्पित् ब्रह्मणस्पित् ब्रह्मणस्पित् व्रह्मणस्पित् प्रति पुनातु माम्। यदुच्छिष्ट् मभौज्यं यद्वां दुश्चितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शिश्ञा। अह्स्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४८॥

------[३१] सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृते्भ्यः। पापेभ्यों

----[३३]

रक्षुन्ताम्। यद्रात्रिया पापमकारिषम्। मनसा वार्चा हस्ताभ्याम्। पद्भामुदरेण शि्षञा। रात्रिस्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयो्नौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥४९॥

[३२]

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रांत्कुरुंते पापं तदह्रांत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियांत्कुरुंते पापं तद्रात्रियांत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे महादेवि सन्ध्याविद्ये स्रस्वंति॥५१॥

[३४]

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वंमसि सर्वायुरभिभूरों

——[३५]

——[३६]

गायत्रीमावाहयामि सावित्रीमावाहयामि सरस्वतीमावाह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्ख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्भक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओ॰ सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओ॰ सत्यम्। ओं तत्संवितुर्वरेंण्यं भर्गों देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

॥गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रेह्मवर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रेह्मलोकम्॥५३॥

-[३७]

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५४॥

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः॥

ब्रह्ममेतु माम्। मधुमेतु माम्। ब्रह्ममेव मधुमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजावत्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्तें सोम प्राणा इस्तां जुंहोमि। त्रिस्पर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्रांह्मणास्त्रिसुंपणं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनन्ति। ओम्॥५५॥

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सवितः प्रजावंत्सावीः सौभंगम्। परां दुष्वप्नियं सुव। विश्वांनि देव सवितर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींर्नः

स्नत्वोषंधीः। मधु नक्तंमृतोषि मधुंमृत्पार्थिव् रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमान्नो वनस्पित्मधुंमा अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठेन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५६॥

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पदवीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणाः स्वधितिर्वनांनाः सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। ह १ सः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्षसद्धोतां वेदिषदतिंथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंतसद्योमसदजा गोजा ऋंतजा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा समित्स्रंवन्ति स्रितो न घेनाः। अन्तर्ह्दा मनंसा पूयमानाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययों वेत्सो मध्यं आसाम्। तस्मिन्त्सुपूर्णो मंधुकृत्कुलायी भजन्नास्ते मधुदेवताभ्यः। तस्यांसते हरंयः सप्ततीरें स्वधां दुहांना अमृतंस्य धारांम्। य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हत्यां वा

----[80]

——[४२]

पृते घ्रंन्ति। ये ब्राँह्मणास्त्रिस्ंपर्णं पठंन्ति। ते सोम्ं प्राप्नुंबन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५७॥

॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँद्विश्वाची भुद्रा सुंमन्स्यमांना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिभंवित देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविणो न मेधे॥५८॥

मिथां म् इन्द्रीं ददातु मेथां देवी सरंस्वती। मेथां में अश्विनांबुभावार्धत्तां पुष्केरस्रजा। अप्सरासुं च या मेथा गंन्थवेंषुं च यन्मनंः। देवीं मेथा सरंस्वती सा मां मेथा सुरभिर्जुषता्र् स्वाहां॥५९॥

आ मां मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वमाना सा मां मेधा सुप्रतींका

-[88]

जुषन्ताम्॥६०॥

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेथां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेथां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतंं न आगंन्वैवस्वतो नो अभेयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनंः शीयता र्यिः स चं तान्नः शचीपतिः॥६२॥

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्रायतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा

जुरामंशीमहि॥६४॥

अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्रः। प्रत्यौहताम्श्विनां मृत्युमस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥ ————[४८]

हरिष्ट्र हरेन्त्मनुंयन्ति देवा विश्वस्येशांनं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागादयंनं मा विवंधीर्विक्रंमस्व॥६६॥———[४९] शल्कैरग्निमिंन्यान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौंर्लोकयोर्-

ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीर्मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम॥६८॥

मा नों महान्तंमुत मा नों अर्भकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तनुवों

-[५३]

-[५૪]

-[५५]

रुद्र रीरिषः॥६९॥

मा नंस्तोके तनये मा न आयुंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नों रुद्र भामितोऽवंधीर्हविष्मंन्तो नमंसा

विधेम ते॥७०॥

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्॥ ७१॥

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः॥७२॥

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुंष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमीव

-[५७]

बन्धंनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्॥७३॥

ये ते सहस्रमयुतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् युज्ञस्ये

मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

[4८]

॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। मृनुष्यंकृत्स्यैनंसो-ऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। पितृकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-अन्यकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-ऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। यिद्वा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। यत्स्वपन्तंश्च जाग्रंत्श्चैनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। यत्स्वुपन्तंश्च जाग्रंत्श्चैनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वारस्थाविद्वारस्थिनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वारस्थाविद्वारस्थिनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमिस्

-[५९]

-[६०]

-[६२]

स्वाहा॥७६॥

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दंच्छुनायते तस्मिन्तदेनों वसवो निधेतन स्वाहाँ॥७७॥

॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीं त्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥

[६१]

मन्युरकार्षीं न्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसार सपिष्टान् गन्धार मम चित्ते रमेन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपानर सर्वेषाइ श्रियै स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पृष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्दर्दातु स्वाहा॥८०॥

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्दुरितं मंयि स्वाहा। चोर्स्यात्रं नंवश्राद्धं ब्रह्महा गुंरुत्त्पगः। गोस्तेय सुंरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति शमयन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्ददांतु स्वाहा॥८१॥

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो-बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। त्वक्रममारसरुधिरमेदोमञ्जास्नायवो- ऽस्थीनि में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरज्ञां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्गशिश्नोपस्थपायवो में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरज्ञां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापयिता में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरज्ञां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ॥८२॥

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहङ्कारैज्यीतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास स्वाहां। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहां। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पिंपासाय स्वाहाँ। विविंट्यै स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कृषोंत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठाम्लक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास स्वाहां॥८३॥

-[६६]

॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुविक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतिक्षतंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अज्ञ्यः स्वाहाँ। ओष्धिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेँभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामांय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेर्जित जगंति यच चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्ये स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। पृथिव्ये स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षेत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ।

-[ミゅ]

ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमों रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्येभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ।
यथा कूपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा में अस्तु
धान्यः सहस्रंधारमक्षितम्। धनंधान्यै स्वाहाँ। ये भूताः
प्रचरंन्ति दिवानक्तं बिलंमिच्छन्तो वितुदंस्य प्रेष्याः।
तेभ्यो बिलं पृष्टिकामो हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिंपतिर्दधातु

स्वाहाँ॥८७॥

ओं तद्घृह्म। ओं तद्घृयुः। ओं तद्गृत्मा। ओं तत्सृत्यम्। ओं तत्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्भारस्त्वमिन्द्रस्त्वः रुद्रस्त्वं

विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः ॥

श्रद्धार्यां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धार्यामपाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायां व्याने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धार्यामुदाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धाया ५ समाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृतत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। प्राणाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायाँ व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। व्यानाय स्वाहां॥ श्रद्धायांमुदाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रद्धायार्थ समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। समानाय स्वाहाँ॥ ब्रह्मंणि म आत्माऽमृंतृत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥ -[६९]

॥भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निविंश्यामृत १ हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व।

----[७०]

-----[७१]

—[७२]

श्रृद्धायांमपाने निर्विश्यामृतर् हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां व्याने निर्विश्यामृतर् हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायांमुदाने निर्विश्यामृतर् हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायार् समाने निर्विश्यामृतर् हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चे समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणाति विश्वभुक्॥॥९१॥

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः ॥

वाङ्कं आसन्। नुसोः प्राणः। अक्ष्योश्वर्धुः। कर्णयोः श्रोत्रम्। बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सुह नर्मस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः॥९२॥

-[७३]

<u> —</u>[७४]

-[७५]

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवाद्मन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-युस्व॥९३॥

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमृद्धस्त्वमश्मंनस्परि। त्वं वनैभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिं:॥९५॥

वनेभ्यस्त्वमोषधीभ्यस्त्व नृणा नृपते जायसे शुचिः॥९५॥
——[७६]

॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवनें में सन्तिष्ठस्व स्योनेनं में सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं में सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं में सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम उपं ते नम उपं ते नमः॥९६॥

[*v v*

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सत्यं परं परर्ं सत्यर सत्येन न सुवर्गाल्लोकाच्यंवन्ते कदाचन सता १ हि सत्यं तस्मौत्सत्ये रमन्ते । तप इति तपो नानशंनात्परं यद्धि परं तपस्तद्दुर्द्धर्षं तद्दुराधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते ॰ दम् इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते ॰ शम इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमं रमन्ते ॰ दानमिति सर्वाणि भूतानि प्रशर्मन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्मौद्दाने रमन्ते 。 धर्म इति धर्मेण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्मौद्धर्मे रंमन्ते 。 प्रजन इति भूया रंसुस्तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजनने रमन्तेऽग्नय ॰ इत्याह तस्माद्ग्रय आधातव्या अग्निहोत्रमित्यांह तस्मादग्निहोत्रे रंमन्ते ॰ यज्ञ इतिं यज्ञो हि देवास्तस्माँ चज्ञे रंमन्ते ॰

-----[७८]

मान्समितिं विद्वाश्सस्तस्मांद्विद्वाश्सं एव मान्से रंमन्ते व्यास इतिं ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि पराश्सि न्यास एवात्यंरेचयुद्य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥९७॥

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हारुंणिः सुपर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भेगवन्तः परमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येनं वायुरावाति सत्येनांऽऽदित्यो रोचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौत्सत्यं पेरमं वदंन्ति 。 तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दं तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारांतीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः परमं वदंन्ति ॰ दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवेरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमः परमं वदन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमः परमं वदन्ति ॰ दानं यज्ञानां वर्रूथं दक्षिणा लोके दातार ५

सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भेवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं पेरमं वर्दन्ति ॰ धर्मो विश्वंस्य जर्गतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसपिन्तिं धर्मेणं पापमंपनुदंति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पंरमं वदेन्ति ॰ प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायां स्तुन्तुं तन्वानः पितृणामंनृणो भवंति तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं पर्मं वदेन्त्यग्नयो वै त्रयी विद्या ० देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रंथन्तरमन्वाहार्यपर्चनुं यर्जुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादुग्नीन्पर्मं वदन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृंतिः स्विष्ट सुहुतं यंज्ञऋतूनां प्रायंण सुव्गस्यं लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पर्मं वदन्ति । यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवंं गता यज्ञेनासुंरानपांनुदन्त यज्ञेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँ छज्ञं पंरमं वर्दन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनंसा साधु पंश्यति मानुसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त मानुसे सुवै प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानुसं पेरुमं वदेन्ति ॰ न्यास इत्याहुंर्मनीषिणों ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भुः

प्रजापंतिः संवत्सर इति संवत्सरोऽसावांदित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा ॰ याभिंरादित्यस्तपंति रश्मिभस्ताभिः पर्जन्यों वर्षति पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मंनीषया मनो मनसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार्ड् स्मारंण विज्ञानं विज्ञानंनात्मानं वेदयति तस्मोदन्नं ददन्त्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भेवन्ति ० भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन सर्वमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्वमिदं जगत्स च भूत र स भव्यं जिज्ञासक्रुप्त ऋतजा रियष्ठा अद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनंसा हदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरुण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता 。 ब्रह्मन् त्वमिसं विश्वधृत्तें जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृंहीतोऽसि ब्रह्मणें त्वा ज महस् ओमित्यात्मानं युञ्जीतैतद्वै मंहोपनिषंदं देवानां गुह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्मां द्वृह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९८॥

9 જ]

॥ ज्ञानयज्ञः॥

तस्यैवं विदुषों युज्ञस्याऽऽत्मा यजमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि बुर्हिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम आज्यं मन्युः पशुस्तपोऽग्निर्दर्मः शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा ॰ श्रोत्रंमग्नीद्यावद्धियंते सा दीक्षा यदश्जांति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपुसदो यत्स् अरंत्युप्विशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवग्यों यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याह्रंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जहोति यत्सायं प्रातरंत्ति तत्सिमधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अंहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्द्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवत्सराश्चं परिवत्सराश्च तेऽहंर्गणाः संववेदसं वा 。 पृतत्स्त्रं यन्मरंणं तदंवभृथं पृतद्वै जंरामर्यमग्निहोत्रश् स्त्रं य एवं विद्वानुंद्गयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गृत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छुत्यथ् व्यो दक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गृत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्यश् सलोकतांमाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौमंहिमानौ ब्राह्मणो विद्वान्भिजंयति तस्माद्वह्मणो महिमानंमाप्रोति तस्माद्वह्मणो महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥

ॐ सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ हरिः ओम्॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमानमुपंक्कृप्तं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयत्सम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्त्सम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजस्वानातपृङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचंमानः शोभनः शोभमानः कल्याणंः। दर्शां दृष्टा दंर्श्वता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽन्नदो मोदंः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्त्संवेशंनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवंन्य्र-भवंन्त्सम्भवन्त्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुत् स० स्तुतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः सिमेद्धम्। अरुणं भानुमन्मरींचिमदभितपत्तपंस्वत्। स्विता प्रंसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंश्वित्ता तपंन्वितपंन्त्सन्तपन्। रोचनो रोचंमानः शुम्भूः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रस्ता सूयमांनाऽभिषूयमांणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदंः प्रमोदः। आसादयंन्निषा-दयैन्त्स १ सार्दनः स १ संन्नः स्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भ्वंः। पवित्रं पवियष्यन्पूतो मेध्यंः। यशो यशस्वानायुरमृतः। जीवो जीविष्यन्त्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्त्सहीयानोजंस्वान्त्सहंमानः। जयंत्रभिजयंन्त्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोर्दः प्रमोदः॥३॥ अरुणों ऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वंमानोऽन्नंवात्रसंवानिरांवान्। सर्वौष्धः संम्भरो महंस्वान्। पुजत्का जोंवत्काः। क्षुष्ठकाः शिंपिविष्टकाः। स्रिस्राः सुशेरवः। अजिरासों गमिष्णवंः। इदानीं तदानींमेतर्हिं क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवंन्नतिद्रवन्। त्वर इस्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्जवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिंरात्रश्चंतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्यं ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवत्सरो महान्कः॥४॥

भूरिग्नं चं पृथिवीं च मां चं। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद। भवों वायुं चान्तिरक्षं च मां चं। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद। स्वंरािद्तयं च दिवं च मां चं। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद। भूर्भुवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद॥ प्रा

त्वमेव त्वां वैत्थ् योंऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाईश्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूंनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गंरस-श्चिन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूंरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाईश्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽतिं च येनाऽऽयुरावृंक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यददावुदेतिं। तपंसो जातमिनंभृष्टमोर्जः। तत्ते

ज्योतिंरिष्टके। तेनं मे तपा तेनं मे ज्वला तेनं मे दीदिहि। यावंद्देवाः। याव्दसांति सूर्यः। यावंदुतापि ब्रह्मं॥६॥

संवत्सरोंऽसि परिवत्सरोंऽसि। इदावत्सरोंऽसीद्वत्सरोंऽसि। इद्वत्सरोंऽसि वत्सरोंऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः।
ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरद्त्तरः पृक्षः।
हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्तयः। अपूरपृक्षाः पुरीषम्॥७॥
अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋष्भोंऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यां दिशि
महीयंसे। ततों नो मह आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश्

आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृण। अचित्त्या चितिमापृण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्त्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समेच। रात्र्या प्रसारय। अहा समेच। काम् प्रसारय। काम् समेच॥९॥

भूर्भुवः स्वंः। ओजो बलम्ं। ब्रह्मं क्षुत्रम्। यशों महत्। सृत्यं तपो नामं। रूपमृग्तम्ं। चक्षुः श्रोत्रम्ं। मन् आयुंः। विश्वं यशों महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजंमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं ददंदभ्यावंवृत्स्व॥१०॥

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिंपतये स्वाहाँ। दिवां पतंये स्वाहाऽ १ हस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ ज्योतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्राज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहा सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। स्र सर्पाय स्वाहां कल्याणांय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्थों अर्षित। अहिंर्ह जीणांमितिंसपिति त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसरृद्धृषा हिरिः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिंमृत्यवे त्वा। अपंमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शप्यं जिह। अधां नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणम्॥१३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यायं हन्तेवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवयजामहे। भृक्षाःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुमतः। उपहूतस्योपहूतो भक्षयामि। मृन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मनंः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्घृदंये। हृदंयं मिये। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। वायुर्मे प्राणे श्रितः॥१६॥ प्राणो हृदेये। हृदेयं मिये। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदये। हृदयं मियं। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनसि श्रितः॥१७॥ मनो हृदये। हृदयं मिये। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रे श्रिताः। श्रोत्र इद्ये। हृद्यं मिये। अहम्मृते अमृत् ब्रह्मणि। आपों मे रेतंसि श्रिताः॥१८॥ रेतो हृदये। हृदयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर हदंये। हृदंयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। ओषधिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥ लोमानि हृदये। हृदयं मिये। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रो

सुहस्तः सुवासाः। शूषो नामास्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं

मूर्धा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ईशांनो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं

मे बलैं श्रितः। बल १ हृदये। हृदयं मिये। अहममृतें। अमृतं

ब्रह्मणि। पर्जन्यों मे मूर्घ्नि श्रितः॥२०॥

ब्रह्मणि। आत्मा मं आत्मिनं श्रितः॥२१॥

आत्मा हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुनेर्म आत्मा पुनरायुरागात्। पुनेः प्राणः पुनराकूत्मागात्। वैश्वानरो रुश्मिभिवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

,]

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मीमा १ साऽग्निहोत्र एव सम्पन्ना। अथी आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्विति। होष्यंत्रप उपस्पृशेत्। विद्यंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मिति। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरस् वृश्चं मे पाप्मान्मिति। यक्ष्यमांणो वृष्ट्वा वाँ। वि चं हैवास्यैते देवते पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्याम्पातिं पृच्छ। वेर्ल्थ सावित्रा(३)त्र वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)त्र वेत्था(३) इतिं। स होवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इतिं। प्रोरंज्यसीतिं। कस्तद्यत्परोरंजा इतिं। एष वाव स प्रोरंजा इतिं होवाच। य एष तपंति। एषोंऽर्वाग्रंजा इतिं। स कस्मिन्त्वेष इतिं। सृत्य इतिं। किं तत्सत्यमितिं। तप इतिं॥२६॥

कस्मिन्न तप् इतिं। बल् इतिं। किं तद्वल्मितिं। प्राण इतिं। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इतिं माऽऽचार्यौऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वे ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे स्मवादिष्टेतिं॥२७॥

तस्मौत्सावित्रे न संवंदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छ्रियं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो् बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं

विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। पुष पुव तत्॥२८॥

अथ् यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टुंत स्मृता सुन्वतीति। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रंयः। अथ् यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिशास्ताऽनुंम्नतेति। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्नां मुहूर्ताः। एष रात्रेः॥२९॥

अथ् यदाहं। प्वित्रं पवियुष्यन्त्सहंस्वान्त्सहीयानरुणी-ऽरुणरंजा इति। एष एव तत्। एष ह्येव तेंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ् यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्सर इति। एष एव तत्। एष ह्येव ते यज्ञकृतवः। एष ऋतवः॥३०॥

पृष संवत्सरः। अथ यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। पृष पृव तत्। पृष ह्यंव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको ह वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं होके-ऽन्नं क्षीयत् इति। विजहंद्ध वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरित। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं होके ऽन्नं क्षीयते। य पुवं वेदे। अहींना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥ स हं हु॰्सो हिंरण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमंयाय। आदित्यस्य सायंज्यम्। हु॰्सो हु वै हिंरण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमंति। आदित्यस्य सायंज्यम्। य पुवं वेदे। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। त॰ हु वागदंश्यमानाऽभ्यंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौत्मो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वागुसीतिं। अयमहरू सांवित्रः। देवानांमृत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौत्मः। यज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम् इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै तें लोक इतिं। तस्माद्ये के चं सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो हू वै सावित्रस्याष्टाक्षंरं पदः श्रियाऽभिषिक्तं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

एतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षरं पदः श्रियाऽभिषिक्तम्। य एवं वेदे। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। तदेतद्वाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरं पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद् किमृचा कंरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समासत् इतिं। न ह वा एतस्यर्चा न यर्जुषा न साम्राऽर्थोऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥ तदेतत्पंरि यद्वेवचऋम्। आईं पिन्वंमान इस्वर्गे लोक एंति। विजहिद्विश्वां भूतानि सम्पश्यंत्। आद्री हु वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एति। विजहन्विश्वां भूतार्नि सम्पश्यन्। य पुवं वेदे। शूषो ह वै वाँर्ष्णियः। आदित्येनं सुमार्जगाम। त १ होवाच। एहि सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियेष्ण्रमृतात्सम्भूत इति। एष वाव स सांवित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवैनं तदुंवाच॥३७॥

ह्यं वाव स्रघाँ। तस्यां अग्निरेव सांर्घं मधुं। या पृताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रंयः। ता मधुकृतंः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो ह वा पृता मधुकृतंश्च मधुवृषाःश्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्यैष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥३८॥
न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह

वा अंहोरात्राणां नामधेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति।
संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यांहोरात्राणां नामधेयांनि। प्रस्तुतं विष्टुंत स् सुता
सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नामधेयांनि।
नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥
यो न वै पंनर्वार्तं गामधेयांनि वेदं। न पंनर्वेष्यर्विणर्च्छंति।

यो हु वै मृंहूर्तानां नाम्धेयांनि वेदं। न मृंहूर्तष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रसिवताऽभिशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मृंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्वित्रं पवियुष्यन्त्सहं-स्वान्त्सहीयानरुणांऽरुणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि॥४०॥ नार्धमासेष न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो ह

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै यंज्ञऋतूनां चंर्तूनां चं संवत्स्रस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवत्स्र आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्स्र इतिं। पृतेऽनुवाका

यंज्ञऋतूनां चंतूनां चं संवत्सुरस्यं च नामुधेयांनि॥४१॥

न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवत्स्र आर्तिमार्च्छति। य एवं

वेदं। यो ह वै मुंहूर्तानां मुहूर्तान् वेदं। न मुंहूर्तानां

महूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। इदानीं तदानीमितिं। एते वै मृंहूर्तानां महूर्ताः। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यान्नमित्तं। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यान्नमित्तं। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यान्नमित्त। स एतेषांमेव संलोकताः सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयित। य एवं वेदं॥४२॥

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं।

कश्चित्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ंग्धो हैव

धूमताँन्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजांनाति। अथ् यो हैवैतम्ग्निः सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयम्हम्स्मीति॥४३॥ स स्वं लोकं प्रतिप्रजांनाति। एष उं वेवैनं तत्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवहति। अहोरात्रैर्वा इदः स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरितिं। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं लोके शेंवधिं धंयन्ति। धीत १ हैव स शेंवधिमनु परैति। अथु यो हैवैत्मग्नि शांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहोंरात्राणिं। अमुष्मिं ह्रोके शेंवधिं न धंयन्ति। अधीत हैव स शेंवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायुं भिं ब्रह्मचर्यमुवास। त ह ह जीर्णि इ स्थविं र ह शयांनम्। इन्द्रं उपव्रज्योंवाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुं द्वाम्। किमेंनेन कुर्या इतिं। ब्रह्मचर्यमे वैनेन चरेयमितिं होवाच॥४५॥

त १ हु त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १ है कैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामञ्च्ये। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदाः। एतद्वा एतेस्त्रिभिरायुंर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थ त इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै संविव्देति॥४६॥

तस्मै हैतम्ग्नि सांवित्रम्वाच। त स्स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। एषो एव त्रयी विद्या॥४७॥

यार्वन्त १ हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयित। तार्वन्तं लोकं जयित। य एवं वेदं। अग्नेवा एतानि नाम्ध्रेयांनि। अग्नेर्व सायुंज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोवां एतानि नाम्ध्रेयांनि। वायोर्व सायुंज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानि नाम्ध्रेयांनि॥४८॥ इन्द्रंस्य वा एतानि नाम्ध्रेयांनि॥४८॥ इन्द्रंस्य सायुंज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेवां एतानि नाम्ध्रेयांनि। बृह्स्पतेवां एतानि सायुंज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापतेवां एतानि

इन्द्रस्येव सायुज्य सल्लोकतामाप्रति। य एव वदा बृह्स्पतेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। बृह्स्पतेरे्व सायुंज्य सल्लोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। प्रजापतेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। प्रजापतेरे्व सायुंज्य सल्लोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नाम्धेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सल्लोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरे्व। तस्याग्निर्मुखम्। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तत्सर्व सिव्यति। तस्मांत्सावितः॥४९॥

-[\$\$]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः

समाप्तः॥१॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोंऽसि। अनुन्तौंऽस्यपारोंऽसि। अक्षितो-ऽस्यक्ष्य्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१॥

तपोऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२॥

तेजोंऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्पूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियृत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघ्मिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥३॥ समुद्रोंऽसि तेजंसि श्रितः। अपां प्रंतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं

यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रंतिष्ठा युष्मास्। इदम्न्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सभूतम्। विश्वंस्य भूत्यां विश्वंस्य जनियृत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यप्सु श्रिता। अग्नेः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥७॥ अन्तिरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मृतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सीद॥८॥ वायुरंस्यन्तिरिक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मृतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सीद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूतीं विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥ आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः।

आदित्योंऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥११॥ चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवृत्स्रस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भृतृंणि विश्वंस्य जनियृतृणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१३॥

संवृत्सरोऽसि नक्षंत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१४॥

ऋतवंः स्थ संवत्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतिरो विश्वंस्य जनियतारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१५॥ मासौः स्थर्तषुं श्रिताः। अर्धमासानौं प्रतिष्ठा युष्मासुं।

इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्।

विश्वस्य भूतारो विश्वस्य जनयितारः। तान् व उपदर्ध

कामदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु।

देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१६॥
अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयौः प्रतिष्ठा
युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं
स्भूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारः। तान् व
उपंदधे कामदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तया
देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१७॥
अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे।
युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्।

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थान्नद्घो युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्।

विश्वंस्य भर्ट्यों विश्वंस्य जनयित्र्यौं। ते वामुपंदधे कामदुघे

अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा

सींद॥१८॥

विश्वंस्य भृर्त्यो विश्वंस्य जनियृत्र्यः। ता व उपंदधे कामृदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतीं विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुधामिक्षंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिस भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमेर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२१॥

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो मुहो दिवः। त्व शर्धो मार्रुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विधतः पासि नु त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पंश्चमेषुं श्रयध्वम्। पृश्चमाः षृष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। स्प्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नेवमेषुं श्रयध्वम्। नवमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। दृशमा एंकादशेषुं श्रयध्वम्। एकादशा द्वांदशेषुं श्रयध्वम्। दृश्वाः पंञ्चदशेषुं श्रयध्वम्। त्रयोदशाश्चंतुर्दशेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्दशाः पंञ्चदशेषुं श्रयध्वम्। पृञ्चदशाः षोंडशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥ षोडशाः संप्तदशेषुं श्रयध्वम्। स्प्तदशाः पंञ्चदशेषुं श्रयध्वम्। स्प्तदशाः पंञ्चदशेषुं श्रयध्वम्। स्प्तदशाः पंञ्चदशेषुं श्रयध्वम्। स्प्तदशाः पंञ्चदशेषुं श्रयध्वम्। स्प्तदशाः पंञ्चदशिः शाः विश्लेषं

षाड्शाः सप्तद्शेषु श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषु श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविर्शोषुं श्रयध्वम्। एकविर्शेषुं श्रयध्वम्। एकविर्शोषुं श्रयध्वम्। एकविर्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविर्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविर्शोषुं श्रयध्वम्। त्रयोविर्शोषुं श्रयध्वम्। त्रयोविर्शोशुं श्रयध्वम्। त्रयविर्शोषुं श्रयध्वम्। त्रविर्शोषुं श्रयध्वम्। प्रविर्शोषुं श्रयध्वम्। प्रविर्शोषुं श्रयध्वम्। प्रविर्शोषुं श्रयध्वम्। स्प्तविर्शोषुं श्रयध्वम्। स्पतिवर्शोषुं श्रयध्वम्। स्पतिवर्शेषुं श्रयध्वम् स्रयोविष्वर्शेषुं श्रयध्वम्। स्वर्वतिवर्शेषुं श्रयध्वम् स्वर्वेष्वयः स्वर्वेष्वयः स्वर्वेष्वयः स्वर्वयः स्वर्वयः

षड्विर्शाः संप्तविर्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तविर्शा अष्टाविर्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविर्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविर्शा एकान्निर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्निर्शोषुं श्रयध्वम्। निर्शा एकिनिर्शेषुं श्रयध्वम्। निर्शा एकिनिर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वानिर्शास्त्रंय-स्त्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वानिर्शास्त्रंय-स्त्रिरशेषुं श्रयध्वम्। देवास्त्रिरकादशास्त्रिस्त्रंयस्त्रिरशाः। उत्तरे

भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोिमं। तन्मे समृध्यताम्। वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२५॥

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंधन्तु वां गिरं। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्याम पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्नें पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह स्वयम्। रुचा रुरुचे रोचमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौ प्रज्ञनौ प्रजायिय। वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२८॥

सप्त ते अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्वाः। स्प्तर्षयः सप्त धामं प्रियाणि। सप्त होत्रां अनुविद्वान्। सप्त योनीरापृणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निर स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्र्र्थं स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम्थं स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावरुणौ देवतां। मित्रावरुणौ स दिशां देवौ देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति॥३०॥ ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिर्देवतां। बृह्स्पतिर्थं स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिंतिर्देवतां। अदिंतिर्थं स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिंतिर्देवतां। अदिंतिर्थं स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। पुरुषों दिक्। पुरुषों मे कामान्त्समंध्यत्॥३१॥

अन्थो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आँऋन्दियतरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वय इस्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ॥३२॥

यत्तेऽचितं यदुं चितं तें अग्ने। यत्तं ऊनं यदु तेऽतिंरिक्तम्। आदित्यास्तदङ्गिरसश्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सर्श्वितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्वासि भूयांङ्श्वास्यग्ने। लोकं पृंण च्छिद्रं पृंण। अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥ तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोम ई श्रीणन्ति पृश्नयः। जन्मं देवानां विशंः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद। अग्ने देवा ध इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥ यो दीदाय समिद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं।

स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसार्धनम्।

अग्निश् होतांरं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य ह्विषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वत्सिमिधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष इप्तातिभ्य आभंर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वानरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यद्दंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्ं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥ अथ् यत्स्वाति। तदंस्य समर्श्वनं च प्रसारणं च। अथो सम्पदेवास्य सा। स॰ ह् वा अंस्मै स कामः पद्यते। यत्कांमो यजेते। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो ह् वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतेनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतेनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेनांचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हु वा अग्नेनांचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेंति। हिरंण्यं वा अग्नेनांचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेंति। अथो यथां रुका उत्तेप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिश्र्श्चं लोकेऽमुष्मिंश्श्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अर्थ हैते वरीयाश्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तश् हु वा एष क्ष्मय्यं लोकं जयिति। योऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अर्थ हैषोंऽनन्तमंपारमंक्ष्मय्यं लोकं जयिति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥ अनन्तश् ह वा अंपारमंक्षय्यं लोकं जयिति। योंऽग्निं

अनुन्त हु वा अंपारमं क्षयं लोकं जंयित। यों ऽग्निं नाचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपे क्षते। एवमं होरात्रे प्रत्यपे क्षते। नास्यां होरात्रे लोकमा प्रतः। यों ऽग्निं नां चिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥ उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवद्सं दंदौ। तस्यं हु निवंकेता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमांनासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवें त्वा ददामीति। त॰ हु स्मोत्थितं वाग्भिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारिमितिं। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वे त्वांऽदामितिं। तं वे प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमार् कित् रात्रीरवात्सीरितिं। तिस्र इति प्रतिंब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिंमाश्रा इति॥४३॥

प्रजां त् इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृश्र्क्त् इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त् इतिं। तं वे प्रवसंन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित् रात्रीरवात्सीरितिं। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥ किं प्रथमा रात्रिंमाश्रा इतिं। प्रजां त् इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृश्र्इस्त इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां

त् इतिं। नमंस्ते अस्तु भगव् इतिं होवाच। वरं वृणी्ष्वेतिं। पितरंमेव जीवंन्नयानीतिं। द्वितीयंं वृणी्ष्वेतिं॥४५॥

ड्रष्टापूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नाचिकेतम्वाच। ततो वै तस्येष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्येष्टापूर्ते क्षीयेते। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्वाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिन्ते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्री प्रास्यंत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तिद्वितीयुं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयुं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्यें ५ मौ वैश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युज १ हि। स वै तमेव नाविन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ता १ स्वायैव हस्ताय दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिंगृह्णामीतिं। सोंऽदक्षत दक्षिणां प्रतिगृह्यं। दक्षंते ह वै दक्षिणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। एतद्धं स्म वै तद्विद्वा १ सो वाजश्रवसा गोर्तमाः। अप्यंनू देश्यां दक्षिणां प्रतिगृह्णन्ति। उभयेन वयं दक्षिष्यामह एव दक्षिणां प्रतिगृह्येतिं। तेंऽदक्षन्त दक्षिणां प्रतिगृह्यं। दक्षंते ह वै दक्षिणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। प्र हान्यं क्षींनाति॥४९॥

त १ हैतमेके पशुबन्ध एवोत्तरवेद्यां चिन्वते। उत्तर्वेदिसंम्मित एषौं ऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमग्निं कामेन व्यर्धयेत्। स एनं कामेन व्यृद्धः। कामेन व्यर्धयेत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतमग्निं कामेन समर्धयति। स एनं कामेन समृद्धः॥५०॥ कामेन समर्धयति। अथं हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव स्त्रियंमचिन्वत। ततो वै तेऽविंन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जयित। यौँऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुर्ऋिंद्धंकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्प्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृप्नोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोब्लो वार्णः पृश्वकांमः। पाङ्कंमेव चिक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥ पश्चं दक्षिणतः। पश्चं पृश्चात्। पश्चौत्तरतः। एकां मध्यै। ततो वै स सहस्रं पृश्चन्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्चनांप्नोति। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं पृजापंति ज्यैष्ठमंकामो यशंस्कामः पृजननकामः। त्रिवृतंमेव चिक्ये॥५३॥

सप्त पुरस्तांत्। तिस्रो देक्षिणतः। सप्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्येष्ठ्यंमाप्नोत्। एतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वे ज्येष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठ्यमाप्नोति। एतां प्रजातिं प्रजायते। यामिदं प्रजाः प्रजायन्ते। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठांकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठांमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचीरेवोपंदधे। ततो वै सोऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंश्स्वी ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुत्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणीतु। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेति। तेज्रस्येव यंश्स्वी ब्रह्मवर्च्सी भंवति। अथ् यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्धीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राचीं जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीयं जुहुयात्॥५७॥ भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्धंयते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति।

मूर्यिष्ठम्वास्म श्रद्धता मूर्यिष्ठा दक्षिणा नयान्ता पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिरिभेमृश्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त तें अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ लोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तरिक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तरिक्षलोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिं छोके देवताः। तासा सायुंज्य स् सलोकतां माप्नोति। अथो या अमूरितरा अष्टादेश। य एवामी उरवश्च वरीया स्मश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भिजंयति॥ कामचारो ह् वा अस्योरुषुं च वरीयः सु च लोकेषुं भवति। यो ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवृत्सरो वा अग्निर्नांचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षा उत्तरः। श्ररत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पुर्जन्यो वसोर्धाराः। यथा वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्त्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्त्सम्पूरयति। यौऽग्निं नाचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवत्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयों ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कार्ममग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य काम्स्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं युज्ञः। आपो भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरिन्त यो देह्यः। पूर्वं देवा अपरेण प्राणापानौ। हृव्यवाहुङ् स्विष्टम्॥१॥———[१] देवभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नर्वेच्छत्। तिमष्टिंभिरन्वैच्छत्। तिमष्टिंभिरन्वेविन्दत्। तिदिष्टीनािमष्टि-

त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँ ऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँ ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायै चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्याऽऽशां ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सृत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽऽशायै स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥३॥

तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेंन वै श्रांम्यसि। अहमु वै कामौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यः कामों भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमग्रये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। कार्माय चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यः कामोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो ह वा अस्य कामों भवति। अर्नु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहा कामांय स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गाये लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥४॥ तं ब्रह्मां ऽब्रवीत्। प्रजापते ब्रह्मणा वै श्राम्यसि। अहमु

तं ब्रह्माँ ऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मणा वै श्राँम्यसि। अहमु वै ब्रह्माँ ऽस्मि। मां नु यजंस्व। अर्थ ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामाय पुरोडाशं मुष्टाकं पालं निरंवपत्। ब्रह्मणे चुरुम्। अर्नुमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् यज्ञों ऽभवत्। अर्नु स्वर्गं लोकमं विन्दत्। ब्रह्मण्वान् हु वा अस्य यज्ञो भविति। अर्नु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यज्ञते। य

उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाह्य ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गाय लोकाय स्वाह्यऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥५॥

तं यज्ञौऽब्रवीत्। प्रजांपते यज्ञेन वै श्रौम्यसि। अहमु वै यज्ञौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो यज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। यज्ञायं चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो यज्ञोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो ह वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहां यज्ञाय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥६॥

तमापौँ प्रज्ञांपते प्रजांपते अथ त्विय सर्वे कार्माः श्रियिष्यन्ते। अर्चु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् ग्रये कार्माय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। अद्धश्चरुम्। अर्चुमत्ये चरुम्। ततो वे तस्मिन्त्सर्वे कार्मा अश्रयन्त। अर्चु

स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वे ह् वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽग्र्यः स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥७॥

तम् भिर्बिल्मानं ब्रवीत्। प्रजांपते ऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बुलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बलिमानंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बलि॰ हंरिष्यन्ति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमग्रये कार्माय पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नयं बलिमतें चुरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानिं बलिमंहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि ह वा अस्मै भूतानि बिल १ हरन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिविषा यजिते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कार्माय स्वाहाऽग्रये बलिमते स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविवित्ससि। अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स पुतमुग्नये कामांय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्यै चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या ह वा अस्यार्नुवित्तिर्भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्यै स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गाये लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्ट्कृते स्वाहेतिं॥९॥ ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽनुं-वित्तयो नामं। आशाँ प्रथमा रक्षिति। कामों द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। युज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्।

वित्तयो नामं। आशा प्रथमा रक्षिति। कामी द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अन्त्रिर्बिल्मान्त्षष्ठीम्। अन्वित्तिः सप्तमीम्। अन्ति है वै स्वर्गं लोकं विन्दिति। काम्चारौंऽस्य स्वर्गे लोकं भविति। य पृताभिरिष्टिभिर्यजंते। य उ चैना पृवं वेदं। तास्विन्विष्टि। पृष्ठौहीव्रां देद्यात्कर्सं च। स्त्रिये चाऽऽभार समृद्धौ॥१०॥

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तप्सर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्त्रणुंदामारांतीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव रहिवर्षां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथमर सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रंतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवत्साऽमृतं दुहांना। श्रद्धा देवी प्रंथम्जा ऋतस्यं। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ताः श्रद्धाः ह्विषां यजामहे। सा नो लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवनस्याधिपत्नी। आगाँत्सत्यः ह्विरिदं जुंषाणम्। यस्माँदेवा जंजिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मैं विधेम ह्विषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरिक्षम्। यस्मादिवा जंजिरे भुवंनं च सर्वें। तत्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगात्। ब्रह्माऽऽहुंतीरुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्विमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मनिवंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागात्। आकूंतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पजूंतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिमह वर्धयन्तः। उपहवें उस्य सुमतौ स्याम। चरेणं पवित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं पवित्रेण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मानमरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्पवित्रम्। ज्योतिष्मद्भाजीमानं महीस्वत्। अमृतीस्य धारा बहुधा दोहंमानम्। चरणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमतिरन्विदंनुमते त्वम्। हव्यवाहं इ स्विष्टम्॥१४॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो

हि देवाः॥१५॥ तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्रौम्यसि। अहमु वै

ह वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते परोक्षंण। परोक्षंप्रिया इव

तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं तपों भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं स्तयं तपों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। स्तय १ ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥ त इ श्रद्धा ऽ व्रंवीत्। प्रजांपते श्रद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्या श्रद्धा भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। श्रद्धायै चुरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्या श्रद्धाऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या ह वा अस्य श्रुद्धा भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहाँ श्रुद्धाये स्वाहाँ। अनुमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१७॥ त र सत्यमं ब्रवीत्। प्रजांपते सत्येन् वै श्रांम्यसि। अहम् वै सत्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्य सत्यं भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। सत्यायं चुरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्य सत्यमंभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य ह वा अस्य सत्यं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सुत्यायु स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेति॥१८॥ तं मनों ऽब्रवीत्। प्रजापते मनसा वै श्राम्यसि। अहमु वै मनों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं मनों भविष्यति। अन् स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकपालं निरंवपत्। मनंसे चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं स्तयं मनोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। स्तय १ ह वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनसे स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१९॥ तं चरणमब्रवीत्। प्रजांपते चरणेन वै श्रांम्यसि। अहम् वै चरणमस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं चरंणं भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। चरंणाय चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं स्तयं चरणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य १ ह वा अस्य चरेणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेने हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरंणाय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंत्रये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥ ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा र रेक्षति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पश्चमीम्। अनुं ह वै स्वर्गं लोकं विन्दति। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भंवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पष्टौहीवरां दंद्यात्क १ सं र्च। स्त्रिये चाऽऽभार समृद्धौ॥२१॥

ब्रह्म वै चतुरहोतारः। चतुरहोतुभ्योऽधियुज्ञो निर्मितः। नैनर् शप्तम्। नाभिचरित्मागंच्छति। य एवं वेदं। यो हु वै चतुर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वां हास्मै दिशंः कल्पन्ते। वाचस्पति्रहोता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुर्होतॄणाम्॥२२॥

अग्निर्होतां पश्चेहोतॄणाम्। वाग्घोतां षड्ढोतॄणाम्। महाहंवि्रहोतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चेहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवृद्या। एतद्वेषुजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्चसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥ एतान् योऽध्यैत्यछंदिर्दर्शे यावंत्तरसम्। स्वरेति। अनपब्रवः

सर्वमायुरिति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। पृतान् योऽध्यैति। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। पृतान् वा अरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥ पृतैरिधवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पृतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पृतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरिते। पृतेरिग्नं चिन्वीत स्वर्गकांमः। पृतेरायुंष्कामः। प्रजापशुकांमो वा॥२५॥ पुरस्ताद्दशंहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी

पत्र्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुंर्होतारम्। पश्चादुदेश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् षङ्कोतारम्। उपिरेष्टात्प्राश्चन्ं स्प्तहोतारम्। हृदंयं यजून्षेष् पत्र्यश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्रोकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥ सदेवम् ग्रिं चिनुते। रथसंम्मितश्चेत्रव्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव

सदेवम्िग्नं चिन्ते। रथसंम्मितश्चेत्व्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पृक्षः। रथसंम्मितमेव चिन्ते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सर्वां छोकानेहीनेनं। अथों स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर ईस्पृणोति। आत्मा हि वरेः। एकविश्शतिर्दक्षिणा ददाति। एकविश्शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्रस्वर्गं लोकमां प्रोति॥२८॥

असार्वादित्य एंकविष्शः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्नोति। शतं ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अन्विष्टकं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वया ५सि॥२९॥

सर्वस्याऽऽह्यैं। सर्वस्यावंरुद्धे। यदि न विन्देतं। मन्थानंतावतो दंद्यादोदनान् वां। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया रेसि। सर्वस्याऽऽह्यैं। सर्वस्यावंरुद्धे॥३०॥ हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वृगं लोकमंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिनुते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मणं ब्रूयात्। नेतंरेषु यज्ञेषुं। यो ह वै चतुंरहोतॄननुसवनं तंप्यित्व्यान्ं वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नंमित। एते वै चतुंरहोतारोऽनुसव्नं तंपीयत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदेः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवेतिक्रियते। नास्याग्निं वृंश्जते॥३२॥ हिरुण्येष्टको भेवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञपुरुषा

सम्मितम्। तेजो हिरंण्यम्। यदि हिरंण्यं न विन्देत्।

शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण वा एष व्यृध्यते। योँऽग्निं चिनुते॥३३॥ यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनाश् सायुंज्यम्। सार्ष्टिताश् समानलोकतांमाप्नोति। य एतम्ग्निं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथों नाचिकेते॥३४॥

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमेः॥३५॥ सङ्ख्यांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्तः ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिर्हिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अप्स्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शकंरा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामिधे॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मानोऽस्यां पृंथिव्याम्।

प्रतिष्ठासु

प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥ यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिधं। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वे। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसर्पिणंः। सर्वास्ताः।

यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥ देवत्रा यचे मानुषम्। सर्वास्ताः॥ यावंत्कृष्णायंसुर् सर्वम्॥ देवत्रा यचे मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंश्लोहायंसुर् सर्वम्॥ देवत्रा यचे मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर सीसर सर्वं त्रपुं।

--देवत्रा यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वर् हिरंण्यर रज्जतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सुवंर्ण्र् हरितम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४०॥
[६]

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवत्रयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। अन्तरिक्षं च् केवंलम्। यचास्मिन्नंन्तराहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥
गन्धर्वाप्सरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्सलिलान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्सलिलान्। स्थावराः प्रोष्यांश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिश्

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्त्स्तनियृत्न्। ह्रादुनीर्यचे शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः सरितः। सर्वमप्स्चरं च

सर्वान्ध्व १ सान्। हिमो यर्च शीयते ॥४२॥

यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्-तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्शस

-[७]

सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निश् सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वरुणं भगम्। सर्वास्ताः। सत्यः श्रुद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवत्याऽङ्गिरस्वद्भुवा सीद॥४५॥

सर्वान्दिव सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टेकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद। यावंतीस्तारंकाः

सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजू १षि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चं। सप्देवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चं लोका ये चांलोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचाँब्रह्म। अन्तर्ब्रह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्।

सर्वास्ताः। सर्वानृतून्त्सर्वान्मासान्। संवृत्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४८॥

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अर्थर्वणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्ने दिवि देव ईयते। युजुर्वेदे तिष्ठिति मध्ये अहं। सामवेदेनां ऽस्तम्ये महीयते। वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्न्यो जाता र संविशो मूर्तिमाहः। सर्वा गतियाजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥ सर्वं तेर्जः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्व हं व्रह्मणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहः। यजुर्वेदं क्षित्रियस्यां ऽऽहुर्योनिम्। सामुवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूंचुः। आदुर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वंर्षसहस्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवत्स्वयम्। सृत्यश् ह् होतैषामासीत्। यद्विश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवत्सरान्। भूतश् हं प्रस्तोतैषामासीत्। भृविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इदश् सर्वश् सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतंः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्त्वा उपगातारंः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासांश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्रूरसद्भाणस्तेजंः। अच्छावाकोऽभवद्यशंः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजानमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्वावणः। यद्विश्वसृज् आसंत्। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञिषिः। आग्नींद्वाद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवायंजत्स्वयम्। इरा पत्नी विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-ड्रुविः॥५३॥

इध्म ह क्षुचैंभ्य उग्ने। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पृतृत्राणि नो कनीयान्॥५५॥

तन्वानाऽहंः। स्र्स्थाश्चं सर्वशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्तेन यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयंः शकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनो। नावंदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विंदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिस्त्रेवृतः संवत्स्राः। पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतं एकविश्वशाः। विश्वसृजाः सहस्रं संवत्सरम्। एतेन् वे विश्वसृजं इदं विश्वंमसृजन्त। यद्विश्वमसृजन्त। तस्माद्विश्वसृजंः। विश्वंमेनाननु प्रजायते। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतां यन्ति। एतासामेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्थिताः समानलोकतां यन्ति। य एतद्प्यन्तिं। ये

चैनुत्प्राहुंः। येभ्यंश्चैनुत्प्राहुंः॥५६॥ ॐ॥

·[*\g*]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयज्ञ्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तमः॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥